BAPS (N)-102

तुलनात्मक राजनीतिक व्यवस्था: विश्व के प्रमुख संविधान

(Comparative Political System: Major Constitutions of the World)

Hello Haldwani

हैलो हल्द्वानी

91.2 FM

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

तीनपानी बाईपास मार्ग

ट्रांसपोर्ट नगर के पीछे, हल्द्वानी 263139

नैनीताल, उत्तराखण्ड

Email: info@uou.ac.in; Website: http://uou.ac.in

BAPS (N) - 102

तुलनात्मक राजनीतिक व्यवस्था: विश्व के प्रमुख संविधान

Comparative Political System: Major Constitutions of the World

समाज विज्ञान विद्या शाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी ,263139

पाठयक्रम समिति

प्रो. गिरिजा प्रसाद पाण्डे **निदेशक – समाज विज्ञान विद्या शाखा,**उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी नैनीताल	**प्रो0 एम0एम0 सेमवाल** राजनीति विज्ञान विभाग केन्द्रीय विश्वविद्यालय,गढवाल
प्रो0 दुर्गाकान्त चौधरी राजनीति विज्ञान विभाग श्रीदेव सुमन विश्वविद्यालय ऋषिकेश परिसर, ऋषिकेश	**प्रो0 सतीश कुमार** राजनीति विज्ञान विभाग इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
डॉ0 सूर्य भान सिंह **(विशेष आमंत्रित सदस्य)** एसोसिएट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान इलाहबाद विश्वविद्यालय	**डॉ घनश्याम जोशी** असिस्टेंट प्रोफेसर लोक प्रशासन उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय ,हल्द्वानी, नैनीताल
डॉ लता जोशी असिस्टेंट प्रोफेसर (एसी) राजनीति विज्ञान उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय ,हल्द्वानी, नैनीताल	**आरूशी** असिस्टेंट प्रोफेसर (एसी) राजनीति विज्ञान उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय ,हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संयोजन एव सम्पादन

डॉ0 सूर्य भान सिंह एसोसिएट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान इलाहबाद विश्वविद्यालय	**आरूशी** असिस्टेंट प्रोफेसर (एसी) राजनीति विज्ञान उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय ,हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखक	**इकाई संख्या**
डॉ. अनुराग रत्न, विभागाध्यक्ष राजनीति विज्ञान विभाग जी.एस.पी.जी.कालेज सुल्तानपुर	**1,2**
डॉ घनश्याम जोशी**,** उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय ,हल्द्वानी, नैनीताल	**3,4,5,6,7,8**
डॉ. विजय प्रताप मल्ल, राजनीति विज्ञान प्रवक्ता ,जे,एल,नेहरू पी.जी. कालेज,बाराबंकी	**9,10,16**
डॉ. अरविन्द सिंह , रीडर राजनीति विज्ञान ,के.जी.के. कालेज ,मुरादाबाद	**11**
आरुशी, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय ,हल्द्वानी, नैनीताल	**12,15**
डॉ. अनुपमा कौशिक , एसोसिएट प्रोफेसर-राजनीति विज्ञान ,वनस्थली राजस्थान	**13,14**

आई.एस.बी.एन. ----------

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष -2023

Published by : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,हल्द्वानी, नैनीताल 263139

Printed at :----------

संस्करण :2023, सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन की प्रति।

सर्वाधिकार सुरक्षित | इस प्रकाशन का कोई भी अंश उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए विना मिमियोग्रफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है

मुद्रित प्रतियां

अनुक्रम

तुलनात्मक राजनीतिक व्यवस्था: विश्व के प्रमुख सिद्धांत

BAPS (N) 102

खण्ड 1 तुलनात्मक राजनीति का परिचय

इकाई 1. तुलनात्मक राजनीति: महत्व, अर्थ एवं क्षेत्र 1-14

इकाई 2. तुलनात्मक राजनीति स्वरुप: परंपरागत और आधुनिक 15-25

खण्ड 2 संविधान और संविधानवाद

इकाई 3.संविधान और संवैधानिक सरकार 26-34

इकाई 4.संविधानवाद: पाश्चात्य एवं मार्क्सवाद 35-46

खण्ड 3 विभिन्न शासन प्रणालियाँ

इकाई 5. संसदात्मक शासन प्रणाली 47-55

इकाई 6. अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली 56-64

इकाई 7. एकात्मक शासन प्रणाली 65-72

इकाई 8. संघात्मक शासन प्रणाली 73-81

खण्ड 4 ब्रिटिश संविधान

इकाई 9. ब्रिटिश संविधान-I: संविधान की मूलभूत विशेषताएं , ब्रिटिश संसद 82-96

इकाई 10. ब्रिटिश संविधान-II: कार्यपालिका, न्यायपालिका, दल प्रणाली 97-113

खण्ड 5 संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान

इकाई 11. संयुक्त राज्य अमेरिका-I: संविधान की मूलभूत विशेषताएं, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि 114-124

इकाई 12. संयुक्त राज्य अमेरिका-II: संघीय कार्यपालिका, न्यायपालिका, दल प्रणाली 125- 137

खण्ड 6 स्विट्ज़रलैंड का संविधान

इकाई 13. स्विट्ज़रलैंड का संविधान-I: संविधान की मूलभूत विशेषताएं, स्विस संघीय व्यवस्था 138- 148

इकाई 14. स्विट्ज़रलैंड का संविधान-II: संघीय शासन- संघीय सभा, संघीय परिषद् 149-159

खण्ड 7 चीन और रूस का संविधान

इकाई 15. चीन का संविधान: संविधान की मूलभूत विशेषताएं, राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस, कार्यपालिका, न्यायपालिका, चीन का साम्यवादी दल 160-171

इकाई 16. रूस का संविधान: वर्तमान रूस के संविधान की विशेषताएं, व्यवस्थापिका, कार्यपालिका, साम्यवादी दल 172-188

इकाई 1 तुलनात्मक राजनीति : महत्व, अर्थ एवं क्षेत्र

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 तुलनात्मक राजनीति: अर्थ एवं व्याख्या
1.4 तुलनात्मक राजनीतिक क्रियाओं के महत्व
1.5 तुलनात्मक राजनीति का विषय के रूप में विकास
1.6 तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति
1.7 तुलनात्मक राजनीति का विषय-क्षेत्र
1.8 सारांश
1.9 शब्दावली
1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.12 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

20 वीं सदी से राजनीति विज्ञान के विषय क्षेत्र में अनेक परिवर्तन हुए हैं। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप राजनीतिक समस्याओं, सिद्धान्तों तथा संस्थाओं के अध्ययन एवं विश्लेषण के मानदण्डों में भी परिवर्तन आया है। तुलनात्मक राजनीति, इसी दिशा में किया गया प्रयास है जिसके माध्यम से राजनीति विज्ञान में होने वाले परिवर्तनों का व्यवस्थिति ढंग से विश्लेषण करके सम्पूर्ण व्यवहार को समझने के लिए सामान्यीकरण किया जा सकता है। तुलनात्मक राजनीति के अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एंव समस्याओं का विवेचन करने से पूर्व हमें उसके अध्ययन के महत्व को समझना होगा।

वस्तुतः तुलनात्मक राजनीति, राजनीति विज्ञान के बदलते हुए अध्ययन क्षेत्र का परिचायक है। इसके माध्यम से ऐसे नये तरीकों, तकनीकों तथा उपागमों का सृजन किया गया है जिनसे राजनीतिक वास्तविकताओं का (Political Realities) क्रमबद्व अध्ययन किया जा सके। यह भी सत्य है कि राजनीति विज्ञान में तुलनात्मक अध्ययन किसी नवीन विकास से सम्बद्व नहीं है। राजनीतिक व्यवहार के अध्ययन के साथ-साथ तुलनात्मक अध्ययन को भी समझा एवं विश्लेषित किया जा सकता है। जीन ब्लोंडेल के अनुसार, ''तुलनात्मक सरकारों का अध्ययन प्राचीनतम अत्यन्त कठिन एवं महत्वपूर्ण है तथा प्रारम्भ से ही मानव के ध्यान का आकर्षण रहा है।''१

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त ---

- तुलनात्मक राजनीति के अर्थ को समझ सकेंगे |
- तुलनात्मक राजनीति के प्रकृति को समझ सकेंगे|
- तुलनात्मक राजनीति के क्षेत्र को समझ सकेंगे|
- तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के महत्त्व के बारे में जान पायेंगे|

1.3 तुलनात्मक राजनीति: अर्थ एवं व्याख्या

आधुनिक राजनीति वैज्ञानिकों का यह दावा है कि उन्होंने राजनीतिक प्रक्रिया के सिद्धान्त एवं प्रतिमान निर्माण की ओर प्रथम चरण के रूप में राजनीतिक विश्लेषण की नूतन अवधारणाओं के सुझाव प्रस्तुत किये हैं। उनका मानना है कि राज्य की अवधारणा विश्लेषण के एक उपकरण के रूप में उन राजनीतिक व्यवस्थाओं की तुलना व उपयोगी अध्ययन करने में विशेष सहायक नहीं, जिनमें आकार संगठन, संस्थाओं एवं संस्कृति की आधारभूत भिन्नताएँ हों। अतएव राजनीति विज्ञान में वर्षों से प्रचलित परम्परागत अवधारणाओं जैसे-राज्य, सरकार, कानून, सत्ता के स्थान पर नई अवधारणाओं का प्रयोग अपरिहार्य माना जाने लगा, ताकि राजनीतिक क्रियाओं को गम्भीरता से समझा जा सके। अतएवं समकालीन राजनीति वैज्ञानिकों द्वारा राजनीतिक अध्ययन में राजनीतिक व्यवस्था (Political System) राजनीतिक संस्कृति (Political Culture),राजनीतिक संरचना (Political Structure),राजनीतिक विकास(Political Development) ,राजनीतिक आधुनिकीकरण (Political Modernization) ,तथा राजनीतिक समाजीकरण

(Political Socialization), आदि नई अवधारणाओं का प्रयोग किया जाने लगा। इन नई अवधारणाओं में भी आधारभूत अवधारणा (Basic Concept) राजनीतिक व्यवस्था को माना जाने लगा। इस राजनीतिक व्यवस्था से सम्बन्धित राजनीतिक प्रक्रिया के विभिन्न स्तरों पर तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर, राजनीतिक व्यवहार सम्बन्धी सिद्धान्त निर्माण के लक्ष्य से युक्त विज्ञान ही तुलनात्मक राजनीति है।

तुलनात्मक राजनीति के अर्थ को विस्तृत विवेचन करने से पहले इसका तुलनात्मक सरकार से अन्तर समझ लेना आवश्यक है। सामान्यतया दोनों का प्रयोग एक-दूसरे के लिए किया जाना स्वाभाविक है। परन्तु दूसरी ओर राजनीति विज्ञान में इनके सुनिश्चित अर्थ भी हैं। जी.के. राबर्टस ने दोनों का अर्थ अलग-अलग स्पष्ट करते हुए तुलनात्मक सरकार की परिभाषा इस प्रकार की है, ''तुलनात्मक सरकार राज्यों, उनकी संस्थाओं तथा सरकारों के कार्यों का अध्ययन है जिसमें शायद राज्य क्रिया से अत्यधिक निकट का सम्बन्ध रखने वाले पूरक समूहों राजनीतिक दल व दबाव समूहों का भी अध्ययन सम्मिलित है।''6 इसी प्रकार जीन ब्लोंडेल का कहना है, ''तुलनात्मक सरकार समकालीन विश्व में राष्ट्रीय सरकारों के प्रतिमानों का अध्ययन है।7

तुलनात्मक सरकार की उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि इसमें राज्य से सम्बद्ध औपचारिक संस्थाओं का ही तुलनात्मक अध्ययन होता है। इसमें गैर-औपचारिक संस्थाओं तथा राजनतिक व्यवहार से सम्बन्धित सभी प्रक्रियाओं सभी प्रक्रियाओं को सम्मिलित नहीं किया जाता। इसमें मुख्य जोर शासन की संस्थाओं के विश्लेषण पर है। राजीतिक व्यवहार के अनेक पक्षों का, जो सरकार का दिन-प्रतिदिन की गतिविधियों को प्रभावित करते हैं, अध्ययन नहीं किया जा सकता है। दूसरी ओर तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध राजनीति व्यवहार की सम्पूर्णता के अध्ययन से है। इसमें उन प्रभावों तथा प्रक्रियाओं का अध्ययन भी सम्मिलित किया जाता है जिससे सरकारों के व्यवहारों का निर्धारण हो सके। 8

एडवर्ड ए. फ्रीमैन तुलनात्मक राजनीति का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है, ''तुलनात्मक राजनीति सरकारों के विविध प्रकारों व विभिन्न राजनीतिक संस्थाओं का तुलनात्मक विश्लेषण है।'' राय सी. मैक्रेडीज के अनुसार, ''हेरोडोट्स तथा अरस्तू के समय से ही राजनीतिक मूल्यों, विश्वासों, संस्थाओं सरकारों व राजनीतिक व्यवस्थाओं में विविधताएँ प्राणवान रही हैं तथा इन विविधताओं से समान तत्वों की खोज करने के जड़तीय प्रयास को तुलनात्मक राजनीति विश्लेषण की संज्ञा दी जानी चाहिये।''9

जी.के. राबर्टस के अनुसार, ''तुलनात्मक राजनीति एक विस्तृत विषय है जिसके अ्न्तर्गत तुलनात्मक सरकारों के अध्ययन की विषय-वस्तु को सम्मलित किया जाता है तथा साथ ही गैर-राज्यीय राजनीतिक कबीले, समुदाय, वैयक्तिक संघों आदि की राजनीति अध्ययन भी इसके अन्तर्गत किया जाता है।''10

राल्फ ब्रेबन्ती ने तुलनात्मक राजनीति की व्यापक परिभाषा की है, ''तुलनात्मक राजनीति सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था में उन तत्वों की पहचान व व्याख्या है जो राजनीतिक कार्यो व उनके संस्थागत प्रकाशन को प्रभावित करते हैं।''11 माइकेल कर्टिस के अनुसार ''तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध राजनीतिक संस्थाओं की कार्यविधिव राजनीति व्यवहार की महत्वपूर्ण निरन्तरताओं, समानताओं व असमानताओं से है।''12 आमण्ड एवं पावेल के अनुसार, ''तुलनात्मक राजनीति के तीन मौलिक मंतव्य हैं- प्रथम पश्चिमी तथा गैर-पश्चिमी देशों की संस्थाओं का एक साथ विश्लेषण, द्वितीय, राजनीतिक संस्थाओं का क्रमबद्व ढंग से अध्ययन करना एवं तृतीय तुलनात्मक राजनीतिक सिद्धान्तों में सम्बन्ध स्थापित करना।''13

तुलनात्मक राजनीति के क्षेत्र में राजनीति शब्द के तीन लक्ष्यार्थ हैं राजनीतिक क्रियाकलाप, राजनीतिक प्रक्रिया तथा राजनीतिक सत्ता। राजनीतिक क्रियाकलाप के अन्तर्गत वे प्रयास आते हैं जिससे सत्ता के लिए संघर्षरत लोग अपने हितों की यथासम्भव रक्षा कर सकें। राजनीतिक प्रक्रिया के अर्न्तगत उन सभी अभिकरणों की भूमिका आ जाती है जो निर्णय-निर्माण (Decision Making) प्रक्रिया से संग्लन हैं। इसी प्रकार सत्ता एक प्रकार का मानव सम्बन्ध है जिसके माध्यम से राजनीतिक प्रधिकार कुछ नीतियों के बारे में निर्णय करता है जिनका अनुपालन अन्य लोगों द्वारा करना आवश्यक होता है।

इस प्रकार तुलनात्मक राजनीति, राजनीति संस्थाओं तथा राजनीतिक व्यवहार की समानताओं-असमानताओं से सम्बद्ध है। तुलनात्मक राजनीति में एक स्वतत्र अनुशासन के लिए आवश्यक सुस्पष्ट एवं निश्चित विषय-क्षेत्र है जिसका हम विस्तार से विवेचन इसी प्रकृति एवं क्षेत्र के अन्तर्गत करेंगे ।

1.4 तुलनात्मक राजनीतिक क्रियाओं के महत्व

राजनीति विज्ञान में तुलनात्मक अध्ययन का श्रेय प्रथम राजनीति वैज्ञाननिक अरस्तू को ही जाता है। सर्वप्रथम अरस्तू ने ही। 158 देशों के संविधानों का अध्ययन करके संविधानों का वर्गीकरण निरंकुशतन्त्र (Tyranny) कुलीनतंत्र (Oligarchy) तथा लोकतन्त्र (Democracy) के रूप में किया था। अरस्तू के उपरान्त अनेक विद्वानों ने तुलनात्मक अध्ययन के दृष्टिकोण से अनेक नवीन दृष्टिकोणों एवं उपागमों का सृजन किया, जिससे राजनीतिक व्यवस्थाओं के अध्ययन, विश्लेषण व वर्गीकरण को नया आयाम मिला। डॉ. सी. बी. गेना ने अपनी पुस्तक 'तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ' में तुलनात्मक एवं राजनीतिक क्रियाओं के महत्व पर प्रकाश डालते हुए उनकी निम्नलिखित विशेषताएँ उल्लिखित की है।२

(1) राजनीतिक व्यवहार को समझना (**To Understand the Political Behaviours**)

साधारणतया जनसाधारण के लिए तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन का महत्व इस बात में निहित है कि तुलनात्मक अध्ययन से देश की, बाहर के देशों की तथा अन्तराष्ट्रीय राजनीति एवं राजनीतिक व्यवहार को समझने में सहायता मिलती है। एक स्थान की राजनीतिक प्रक्रिया दूसरे स्थान से भिन्न होती है जिसका प्रमुख कारण यह है कि विभिन्न समाजों में रहने वाले मनुष्यों का राजनीतिक व्यवहार भिन्न होता है। आज प्रत्येक राजनीतिक समाज में अभिजनों का महत्व है और ये अपने व्यवहार से राजनीतिक प्रक्रियाओं, संस्थाओं एवं क्रियाकलापों पर प्रभाव डालते हैं। अतएवं विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं के अभिजनों के राजनीतिक व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन करने से हम विभिन्न देशों की राजनीतिक प्रक्रियाओं को समझा सकते हैं। वार्ड एवं मैक्रेडीज के अनुसार ,''तुलनात्मक राजनीति विभिन्न समाजों के व्यक्तियों के मूल्य जो उन्हें प्रिय हैं, विधियाँ जिनका वे एक-दूसरे को व बाहरी विश्व को समझने में प्रयोग करते हैं तथा एक-जैसी राजनीतिक समस्याओं को हल करने के लिए भिन्न साधनों एवं समस्याओं को अपनाते हैं, इत्यादि को समझने में सहायक होती है।''३

राजनीतिक संस्थाओं, व्यवस्थाओं एवं प्रक्रियाओं की विविधतायें सहजतः ही यह प्रश्न सामने लाती हैं कि क्यों एक राजनीतिक व्यवस्था एक स्थान पर सफल तथा अन्य स्थान पर असफल होती है क्यों मार्क्सवाद रूप में ही अपनी जड़ें जमा पाया? क्यों एशिया-अफ्रीका के देशों में अधिनायवाद की प्रवृति बलवती हो रही है? क्यों भारत में लम्बे समय तक एकदलीय प्रभुत्व (One Party Dominance) बना रहा? इन प्रश्नों का उत्तर जानने के लिए आवश्यक है कि इन

देशों में राजनीतिक व्यवहार की निरन्तरता की खोज की जाये तथा उसके कारकों का स्पष्टीकरण किया जाये। वास्तव में तुलनात्मक राजनीति का महत्व इस बात में निहित है कि इससे राजनीतिक व्यवहार की जटिलताओं को समझा व स्पष्ट किया जा सकता है।

(2) राजनीति को वैज्ञानिक अध्ययन बनाना (**Making Politics a Scientific Study**) राजनीति विज्ञान के विद्वानों का अरस्तू के समय से ही यह प्रयत्न रहा कि राजनीतिक व्यवहार से सम्बन्धित ज्ञान को विज्ञान का रूप किस प्रकार दिया जाये? तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन इसी प्रयत्न में विशेष सहायक प्रतीत होता, है क्योंकि विज्ञान में नियम प्रतिपादन न केवल राजनीतिक प्रक्रियाओं की अनेकता से सम्भव है,वरनपरस्पर प्रतिकूल व विविधताओं वाले राजनीतिक आचरण से ही उपलब्ध प्रचुर सामग्री से सम्भव है। 1955 के उपरान्त व्यवहारवाद के विकास ने तुलनात्मक राजनीति को इतना महत्वपूर्ण बना दिया है कि यही विज्ञान के रूप में राजनीति विज्ञान के विकास का प्रथम चरण बन गई है। तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन इसलिए भी उपयोगी बन जाता है कि विविधता एवं अनेकता युक्त राजनीतिक तथ्य एवं आँकड़े विभिन्न राजनीतिक क्रियाओं की तुलना से प्राप्त हो सकते हैं। कर्टिस के अनुसार, ''जबसे व्यवहारवादी दृष्टिकोण का प्रचलन हुआ, तबसे आज तक राजनीति विज्ञान की वैज्ञानिकता की आधुनिकतम अभिव्यक्ति हम तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन में ही पाते है।४ पीटर मर्कल के अनुसार ''वास्तव में राजनीति विज्ञान की श्रेणी में केवल तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर ही आ सका है इसलिए ही सम्भवतः अरस्तू के बाद से आज तक श्रेष्ठतम विचारक राजनीति के तुलनात्मक विश्लेषण में संलग्न रहे हैं।५

(3) राजनीति में सिद्वान्त निर्माण (**Theory Generation in Politics**) तुलनात्मक राजनीति का महत्व इस बात में भी परिलक्षित होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से ही किसी विज्ञान

में सिद्धान्तों का निर्माण एवं नियमों का निरूपण सम्भव होता है। तुलनात्मक राजनीति प्रमाणित सामान्यीकरण तक पहुँचने में सहायता करती है।

मुख्यतः राजनीतिक सिद्धान्तों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है- आदर्शीकृत सिद्धान्त (Normative Theory) या आनुभाविक सिद्धान्त (Empirical Theory) । आदर्शीकृत सिद्धान्त में राजनीतिक व्यवस्थाओं के बारे में कोई कल्पना मस्तिष्क में कर ली जाती है तथा फिर उस कल्पना को रचनात्मक रूप दिया जाता है। प्लेटो के दार्शनिक राजा के सिद्धान्त को इसी श्रेणी में रखा जाता है। इसके विपरीत आनुभाविक सिद्धान्तों में राजनीतिक व्यवहार के वास्तविक तथ्यों को समझकर सिद्धान्तों का निर्माण होता है। इसमें राजनीति वैज्ञानिक स्वयं तथ्यों के संकलन के लिए राजनीति व्यवहार के क्षेत्र में जाकर राजनीतिक व्यावहार का अवलोकन करता है।

तुलनात्मक राजनीति का अदर्शीकृत सिद्धान्तों के निर्माण में तो कोई योगदान नहीं हो सकता है परन्तु आनुभाविक सिद्धान्त तो केवल इसी के सहारे सम्भव होते हैं, क्योंकि यथार्थ राजनीतिक व्यवहार की तुलना से ही अनुभविक सिद्धान्त का निर्माण होता है। इसी से सामान्य तथ्यों को एकत्रित किया जाता है, यथार्थ सामान्य नियम बनते हैं तथा इनके आधार पर सामान्य सिद्धान्त का प्रतिपादन सम्भव होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि तुलनात्मक राजनीति का महत्व राजनीतिक व्यवहार के सम्बन्ध में सिद्धान्त निर्माण में सर्वाधिक है।

(4) प्रचलित राजनीतिक सिद्धान्तों की पुनः प्रमाणिकता (**Re-Validification of Existing Political Theories**) तुलनात्मक राजनीति का सर्वाधिक महत्व इस बात में निहित है कि इसी की सहायता से प्रचलित

राजनीतिक सिद्धान्तों का, चाहे वे आदर्शी सिद्धान्त हों या आनुभाविक सिद्धान्त, पुनः परीक्षण किया जाता है तथा उनकी प्रमाणिकता परखी जा सकती है। तुलनात्मक राजनीति प्रचलित राजनीतिक सिद्धान्तों के पुनः परखने के लिए नवीन उपकरण व नवीनता युक्त विविध तथ्य उपलब्ध कराती है जिससे उनकी प्रमाणिकता का पुनः परीक्षण सम्भव हो सके। किसी भी विज्ञान में, यहाँ तक कि भौतिक विज्ञानों में भी परम सिद्धान्त (Absolute Theoies) नहीं हो सकते हैं। इस दृष्टि से राजनीति विज्ञान में प्रचलित सिद्धान्तों की प्रमाणिकता का पुनः परीक्षण एवं पुनः मूल्यांकन करना अनिवार्य है। यह कार्य तुलनात्मक राजनीति के माध्यम से ही सम्भव हैं

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि तुलनात्मक राजनीति का महत्व आधुनिक राजनीतिक विश्लेषण में बढ़ता जा रहा है। इससे हमें विभिन्न देशों की सरकारों एवं राजनीति के बारे में आनुभविक एवं वैज्ञानिक अध्ययन करने में सहायता मिलती है। इस बात का भी अध्ययन किया जा सकता है कि किसी देश में शासन पद्धति एवं विचारधारा का कितना अटूट सम्बन्ध है तुलनात्मक अध्ययन का महत्व लोकतान्त्रिक एवं लोक कल्याणकारी राज्य व्यवस्थाओं के कारण और भी बढ़ गया है। राज्य की हर गतिविधि का केन्द्र अब राजनीतिक व्यक्ति हो गया है। अतएव यह आवश्यक हो जाता है कि इस प्रकार के सर्वव्यापी राजनीतिक व्यवहार को न केवल समझा ही जाये,वरनउसे सामान्य नियम के सन्दर्भ में देखा जाये, जिससे कि हर स्तर का राजनीतिक आचरण व्यवहारिक सीमाओं की परिधि में समझा जा सके। यही कारण है कि तुलनात्मक राजनीति का महत्व उत्तरोत्तर वृद्धि पर है।

1.5 तुलनात्मक राजनीति का विषय के रूप में विकास

राजनीतिक विज्ञान में तुलनात्मक रूप से अध्ययन की परंपरा नई नहीं है, परंतु इसका मुख्य ध्यान राजनीति के अध्ययन पर है। डॉ. सी.बी. गेना के अनुसार, तुलनात्मक राजनीति स्वतंत्र अनुशासन की अवस्था में अचानक पहुंचने का सीधा रास्ता नहीं है, और इसका विकास लंबा और उतार-चढ़ावों भरा है। इसलिए, तुलनात्मक राजनीति के विकास को समझने के लिए इसका इतिहास देखना महत्वपूर्ण है।

जी.के. राबर्टस ने तुलनात्मक राजनीति के विषय को तीन कालों में विभाजित किया:

(i) अपरिष्कृत (Unsophisticated)

(ii) परिष्कृत (Sophisticated)

(iii) प्रगामी रूप से परिष्कृत (Increasingly Sophisticated)

1. **अरस्तू का काल (The Phase of Aristotle):**

इस काल में तुलनात्मक राजनीति का विकास हुआ, जिसमें अरस्तू ने तुलनात्मक एवं आनुभविक विश्लेषण करते हुए विश्व के विभिन्न देशों के संविधानों का अध्ययन किया। उन्होंने सरकारों के वर्गीकरण को तुलनात्मक राजनीति का मौलिक आधार माना।

2. **मैक्यावेली एवं पुनर्जागरण काल:**

मैक्यावेली ने राजनीति विज्ञान में वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया। उन्होंने अपनी पुस्तक "दि प्रिंस" में विभिन्न शासन व्यवस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया और राजनीतिक गतिविधियों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझाया।

3. मॉण्टेस्क्यू एवं बुद्धिवाद का युग:

मॉण्टेस्क्यू ने राजनीतिक व्यवस्थाओं का संरचनात्मक प्रकार्यात्मक विश्लेषण किया और समाज, अर्थव्यवस्था, राजनीतिक व्यवस्था और परिवेश के बीच संबंध को तुलनात्मक रूप से देखा। उन्होंने राजनीतिक गतिविधियों के यांत्रिकी सिद्धांतों को प्रतिपादित किया।

4. इतिहासवाद का युग:

इतिहासवाद तुलनात्मक राजनीति को उन्नीसवीं शताब्दी में लाया। इस युग में, इतिहासवादी दृष्टिकोण से कुछ विरोधी प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हुईं, जिनसे आधुनिक तुलनात्मक राजनीति को प्रेरणा मिली। इसके बावजूद, इस युग का योगदान नकारात्मक रहा, परंतु इससे बिना, आधुनिक तुलनात्मक राजनीति को समझना मुश्किल है। हीगल और मार्क्स के योगदान से इतिहासवादी चिन्तन में विशेष महत्वपूर्ण बदलाव आया।

हीगल ने आत्मा के मोक्ष को मानव जीवन का अंतिम उद्देश्य बताया और मानव विकास को नैतिकता की दिशा में रखा। उनके अनुसार, जो अंतिम विवेक है, वह पृथ्वी पर अवतार लेता है और राज्य भी इसी रूप में ईश्वर का पृथ्वी पर अवतरण है। **मार्क्स के** अनुसार, विकास का अंतिम उद्देश्य भौतिक दृष्टि से वर्गहीन और राज्यविहीन समाज है। इतिहासवादियों के द्वारा उठाए गए धर्म और संस्कृति के मुद्दे ने तुलनात्मक राजनीति को भी महत्वपूर्ण बना दिया।

5. राजनीतिक विकासवाद का युग:

राजनीतिक विकासवाद का युग इतिहासवाद के समय के साथ मेल खाता है, लेकिन ये दोनों ही में कुछ अंतर हैं। विकासवादी इतिहासवादी दृष्टिकोण की तरह नहीं थे और उन्होंने वास्तविक जीवन के तथ्यों के आधार पर राजनीतिक व्यवस्थाओं का विकास समझने का प्रयास किया। राजनीतिक विकासवादी द्वारा सीमित समस्याओं पर ध्यान केंद्रित किया गया और विभिन्न समाजों में एक सी राजनीतिक संस्थाओं की उत्पत्ति को समझने का प्रयत्न किया।

सर हैनरी मैन ने "Ancient Law" (1861) और "Early History of Institutions" (1874) के माध्यम से राजनीतिक विकासवाद की नींव रखी। उन्होंने यह समझाने का प्रयास किया कि राज्य कुटुम्ब का वृहत्तर रूप है। अन्य विद्वानों ने भी इस दिशा में अपना योगदान दिया, जैसे कि मैक्स वेबर, पैरेटो, माइकेल्स, और मोस्का। इन विचारकों ने राजनीतिक प्रक्रियाओं और राजनीतिक संस्थाओं की संरचना को तुलनात्मक रूप से विश्लेषण किया और नए दृष्टिकोण प्रस्तुत किए।

6. तुलनात्मक राजनीति में युद्धोपरान्त विकास:

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद राजनीतिक व्यवस्थाओं में हुई उथल-पुथल ने तुलनात्मक राजनीति में क्रांतिकारी परिवर्तन किया। इस विकास के कुछ मुख्य पहलुओं को हैरी एक्सटीन के अनुसार विवेचित किया गया था:

(i) वृहद राजनीतिक परिस्थितियों में पुनः रूचि: तुलनात्मक राजनीति में बड़ी राजनीतिक परिस्थितियों के पुनः अध्ययन में वृद्धि हुई।

(ii) राजनीतिक की विस्तृत और सामान्य अवधारणाओं में सुस्पष्टता: राजनीतिक की प्रकृति की विस्तृत और सामान्य अवधारणाओं पर ध्यान दिया गया और इसमें सुस्पष्टता लाई गई।

(iii) मध्य-स्तरीय सैद्धान्तिक समस्याओं के साधन पर ध्यान: कुछ प्रकार के राजनीतिक व्यवहार के निरूपकों से संबंधित मध्य-स्तरीय सैद्धान्तिक समस्याओं के समाधान में जोर दिया गया।

(iv) राजनीतिक संस्थाओं की शर्तों की खोज में रूचि: कुछ प्रकार की राजनीतिक संस्थाओं की अपेक्षित शर्तों की खोज में रूचि बढ़ी।

इसके बावजूद, बदली हुई राजनीतिक परिस्थितियों के कारण तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन में कई कमियाँ उभरीं हैं:

(i) तुलनात्मक विश्लेषण के तकनीकी पक्ष का विकास नहीं हुआ: तकनीकी पक्ष में विकास नहीं हुआ।

(ii) कानूनी आधार पर ही तुलना करने का बल: राजनीतिक क्रियाकलापों को कानूनी आधार पर ही तुलना करने पर जोर दिया गया, और अनौपचारिक और व्यवहारिक पहलूओं को अनदेखा किया गया।

(iii) गैर-राजकीय संस्थाओं की अवहेलना: तुलनात्मक विश्लेषण में गैर-राजकीय संस्थाओं की अवहेलना की गई।

(iv) सुनिश्चित मानकों का अभाव: सुनिश्चित मानकों का अभाव बना रहा और तुलनाएँ पश्चात्य व्यवस्थाओं तक ही सीमित रहीं।

वस्तुतः, द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त तुलनात्मक राजनीति में विकास हुआ और इसमें नए दृष्टिकोण आए। राजनीतिक व्यवस्था के आनुभविक परिसर का विस्तार हुआ और यहां तक कि पश्चिमी लोकतान्त्रिक राजनीतिक व्यवस्थाओं के परे भी जाकर अनुभव किया गया। साथ ही, विज्ञानिक परिशुद्धता में भी बढ़ोतरी हुई और व्यवहारवादी क्रांति ने इसमें योगदान किया। राजनीति के समाजिक परिवेश पर भी जोर दिया गया और इसमें नए दृष्टिकोणों का उपयोग किया गया। इस प्रकार, तुलनात्मक राजनीति में नए उपागमों का प्रयोग होने के साथ ही एक नया दिशा मिला और इसका अध्ययन एक अधिक वैज्ञानिक और व्यवस्थित दृष्टिकोण में होने लगा।

7. तुलनात्मक राजनीति की वर्तमान अवस्था (Comparative Politics Today):

द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त लगभग एक दशक तक विकसित राजनीतिक व्यवस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन सही रूप में नहीं किया गया था। नवीन राजनीतिक व्यवस्थाओं के आंतरिक संरचनाओं पर पहले अध्ययन ने ऐंस्टीन और ऐप्टर द्वारा कहा गया है कि "प्रथम अध्ययन तुलनात्मक न होकर नए राजनीतिक व्यवस्थाओं के आंतरिक संरचनाओं पर प्रकाश डालने वाले रहे हैं।"

कोलमैन, ऐप्टर, जार्ज मेकाहिन, माइरन वीनर, लूसियन डब्ल्यू पाई, कीथ कैलार्ड, लियोनार्ड बिंडर, द्वारा किए गए कई अध्ययन तुलनात्मक राजनीति के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं। आधुनिक समय में तुलनात्मक राजनीति के विद्वानों में डेविड ईस्टन, आमण्ड, कोलमैन, कार्ल डायच, जी.बी. पावेल, हेराल्ड लासवेल, राबर्ट डाल्ह, शिल्स, डेविड ऐप्टर, हैरी एक्सटीन, इत्यादि शामिल हैं।

डेविड ईस्टन, आमण्ड, और डायच ने तुलनात्मक विश्लेषण को एक व्यापक इकाई के रूप में सिद्धांत की दृष्टि से प्रस्तुत किया है। इस सिद्धांत के माध्यम से आज न केवल सामाजिक व्यवस्थाओं की ही तुलना की जा सकती है, बल्कि राजनीतिक व्यवस्था के सभी पहलुओं को सम्पूर्णता से समझा जा सकता है।

वर्तमान युग में तुलनात्मक राजनीति के अंतर्गत अनेक शोध तकनीकों, संकल्पनाओं, और सिद्धान्तों का विकास हुआ है। व्यवस्थापिकाओं पर लोवेन्थाल और यंग, राजनीतिक दलों पर डुवरगन-रैने और मैकेन्जी, राजनीतिक समाजवाद पर

डेविड ईस्टन, और अभिजन के अध्ययन पर राबर्ट डहल, राजनीतिक संचार पर कार्ल डायच आदि के शोध उच्चकोटि के माने जाते हैं। तुलनात्मक राजनीति के विकास में ऐप्टर, रोस्टोव, और लूसियन पाई के अध्ययन का महत्वपूर्ण योगदान है। सैमुएल हंटिंग्टन, फ्रेडरिक फे, जैसे विद्वानों ने विकास के सन्दर्भ में सैन्य व्यवस्थाओं का अध्ययन किया है।

1.6 तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति

तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति के सन्दर्भ में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। यही कारण है कि आज भी इसकी प्रकृति का निर्धारण सरल नहीं है, परन्तु इस सन्दर्भ में निम्न तथ्य उल्लेखनीय है:22

(i)पश्चिमी, गैर-पश्चिमी तथा साम्यवादी देशों की संस्थाओं का तुलनात्मक विश्लेषण।

(ii)विविध राजनीतिक संरचनाओं के अतिरिक्त अराजनीतिक संरचनाओं तथा उनके प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण।

(iii) राजनीतिक संस्थाओं की अपेक्षा मानव के राजनीतिक व्यवहार के अध्ययन पर अधिक बल।

(iv) राजनीतिक क्रियाकलापों, राजनीतिक प्रक्रियाओं एवं सत्ता का तुलनात्मक अध्ययन।

(v) विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं एवं संस्थाओं का तुलनात्मक विश्लेषण।

यदि हम विभिन्न विद्वानों के तुलनात्मक दृष्टिकोणों की समीक्षा करें तो तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति के सम्बन्ध में दो दृष्टिकोण पाये जाते है-

(1) तुलनात्मक राजनीतिक लम्बात्मक तुलना के रूप में (Comparative Politics as a vertical Study): इस विचार के समर्थकों के अनुसार तुलनात्मक रानीति एक ही देश में स्थित विभिन्न सरकारों व उनको प्रभावित करने वाले राजनीतिक व्यवहारों का तुलनातमक विश्लेषण एवं अध्ययन है। प्रत्येक राज्य में कई स्तरों पर सरकारें होती हैं- राष्ट्रीय सरकार, प्रान्तीय सरकार एवं स्थानीय सरकार। इस दृष्टिकोण के अनुसार तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध इस प्रकार की एक ही देश में स्थित विभिन्न सरकारों- राष्ट्रीय, प्रान्तीय एवं स्थानीय की आपस में तुलना से है। तुलनात्मक राजनीति एक ही देश की विभिन्न सरकारों की लम्बात्मक (Vertical) तुलना है।

वस्तुतः यह दृष्टिकोण तर्कसंगत नहीं है। राष्ट्रीय सरकार तथा स्थानीय सरकारों के मध्य पायी जाने वाली तुलना सतही ही है। आर्थिक साधनों, नियमों एवं कानूनों तथा शक्ति के संसाधनों की दृष्टि से देखें तो दोनों में काफी अन्तर पाया जाता है। इस लिए तुलनात्मक राजनीति में एक ही देश की विभिन्न स्तरीय सरकारों का तुलनात्मक विश्लेषण सम्भव दिखायी देते हुए भी सामान्यीकरण सकी सम्भावनाएँ नहीं रखता। अतएवं यह कहा जा सकता है। कि तुलनात्मक राजनीति की यह धारणा अब मान्य नहीं है तथा है तथा इस आधार पर तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति का निर्धारण करना सम्भव नहीं प्रतीत होता।

(2) तुलनात्मक राजनीति अम्बरान्तीय तुलना के रूप में (Comparative Politics as a Horizantal Study): तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति सम्बन्धी दूसरी धारण के अनुसार यह राष्ट्रीय सरकारों का अम्बरान्तीय Horizantal) तुलनात्मक अध्ययन है। अधिकांश राजनीति वैज्ञानिक भी इससे सहमति रखते हैं। इस प्रकार की तुलना

दो प्रकार से सम्भव है। प्रथम तो यह है कि यह तुलना एक ही देश के विभिन्न कालों में विद्यमान राष्ट्रीय सरकारों की आपस में हो सकती है। द्वितीय आज समपूर्ण विश्व में विद्यमान राष्ट्रीय सरकारों में हो सकती है।

एक ही देश में विद्यमान राष्ट्रीय सरकारों की ऐतिहासिक तुलना तुलनात्मक राजनीति में होनी चाहिए। वर्तमान की राजनीति संथाओं प्रक्रियाओं तथा रानीतिक व्यवहारों का तुलनात्मक विश्लेषण अतीत के ही सन्दर्भ में किया जा सकता है। जैसे - भारत के सन्दर्भ में यह तुलना प्राचीन भारत की राष्ट्रीय सरकारों मध्यकालीन भारत, ब्रिटिश भारत की सरकारों तथा आधुनिक स्वतन्त्र भारत की राष्ट्रीय सरकारों में की जा सकती है। इसी प्रकार स्वतंत्र भारत की राष्ट्रीय सरकारों की तुलना एक ही शासनकाल के विभिन्न पहलुओं के सन्दर्भ में की जा सकती है। जैसे, नेहरू काल (1942-1964) अथवा इन्दिरा गाँधी (1966-1977) तथा (1980-1984)। राष्ट्रीय सरकारों की यह समस्तरीय तुलना अवश्य है परन्तु ऐतिहासिक सन्दर्भ में की जा सकती है। परन्तु इसके लिए यह जरूरी है कि हर काल की राष्ट्रीय सरकार के बारे में समान जानकरी एवं तथ्य उपलब्ध हों।

1.7 तुलनात्मक राजनीति का विषय-क्षेत्र (Scope of Ccomparative Politics)

तुलनात्मक राजनीति का विषय-क्षेत्र अभी भी सीमांकन की अवस्था में है इसके विषय-क्षेत्र की निर्माण अवस्था के कारण ही जी. के. राबर्टस ने यहाँ तक कहा कि ''तुलनात्मक राजनीति या तो सब कुछ है अथवा कुछ भी नहीं है। अतएवं तुलनात्मक राजनीति के विषय-क्षेत्र की प्रमुख समस्या बन जाती है कि इसके अध्ययन क्षेत्र में क्या-क्या सम्मिलित किया जाये तथा क्या-क्या छोड़ा जाये? साथ ही यह भी प्रश्न आता है कि राजनीति सम्बन्धी किसी पहलू को इसके अध्ययन में सम्मिलित करने या न करने का आधार क्या हो? इस सम्बन्ध में हैरी एक्सटीन के विचार सर्वोपयुक्त हैं। सबसे अधिक आधारभूत बात यह है कि आज यह एक ऐसा विषय है जिसमें अत्यधिक विवाद है, क्योंकि यह संक्रमण स्थिति में है- एक प्रकार की विश्लेषण शैली से दूसरे प्रकार की शैली में प्रस्थान कर रहा है।

इससे स्पष्ट है कि तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति एवं परिभाषा की भाँति इसके विषय-क्षेत्र पर भी परम्परावादी एवं आधुनिक विद्वानों में मतभेद है। जीन ब्लोंडेल ने इसे दो बातों से सम्बन्धित बताया हैः

(1) सीमा सम्बन्धी विवाद

(2) मानकों तथा व्यवहार के पारस्परिक सम्बन्धों सम्बन्धी विवाद।

(1) सीमा सम्बन्धी विवाद (Controversy over the Boundary): सभी राजनीति वैज्ञानिक इस बात पर सहमत हैं कि तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध राष्ट्रीय सरकारों से है। इसमें भी न केवल सरकारी ढाँचे बल्कि सरकारी क्रियाकलापों एवं गैर राजनीतिक संस्थाओं के राजनीतिक कार्यो का भी अध्ययन आवश्यक रूप से सम्मिलित रहता है। परन्तु यहाँ भी सरकारी क्रियाकलापों की दृष्टि से दो दृष्टिकोण प्रचलित हैं- कानूनी दृष्टिकोण एवं व्यवहारिक दृष्टिकोण।

(2) मानकों एवं व्यवहार के सम्बन्धों का विवाद (Contraresy over the Relationships of Norms and Behaviour): तुलनात्मक राजनीति का विषय क्षेत्र सम्बन्धी दूसरा विवाद अधिक जटिलताओं का जनक है। मानक की अभिव्यक्ति कानून प्रक्रियाओं एवं नियमों में होती है, परन्तु राजनीतिक व्यवहार कई बार इन कानूनों के प्रतिकूल रहता है। यही तुलनात्मक अध्ययन में पेचीदगियाँ उत्पन्न करता है। अतएवं तुलनात्मक राजनीति में यह भी देखा जाना चाहिए कि राजनीति व्यवहार मानकों के अनुकूल है अथवा प्रतिकूल है। कहने का तात्पर्य यह है कि

राजनीति क्रिया से सम्बन्धित व्यक्तियों द्वारा मानकों के अभिव्यक्त कानूनों का कितना पालन व कितना उल्लंघन होता है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि मानक एवं व्यवहार दोनों ही गतिशील होते हैं। इनमें साम्य व गतिरोध दोनों ही हो सकता है। सामान्यतया इनमें पारस्परिकता रहती है तथा दोनों एक-दूसरे को प्रभावित करते है। अतएवं तुलनात्मक राजनीति में मानक एवं व्यवहार के राजनीतिक पहलुओं का अध्ययन भी सम्मिलित होना चाहिए। इस सम्बन्ध में जीन ब्लोंडेल ने लिखा है,'' जबकि आधारभूत दृष्टि से तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध सरकार की संरचना से होना चाहिए पर साथ ही साथ उसका सम्बन्ध व्यवहार में स्फुटित प्रतिमानों एवं आचरणों से भी होना चाहिए, क्योंकि वे सरकार की जीवित संरचना का अभिन्न अंग हैं।''30

तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन क्षेत्र के बारे में उपरोक्त विवादों के उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि इसमें न केवल शासन तन्त्रों एवं संगठनों की तुलना की जाती है तथा न ही मानकों एवं व्यवहारों के सम्बन्धों का विश्लेषण मात्र ही किया जाता हैवरनइसके क्षेत्र में इन दोनों का ही समावेश आवश्यक है। अतः निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि तुलनात्मक राजनीति के विषय-क्षेत्र में विभिन्न राजनीति व्यवस्थाओं की शासन संरचनाओं शासन व्यवहार प्रतिमानों व गैर-राजकीय संस्थाओं के अध्ययन कानून निर्माण, कानून प्रयोग तथा विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं के अंगों से सम्बन्धित निर्णयों तथा राजनीतिक दलों व दबाव समूहों जैसे संविधानातिरिक्त अभिकरणों के अध्ययन तक ही सीमित नहीं वरन उससे आगे बढ़ता है। एम. कर्टिस के अनुसार, ''राजनीतिक संस्थाओं तथा राजनीति व्यवहार की कार्य-प्रणाली में महत्वपूर्ण नियमितताओं, समानताओं एवं असमानताओं से तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध है।31

अभ्यास प्रश्न:

1. तुलनात्मक राजनीति का प्रमुख ध्यान क्या है?

A) आर्थिक विश्लेषण, B) विभिन्न देशों के राजनीतिक प्रणालियों का अध्ययन, C) पर्यावरण नीतियाँ

D) ऐतिहासिक घटनाएँ

2. तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति में क्या शामिल है?

A) केवल एक राजनीतिक प्रणाली का अध्ययन
B) एक तुलनात्मक दृष्टिकोण से राजनीतिक घटनाओं का विश्लेषण

C) राजनीतिक विचारधाराओं को नजरअंदाज करना

D) केवल घरेलू नीतियों पर केंद्रित होना

1.8 सारांश

उपरोक्त अध्ययन के उपरान्त यह स्पष्ट है जैसा कि राल्फ ब्रेबन्ती ने तुलनात्मक की व्यापक परिभाषा की है, ''तुलनात्मक राजनीति सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था में उन तत्वों की पहचान व व्याख्या है जो राजनीतिक कार्यो व उनके संस्थागत प्रकाशन को प्रभावित करते हैं।'' माइकेल कर्टिस के अनुसार ''तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध

राजनीतिक संस्थाओं की कार्यविधिव राजनीति व्यवहार की महत्वपूर्ण निरन्तरताओं, समानताओं व असमानताओं से है।'' आमण्ड एवं पावेल के अनुसार, ''तुलनात्मक राजनीति के तीन मौलिक मंतव्य हैं- प्रथम पश्चिमी तथा गैर-पश्चिमी देशों की संस्थाओं का एक साथ विश्लेषण, द्वितीय, राजनीतिक संस्थाओं का क्रमबद्व ढंग से अध्ययन करना एवं तृतीय तुलनात्मक राजनीतिक सिद्धान्तों में सम्बन्ध स्थापित करना।''

तुलनात्मक राजनीति के क्षेत्र में राजनीति शब्द के तीन लक्ष्यार्थ हैं राजनीतिक क्रियाकलाप, राजनीतिक प्रक्रिया तथा राजनीतिक सत्ता। राजनीतिक क्रियाकलाप के अन्तर्गत वे प्रयास आते हैं जिससे सत्ता के लिए संघर्षरत लोग अपने हितों की यथासम्भव रक्षा कर सकें। राजनीतिक प्रक्रिया के अर्न्तगत उन सभी अभिकरणों की भूमिका आ जाती है जो निर्णय-निर्माण (Decision Making) प्रक्रिया से संग्लन हैं। इसी प्रकार सत्ता एक प्रकार का मानव सम्बन्ध है जिसके माध्यम से राजनीतिक प्रधिकार कुछ नीतियों के बारे में निर्णय करता है जिनका अनुपालन अन्य लोगों द्वारा करना आवश्यक होता है।

इस प्रकार तुलनात्मक राजनीति, राजनीति संस्थाओं तथा राजनीतिक व्यवहार की समानताओं-असमानताओं से सम्बद्ध है। तुलनात्मक राजनीति में एक स्वतत्र अनुशासन के लिए आवश्यक सुस्पष्ट एवं निश्चित विषय-क्षेत्र है |

1.9 शब्दावली

राजनीतिक विचारधारा: एक व्यक्ति या समूह के राजनीतिक विचारों और दृष्टिकोणों का संग्रह।

वैश्विक शासन: वैश्विक स्तर पर संगठित स्थायी शासन की प्रक्रिया या प्रणाली।

राजनीतिक गतिविधियाँ: राजनीतिक प्रक्रियाओं और परिवर्तनों का अध्ययन।

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. B, 2. B

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Jean Blandel, Comparative Government : A Reader (Eds), Macmillan, London, 1969, p. Xi.

2 डॉ. सी. बी. गेना तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएं, पृ. 4-14 विकास पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली (1978

3. Ward and Macridis, Political Systems: Asia, Eaglewood Cliffs, New Jersey, (1968), p.5.

4.Michael Curtis, Comparative Govt. and Politics, Harper and Row London, 1968, p. 6.

5. Peter H. Merkel, Modern comprative Politics, Holt Rinehart, Winstan, New York, 1970, p. 1

6. G.K. Roberts, Comparative Politics Today Government and Opposition, Vol. VII No. 1 Witnter 1972, pp. 38-39.

7. Jean Blondel, An Introduction to Comparative Government, We Uliedenfield and Nicolson London, 1969. p. 6

8. Edward A. Freeman, Why Compare Comparative Politics, 1973, pp., 19-35

9. R.C. Macridis, comparative Government, 1967, p. 209.

10. G.K. Roberts, What is comparative Politics Macmillan, 1972, p. 7.

11. Ralph Braibanti, 'Comparative Government and Politics, Harper and Row London; 1968, p.6

12. Michael Curtis, comparative Government and Politics, Harper and Row, London, 1968, p. 6.

13. G. A. Almond and Powell, Comparative Politics: A Developmental Approach, Boston, (1966), p. 2-5.

14.डॉ. सी.बी. गेना, पूर्वोक्त, p.60.

15. G.K Roberts, Op. Cit. p. 45

16. Eckstein and After (Eds.), Comparative Politics : A Reader, Free press, New york, 193,p.6.

17. डॉ. सी.बी. गेना पूर्वोक्त p.65

18.Eckstein and After (Eds.), Comparative Politics : A Reader, Free, Press, New York, (1963),p.12.

19-डॉ. सी.बी. गेना पूर्वोक्त] p.78.

20. Eckstein and Apter, Op cit, p. 12.

21.Sidney Verba, "Dilemmas in Comparative Research, World Politics Vol. XX, 1963-68 ,p-III.

22.Jean Blondel, "An Introduction to Cocparative Government", Weilden Field and Nicholson London,1969,p. Blandel.

23.Jean Blaondel, An Introduction to Comparative Government, London, 1969.p.6.

24.डॉ. सी.बी. गेना पूर्वोक्त] p.40.

25. G.K. Robers, Comparative Politics, Today, p.6.

26.Eckstein and Apter, Op, cit., p.6.

27.David Eastan, The Political System, New York, (1953), p.129.

28. Jean Blondel, op. cit. p.6.

29.Jean Blondel, Ibid p.6.

30.Jean Bolndel, Ibid p,11.

31.Michacl Curtis, Op.cit. p. 5.

32.S.E. Finer, Comparative Government, Allen have, London, 1970, p.40.

1.12 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. S.E. Finer, Comparative Government, Allen have, London

2. David Eastan, The Political System, New York,

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1.तुलनात्मक राजनीति के अर्थ एवं प्रकृति की विवेचना कीजिये |

इकाई 2 तुलनात्मक राजनीति स्वरुप: परंपरागत और आधुनिक

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के उपागम

2.4 तुलनात्मक राजनीति का परम्परागत उपागम

2.5 तुलनात्मक राजनीति का परम्परागत उपागम की सामान्य विशेषताओं

2.6 परम्परागत तुलनात्मक राजनीति की आलोचना

2.7 तुलनात्मक राजनीति के आधुनिक उपागम

2.8 आधुनिक उपागम का विकास

2.9 आधुनिक तुलनात्मक राजनीति की विशेषताएं

2.10 आधुनिक तुलनात्मक राजनीति की आलोचना

2.11 सारांश

2.12 शब्दावली

2.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.15 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.16 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

तुलनात्मक राजनीति का अध्ययन प्रारम्भ से ही राजनीति विज्ञान के अन्तर्गत विभिन्न संकल्पनाओं प्रत्ययों एवं वास्तविकताओं का विश्लेषण रहा है। ऐक्सटीन तथा ऐप्टर के अनुसार, ''राजनीति विज्ञान में राजनीतिक संस्थाओं, संविधानों तथा सरकारों के तुलनात्मक अध्ययन का अत्यधिक लम्बा एवं गौरवमय अतीत है।''1 तुलनात्मक राजनीतिक संस्थाओं का अध्ययन अब तक केवल नाम से ही तुलनात्मक रहा है। एक लम्बे समय तक यह केवल विदेशी शासनों, उनके ढाँचे तथा औपचारिक संगठन का ऐतिहासिक, वर्णनात्मक तथा कानूनी तौर से अध्ययन रहा है जब कि तुलनात्मक राजनीति को सिद्धान्तों, ढाँचों तथा वास्तविक व्यवहारों से अपना सम्बन्ध जोड़ना चाहिए।''2

राजनीति विज्ञान में तुलनात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण का श्रेय सर्वप्रथम अरस्तू को ही जाता है जिन्होंने तत्कालीन 158 यूनानी नगर राज्यों के संविधानों का तुलनात्मक विश्लेषण किया था। इस विश्लेषण में अरस्तू द्वारा प्रयुक्त मापदण्ड आज भी तुलनात्मक राजनीति में प्रासंगिक माने जाते हैं।

परम्परागत तुलनात्मक अध्ययन राजनीतिक विश्लेषण की दृष्टि से अधिक सहायक न रह सके। यही कारण है कि राजनीतिक वास्तवितकताओं, संस्थाओं एवं व्यवहारों को समझने के लिए नये-नये उपागमों की खोज की जाने लगी। इन नये उपागमों को आधुनिक उपागमों की संज्ञा दी जाने लगी।

एक राजनीतिक व्यवस्था में संरचनात्मक तथा कार्यात्मक दोनों ही दृष्टि से अनेक प्रवृतियाँ उभरकर सामने आती हैं। इसके अन्तर्गत सरकार के विभिन्न अंगों-कार्यपालिका, व्यवस्थापिका न्यायपालिका, नौकरशाही इत्यादि का विश्लेषण होता है। दूसरी ओर इसमें राजनीतिक दल दबाव समूह एवं विभिन्न हित समूह होते हैं। साथ ही साथ इसमें मूल्यों एवं विश्वासों का भी योगदान होता है जो समाज के आधार स्तम्भ के रूप में कार्य करते हैं। इस दृष्टि से 20 वीं सदी में राजनीति विज्ञान के अध्ययन एवं विश्लेषण के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। इस दृष्टि से तुलनात्मक राजनीति के क्षेत्र में अनेक आधुनिक उपागम उभरकर सामने आये हैं तथा अनेक विद्वानों ने अपनी-अपनी दृष्टि से सराहनीय योगदान दिया है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त

- तुलनात्मक राजनीति का परम्परागत उपागम के बारे में जान सकेंगे |
- तुलनात्मक राजनीति का परम्परागत उपागम की सामान्य विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे|
- तुलनात्मक राजनीति का आधुनिक उपागम के बारे में जान सकेंगे |

2.3 तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के उपागम

अरस्तू के बाद अनेक राजनीतिक विचारकों ने राजनीतिक संस्थाओं व व्यवस्थाओं के अध्ययन में तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किया। इनमें सिसरो, पालिबियस, मैक्यावली मॉण्टेस्क्यू मार्क्स, मिल तथा बेजहाट इत्यादि विद्वानों का नाम

महत्वपूर्ण है जिन्होंने विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं एवं संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण प्रस्तुत किया।

तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के उपागमों का अध्ययन करने से पूर्व हमें दो बातों का ध्यान रखना होगा।

1.राजनीति वैज्ञानिक इस प्रश्न का उत्तर प्रारम्भ से ही ढूँढ़ने में व्यस्त हैं, क्योंकि एक प्रकार की राजनीतिक संस्थाएँ एक राजनीतिक व्यवस्था में सफल रहती हैं तथा अन्य राजनीतिक व्यवस्था में असफल हो जाती है। यह जानने के लिए विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं का अध्ययन ही काफी नहीं है, इसके लिए विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं का विश्लेषण भी आवश्यक है। इसके द्वारा ही किसी राजनीतिक व्यवस्था एवं संस्था की श्रेष्ठता का पता चलता है। यही कारण है कि राजनीतिक व्यवस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन राजनीतिक व्यवस्थाओं के विश्लेषण की प्रमुख पद्धति बनता जा रहा है।

2.पिछले सौ वर्षों के भीतर विशेषकर, द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन क्षेत्र में बदलती हुई राजनीतिक परिस्थितियों के कारण क्रान्तिकारी परिर्वतन आ गये। यही कारण है कि अध्ययन के पुराने दृष्टिकोण निरर्थक होते चले गये तथा विश्लेषण की नई तकनीकों का उदय हुआ। नई तकनीकों के उदय के उपरान्त तुलनात्मक राजनीति के आधुनिक उपागमन सामने आये हैं।

अतएवं यह कहा जा सकता है कि तुलनात्मक राजनीति के परम्परागत एवं आधुनिक उपागमों में उपरोक्त दृष्टिकोण के आधार पर पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। इस प्रकार दोनों ही प्रकार के उपागमों की प्रकृति को समझने के लिए हमें इनका विस्तार से विवेचना करनी होगी।

2.4 तुलनात्मक राजनीति के परम्परागत उपागम

तुलनात्मक संस्थाओं एवं सरकारों के प्रारम्भिक प्रयासों को परम्परागत तुलनात्मक राजनीति का नाम दिया जाता है। जिन विद्वानों के राजनीतिक अध्ययनों को परम्परागत परिप्रेक्ष्य से सम्बन्धित किया जाता है उनमें सर अर्नेस्ट बार्कर, हेराल्ड, जे. लास्की, कार्ल जे फ्रेडरिक व हरमन फाइनर प्रमुख हैं। इन लेखकों ने तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग करके मुख्यतः पाश्चात्य राजनीतिक व्यवस्थाओं का अध्ययन किया। इसके अर्न्तगत भी उन्होंने मुख्यतया लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं का ही अध्ययन किया तथा अलोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं से अपने आपको अलग रखा। इस दृष्टि से परम्परागत तुलनात्मक राजनीति का अध्ययन क्षेत्र अत्यन्त सीमित एवं संकुचित था। इस दृष्टिकोण को भली-भाँति समझने के लिए इसकी सामान्य विशेषताओं को समझना होगा।

मेक्रेडीज ने तुलनात्मक राजनीति की पाँच विशेषताएँ बतलाई हैं:

(1) प्रधानतः अतुलनात्मक (2) प्रधानतः वर्णनात्मक (3) प्रधानतः संकीर्ण (4) प्रधानतः स्थिर (5) प्रधानतः प्रबन्धकीय।

2.5 तुलनात्मक राजनीति के परम्परागत उपागम की सामान्य विशेषताएँ

परम्परागत तुलनात्मक राजनीति की सामान्य विशेषताओं का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता है।

(1) प्रधानतः अतुलनात्मक (Essentially Non-comparative) राय सी. मैक्रेडीज ने परम्परागत तुलनात्मक राजनीति अध्ययनों को मूलतः अतुलनात्मक बताया है। ये सभी अध्ययन एक दो देशों के ही अध्ययन थे। इनमें अध्ययन की इकाई किसी एक देश का संविधान होता था। उदाहरण के लिए ऑग एवं जिंक ने 'Governments of Europe' नामक कृति में ब्रिटेन, जर्मनी फ्राँस, इटली इत्यादि राष्ट्रों की संवैधानिक व्यवस्थाओं का ही अध्ययन किया था। इस अध्ययन का सम्बन्ध सामानान्तर संस्थाओं के अध्ययन तक सीमित रहा, जैसे- ब्रिटेन, फ्राँस तथा अमेरिका की व्यवस्थापिकाओं या कार्यपालिकाओं की तुलना करना। इसके साथ ही साथ यह अध्ययन अनेक देशों के संवैधानिक आधारों के वर्णन में ही व्यस्त रहे। इन लेखकों ने अलग-अलग राज्यों वे संवैधानिक व्यवस्थाओं का पृथक्-पृथक् अध्ययन भी किया। जैसे ब्रिटेन की राजनीतिक संस्थाओं का भी वर्णन करके उनकी फ्राँस की राजनीतिक संस्थाओं के विवेचन के साथ तुलना करना। वास्तव में इस प्रकार का वर्णन भी सही अर्थो में तुलनात्मक नहीं था तथा इसलिए मैक्रेडीज का कहना है, ''अब तक के तुलनात्मक अध्ययन केवल नाम से ही तुलनात्मक थे।[7]

(2) प्रधानत: वर्णनात्मक (**(Essentially Descriptive)**)परम्परागत तुलनात्मक अध्ययन समसया समाधानात्मक या विश्लेषणात्मक न होकर वर्णनात्मक रहे हैं। परम्परागत विद्वानों की मान्यता थी कि संस्थाओं का वर्णन उनकी व्याख्या के लिए पर्याप्त है। इसलिए इन विद्वानों ने शासन व्यवस्थाओं का वर्णन करके विभिन्न शासनतन्त्रों के मध्य समानताओं एवं असमानताओं का स्पष्टीकरण ही किया। परन्तु इस बात की परवाह नहीं की कि यह समानताएँ या असमानताएँ किन कारणों से हैं? वस्तुतः वे राजनीतिक व्यवस्थाओं सरकारों के स्वरूपों एवं संस्थाओं के वर्णन से आगे नहीं बढ़े। इस दृष्टि से जेम्स टी. शाटवले की कृति 'Government of Continental Europe'प्रमुख हैं इस दृष्टि से परम्परागत तुलनात्मक राजनीति वर्णनात्मक ही रही है।

(3) प्रधानतः संकीर्ण (**(Essentially Parochial)**) परम्परागत तुलनात्मक अध्ययन प्रधानतः पाश्चात्य राज्यों की शासन व्यवस्थाओं की संकीर्ण परिधि में ही बँधे रहे। सांस्कृतिक या भाषीय समानता के आधार पर ही यह लेखक एक राज्य से आगे बढ़कर दूसरे या तीसरे राज्य को सम्मिलित अध्ययन के लिए लेते थे। मुख्यतया ये अध्ययन यूरोप एवं अमेरिका तक ही सीमित रहे। ऐक्सटीन व ऐप्टर ने इस दृष्टिकोण का सार इन शब्दों में व्यक्त किया है, ''परम्परागत दृष्टिकोण पाश्चात्य राजनीतिक व्यवस्थाओं तक सीमित रहा तथा प्रमुखतया एक संस्कृति संरूपण या समूह का ही इसमें अध्ययन का ही इसमें अध्ययन किया गया।[8]

(4) प्रधानतः स्थिर (**(Essentially Static) :**) परम्परागत उपागम में उन गतिशील कारकों का अध्ययन नहीं किया गया, जोकि विविध राजनीतिक संस्थाओं की उत्पत्ति तथा विकास का आधार होते हैं। परम्परागत विद्वानों ने कानूनी सन्दर्भ में राजनीतिक व्यवस्थाओं अध्ययन किया तथा उन तत्वों की अवहेलना की जो राजनीतिक परिवर्तनों तथा विकास की समस्याओं एवं दिशाओं से सम्बन्धित होते हैं। उन्होंने उन परिस्थितियों एवं तत्वों का अध्ययन करना आवश्यक नहीं समझा जो किसी भी राजनीतिक व्यवस्था में संसदीय प्रणाली अथवा अध्यक्षीय प्रणाली को सफल अथवा असफल बनाती है।

(5) प्रधानतः प्रबन्धकीय (**(ESSENTIALLY MONOGRAPHIC STUDIES) :**) तुलनात्मक शासन से सम्बन्धित अधिकांश परम्परागत रचनायें लम्बे निबन्धों जैसी हैं। इन रचनाओं में किसी एक शासन व्यवस्था की संस्था अथवा उस व्यवस्था में किसी विशिष्ट संस्था का विवेचन किया गया है। जॉन मेरियट, आर्थर कीथ, जेम्स ब्राइस, सर आइवर जेनिंग्स, हेराल्ड लास्की, ए., वी. डायसी, राब्सन, वुडरो विल्सन, इत्यादि लेखकों की रचनाओं को इस श्रेणी में

रखा जा सकता है। इन विद्वानों के अध्ययन विषयों में, अमेरिका राष्ट्रपति, ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था, ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल, अमेरिकी काँग्रेसी, फ्रेंच प्रशासकीय कानून, इत्यादि हैं।

(6) प्रधानतः औपचारिक संस्थागत अध्ययन ((**Excessively Formal Institutional) :**) तुलनात्मक राजनीति के परम्परागत अध्ययनों में राजनीतिक संस्थाओ का औपचारिक तथा कानूनी अध्ययन किया गया था। डायसी, मुनरो, ऑग एवं जिंक जैसे विद्वानों ने अपने अध्ययन औपचारिक संस्थाओं के विवेचन तक ही सीमित रखे। राय मैक्रेडीज के अनुसार, ''उन्होंने इस बात को जानने का प्रयत्न नहीं किया कि संविधान एवं राजनीतिक संस्थाएँ व्यवहार में किस प्रकार कार्य करती हैं।''[9]

2.6 परम्परागत तुलनात्मक राजनीति की आलोचना (CRITICISM OF TRADITIONAL COMPARATIVE POLITICS)

परम्परागत तुलनात्मक राजनीति अपनी सीमाओं के कारण अनेक विसंगतियों का शिकार हुई है। मात्र लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं के अध्ययन के सहारे तुलनात्मक विश्लेषण सम्भव नहीं हो सकता। यही कारण है कि समय बीतने के साथ यह उपागम राजनीतिक व्यवहार की गतिशीलता को समझने में असमर्थ रहा तथा इसकी कमियाँ उजागर हो गयी। परम्परागत तुलनात्मक राजनीति की आलोचना निम्न आधारों पर की जाती है:

(1) सही अर्थो में तुलना नहीं (Non-comparative in Real Terms) : परम्परागत अध्ययनों में अर्थपूर्ण तुलनाओं का प्रयास नहीं किया गया है। इसमें मात्र शासन प्रणालियों अथवा संस्थाओं के ऊपर ढाँचे की समानताओं एवं असमानताओं की तुलना की गयी अथवा अमेरिकी राष्ट्रपति की तुलना भारतीय प्रधानमन्त्री से की गयी जिसे सही अर्थो में तुलना नहीं कहा जा सकता। आमण्ड एवं पावेल के अनुसार, '' परम्परागत तुलनात्मक राजनीति, अलग-अलग राजनीतिक व्यवस्थाओं की विशिष्ट विशेषताओं पर प्रकाश डालने तक ही सीमित रही तथा व्यवस्थित तुलनात्मक विश्लेषण नाम मात्र का ही था।'[10]

(2) अराजनीतिक व्यवहार की उपेक्षा (Lgnoring Non-Political Behaviour) :तुलनात्मक राजनीति का दूसरा आक्षेप यह लगाया जाता है कि इसमें राजनीतिक व्यवहार के अराजनीतिक तत्वों की उपेक्षा की गयी। आमण्ड एवं पावेल के अनुसार ''इनका मुख्य जोर संस्थाओं, कानूनों, विधियों व राजनीतिक विचारों तथा विचारधाराओं पर ही था तथा उनके कार्य, अन्तःक्रिया व्यवहार व उपलब्धियों की उपेक्षा की गयी।''[12]

(3) **विश्लेषण का अभाव** (Lack of analysis) : परम्परागत अध्ययन न तो विश्लेषणात्मक, थे तथा न ही व्याख्यात्मक वरन केवल वर्णनात्मक थे। वे राजनीतिक संस्थाओं के मूल में अन्तर्निहित राजनीतिक प्रक्रियाओं, दबाव व हित समूहों तथा व्यवहार को अपने अध्ययन में सम्मिलित नहीं करते जिनके माध्यम से वास्तव में तुलना सम्भव है। यह भी एक विवादास्पद प्रश्न है कि फ्रांस रूस, ब्रिटेन, अमेरिका या स्विटजरलैण्ड की ही व्यवस्था को क्यों अध्ययन के लिए चुना गया? परम्परागत तुलनात्मक अध्ययनों में जो कुछ तुलना की गयी है, उनमें संघीय एवं एकात्मक व्यवस्था, संसदात्मक एवं अध्यक्षात्मक व्यवस्था, प्रजातन्त्र व अधिनायकवाद आदि के गुण-दोषों तथा उनके बीच समानताओं एवं असमानताओं को दर्शाया गया है।

(4) **संकुचित अध्ययन** (Norrow-minded Study Precision) : परम्परागत तुलनात्मक अध्ययन संकुचित कहे जाते हैं। परम्परागत लेखकों द्वारा अलोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं गैर-पाश्चात्य राजनीतिक व्यवस्थाओं, राजनीतिक व्यवस्थाओं के अराजनीतिक आधारों तथा राजनीतिक व्यवहारों की अवहेलना की गई है। तुलनात्मक राजनीति पर लिखी गयी अधिकांश पुस्तकों में लोकतान्त्रिक व विशेष तौर से पश्चिमी यूरोपीय संस्थाओं का ही वर्णन है।

(5) **अध्ययन पद्धतियों के परिष्करण का आभाव (Lack of Sophisticated Study Methods) :**परम्परागत तुलनात्मक अध्ययनों में ऐतिहासिक तथा वैधानिक पद्धति पर जोर दिया गया है। इन पद्धतियों की सीमाओं के उभरने पर भी नयी विश्लेषण प्रविधियों के प्रयोग का प्रयत्न नहीं किया गया। यही कारण है कि इसमें अन्तरअनुशासनात्मक विश्लेषण का प्रयोग सम्भव नहीं हो पाया। इसका परिणाम यह हुआ है कि इसमें अध्ययन पद्धतियों का सही ढंग से परिष्करण नहीं हो पाया।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि परम्परागत तुलनात्मक राजनीति में कई कमियाँ थीं। राज्य की प्रकृति, क्षेत्र एवं कार्यो में वृद्वि ने इस समस्या को और बढ़ा दिया है। राज्य के कार्यो में आये बदलावों ने सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था को विश्लेषण की इकाई बना दिया है। इस दृष्टि से तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र भी बदल गया है। इसके लिए विभिन्न नई पद्धतियों एवं आयामों का विश्लेषण किया जाने लगा है। इनका अध्ययन अगले अध्याय में किया जायेगा।

2.7 तुलनात्मक राजनीति के आधुनिक उपागम

बीसवीं सदी में आधुनिक अध्ययनों के अन्तर्गत कई रचनायें उभरकर सामनें आयीं, जिनमें **ग्राह्म वालास की रचना 'Human Nature in Politics' आर्थर बेंटले की रचना, The Process of Government' डेविड ह्यमैन की रचना 'The Government Process'** प्रमुख हैं। इन रचनाओं से एक बात साफ उभरकर यह सामने आयी हैं कि अब राजनीतिक संस्थाओं की संरचनाओं की अपेक्षा उनके व्यवहार पर अधिक बल दिया जाने लगा है। राजनीतिक विश्लेषण के लिए अब अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान जैसे सामाजिक विज्ञानों की खुलकर सहायता ली जाने लगी है। इसके परिणामस्वरूप राजनीति विज्ञान में भी अर्न्तअनुशासनात्क अध्ययन पद्धति का ; (inter-disciplinary) सूत्रपात हुआ है। इस नयी अनुभववादी पद्धति के परिणामस्वरूप राजनीति विज्ञान का अध्ययन क्षेत्र अधिक विस्तृत एवं बहुआयामी हो गया है। इस दिशा में योगदान देने वाले प्रमुख विद्वानों में रार्बट के. मर्टन, टालकोट पारसोन्स, डेविड ईस्टन, आमण्ड, कार्ल डायच, डेविड ऐफ्टर, एडवर्ड शिल्स, लूसियन ड्ब्ल्यू पाई, इत्यादि का नाम सम्मिलित किया जा सकता है।

2.8 आधुनिक उपागमों का विकास (Devlopment of Modern Perspective)

तुलनात्मक राजनीति के आधुनिक उपागमों की विशेषताओं एवं लक्षणों का विवेचन करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि राजनीतिक व्यवस्थाओं की जटिलताओं का उद्भव कैसे हुआ तथा पुराने उपागमों की अपेक्षा नये उपागमों की आवश्यकता क्यों अनुभव की गयी? आमण्ड एवं पावेल के अनुसार , परम्परागत तुलनात्मक राजनीति की सर्वत्र लोकतन्त्र के प्रसार में आस्था धूमल हो गयी थी। वस्तुतः द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त परम्परागत उपागमों का महत्व कम होता गया तथा आधुनिक विधियों एवं उपागमों का महत्व बढ़ता गया।

आमण्ड तथा पावेल ने अपनी पुस्तक 'Comparative Politics : A Developmental Approach'में इस परिवर्तन के लिए तीन कारणों का उत्तरदायी ठहराया है:[1]

(1) एशिया, अफ्रीका तथा मध्य-पूर्व में राष्ट्रीय विस्फोट जिसमें विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों, सामाजिक संस्थाओं व राजनीतिक विशेषताओं वाले अनेक राष्ट्रों का राज्यों के रूप में उदय हुआ।

(2) अटलांटिक समुदाय के राष्ट्रों के प्रभुत्व का अंत तथा अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति व प्रभाव का उपनिवेशों एवं अर्ध-उपनिवेशी क्षेत्रों में प्रसार एवं विस्तार हुआ।

(3) साम्यवाद का राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था की संरचना व अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को बदलने के संघर्ष में एक शक्तिशाली प्रतियोगी के रूप में उभरना महत्वपूर्ण रहा।

वास्तव में तुलनात्मक राजनीति का परम्परागत दृष्टिकोण बदलती हुई परिस्थितियों में राजनीतिक यथार्थ की गत्यात्मकता को समझने में असमर्थ सिद्ध हुआ तथा नयी प्रविधियों, पद्धतियों व दृष्टिकोणों का प्रयोग अनिर्वाय हो गया।

मैक्रेडीज का विचार है कि तुलनात्मक राजनीति का आधुनिक दृष्टिकोण अधिक परीक्षण करने वाला, अधिक खोजबीन करने वाला तथा अधिक व्यवस्थित है। इसका लक्ष्य राजनीतिक संस्थाओं, प्रक्रियाओं तथा व्यवहारों का उसके मूल में जाकर परीक्षण करना है।

2.9 आधुनिक तुलनात्मक राजनीति की विशेषताएँ(Characters of Modern Comparative Politics)

राजनीति विज्ञान के अध्ययन क्षेत्र में हुए परिवर्तनों ने तुलनात्मक राजनीति के विश्लेषण को नये आयाम प्रदान किये हैं। इस दृष्टि से नये उपागमो का सृजन किया गया है। इसमें शासनों का औपचारिक संस्थागत व नियमबद्ध अध्ययन न करके उसे कुछ आधारभूत प्रश्नों से जोड़ा गया है। इसके अध्ययन की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार है:

(1) मूलतः तुलनात्मक **(Largely Comparative in Approach) :** आधुनिक तुलनात्मक राजनीति मूलतः तुलनात्मक हैं। इसमें राजनीतिक व्यवस्थाओं के ऊपरी ढाँचे की ही तुलना नहीं होती अपितु राजनीतिक प्रक्रियाओं तथा गैर राजनीतिक कारकों की भी तुलना होती है। ऐप्टर के अनुसार 'आधुनिक तुलनात्मक राजनीति के अर्न्तगत औपचारिक संस्थाओं के साथ-साथ राजनीतिक प्रक्रियाओं, राजनीतिक व्यवहारों तथा राजनीति को प्रभावित करने वाले अराजनीतिक तत्वों का भी अध्ययन किया जाता है।'

(2) व्यापकतम विषय-क्षेत्र **(Extensive in Scope) :** आधुनिक तुलनात्मक राजनीति का विषय-क्षेत्र काफी व्यापक है। इसमें औपचारिक वैधानिक शासन अंगों के साथ-साथ राजनीतिक प्रक्रियाओं, राजनीतिक व्यवहार व राजनीति को प्रभावित करने वाले अराजनीतिक तत्वों का अध्ययन किया जाता है। इसमें यूरोपीय देशों की शासन व्यवस्थाओं के साथ एशिया, अफ्रीका के विकासशील देशों की राजनीतिक व्यवस्थाओं का भी अध्ययन किया जाता है। वर्तमान राजनीतिक संस्थाओं को ऐतिहासिक सन्दर्भ में समझने का प्रयास भी आधुनिक तुलनात्मक राजनीति में किया जाता है। राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्थाओं को एक अन्तराष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था से सम्बद्ध मानकर इनका एक दूसरे पर प्रभाव

व उनकी पारस्परिकता भी तुलनात्मक अध्ययनों में देखी जाने लगी है। तुलनात्मक राजनीति का व्यापक विषय-क्षेत्र राजनीति विज्ञान में इसके बदले महत्व का परिचायक है।

(3) विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक **(Analytical and Explanatory) :** राजनीतिक व्यवस्थाओं के विवरण मात्र से राजनीति व्यवस्थाओं की सही प्रकृति को समझना सम्भव नही है। यही कारण है कि आधुनिक तुलनात्मक राजनीति विवरणात्मक न होकर समस्या समाधानात्मक व्याख्यात्मक तथा विश्लेषणात्मक है। सी. बी. गेना के अनुसार, ''विश्लेषणात्मक मार्ग किसी भी राजनीतिक व्यवस्था को समझने का प्रयास करता है तथा उन महत्वपूर्ण संरचनाओं का परिचय देता है जिनके माध्यम से एक राजनीतिक व्यवस्था कार्य करती है तथा अन्य व्यवस्था के समान अथवा असमान बनती है।''[2] विश्लेषणात्मक पद्धति से परिकल्पनाओं की जाँच की जाती है तथा जाँच के आधार पर उन परिकल्पनाओं का धारण संशोधन या खण्डन किया जा सकता है। सभी प्रकार के वैज्ञानिक अध्ययनों में विश्लेषण का यह ढंग अनिवार्य है।

(4) व्यवस्थावादी अध्ययन **(System Oriented Study) :** इस दृष्टिकोण में संवैधानिक तन्त्र के अध्ययन के स्थान पर राजनीतिक व्यवस्था को ही आधार मानकर राजनीतिक संस्थाओं एवं प्रक्रियाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। आधुनिक विद्वानों ने हर राजनीतिक व्यवस्था की तीन विशेषताएँ स्वीकार की हैं - बाध्यकारी शक्ति या सामर्थ्य शक्ति का एकाधिकार तथा शक्ति के प्रयोग की साधनयुक्तता। इन तीनों विशेषताओं में से एक या तीनों का सन्दर्भ एक राजनीतिक व्यवस्था को अन्य राजनीतिक व्यवस्था या व्यवस्थाओं से भिन्न बनाता है तथा इन्हीं के आधार पर किसी राजनीतिक व्यवस्था की वैधता या अवैधता का ज्ञान होता है। राजनीतिक व्यवस्था में हर संस्था या प्रक्रिया की वास्तविकता को तभी समझा जा सकता है जब राजनीति का अध्ययन सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था के दृष्टिकोण से किया जाये। राजनीतिक व्यवहार की वास्तविक गत्यात्मकता को समझने के लिए ही आधुनिक तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन व्यवस्था अभिमुखी होता जा रहा है।

(5) सामाजिक सन्दर्भ अभिमुखी **(Social Context Oriented) :** तुलनात्मक राजनीति के आधुनिक लेखक राजनीतिक प्रक्रियाओं का सामाजिक शक्तियों की अन्तःक्रिया से गहरा सम्बन्ध स्वीकार करने लगे है। अब तुलनात्मक राजनीति के लेखक, उन सब सामाजिक संस्थाओं, शक्तियों तथा परम्परागत बन्धनों का, जो राजनीतिक व्यवस्था पर दबाव या प्रभाव डालते हैं, अध्ययन राजनीतिक दृष्टिकोण से करते हैं। ऐसी स्थिति में राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति सामाजिक सन्दर्भ में ही सही रूप में समझी जा सकती है।

(6) व्यवहारवादी अध्ययन उपागम **(Behavioural Approach of Study) :** आधुनिक तुलनात्मक राजनीति की सबसे प्रमुख विशेषता व्यवहारवादी अध्ययन दृष्टिकोण को स्वीकार करना है। व्यवहारवाद राजनीतिक तथ्यों की व्याख्या एवं विश्लेषण को राजनीतिक व्यवहार पर केन्द्रित करता है। राजनीतिक व्यवहार के अध्ययन से यह राजनीति उसकी संरचनाओं प्रक्रियाओं आदि के बारे में वैज्ञानिक व्याख्यायें प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। दूसरी ओर इसमें अन्तर अनुशासनात्मक शोध एवं विश्लेषण पर बल दिया जाता है। यह अनुभवात्मक एवं क्रियात्मक है तथा इसमें व्यक्तिनिष्ठ मूल्यों, मानकीय विवरणों, कल्पनाओं आदि का स्थान नहीं है। इस दृष्टि से यह आधुनिक तुलनात्मक राजनीति को अधिक वैज्ञानिक बनाता है तथा परम्परागत राजनीति को सर्वथा अलग कर देता है।

2.10 आधुनिक तुलनात्मक राजनीति की आलोचना (Crititism of Modern Comparative Politics)

(1) विषय-क्षेत्र में अत्याधिक दुःसाध्य **(Unwidely in Scope) :** राजनीतिक व्यवहार की समस्त क्रियाओं को अध्ययन में सम्मिलित करना ज्ञान की वर्तमान सीमाओं में सम्भव नहीं है। वास्तव में तुलनात्मक राजनीति एक ऐसी दुविधा के दौर से गुजरती हुई दिखाई देती है जिसमें एक ओर विषय-क्षेत्र को सीमित रखना आवश्यक लगता है जबकि दूसरी ओर नये-नये आयामों व अध्ययन दृष्टिकोणों को अपनाना राजनीतिक व्यवहार की उलझी हुई गुत्थियों को सुलझाने के लिए अनिवार्य हो जाता है। इससे आधुनिक तुलनात्मक राजनीति का विषय-क्षेत्र इतना व्यापक एवं दुःसाध्य बन गया है कि आलोचक उसको व्यवस्थित ढंग से समझना सम्भव नहीं मानते। हाल के वर्षो में डेविड ऐप्टर, जीन ब्लोंडेल, एम. ई. फाइनर, आमण्ड एवं कोलमैन तथा राबर्टस इत्यादि लेखक इसके विषय क्षेत्र को शासन तन्त्र एवं राजनीतिक व्यवस्था की परिधि में सीमित करने की बात करने लगे हैं।

(2) नयी अवधारणाओं की अस्पष्टता **(Vagueness of New Concerpts) :** आलोचकों का कहना है कि आधुनिक तुलनात्मक राजनीति में नई अवधारणाओं जैसे राजनीतिक व्यवस्था, राजनीतिक संस्कृति, सामाजीकरण, राजनीतिक विकास, इत्यादि पर इतना अर्थ विभेद है कि हर विद्वान इनका अपने ढंग से अर्थ निकालने का प्रयास करता है। नयी अवधारणाओं की अस्पष्टता के कारण आधुनिक तुलनात्मक राजनीति की उपादेयता शंका के घेरे में बनी हुई है। यदि तुलनात्मक राजनीति को स्वतन्त्र अनुशासन के दायरे में लाना हैतो इसके लिए सर्वमान्य एवं समान अर्थी अवधारणाओं की रचना करनी होगी।

(3) व्यवहारवादी अध्ययन पर अधिक बल **(Excessively Behavioural) :** आधुनिक तुलनात्मक राजनीति व्यवहारवादी उपागमों पर अत्यधिक बल देती है। आलोचकों के अनुसार, व्यवहारवाद ने तुलनात्मक राजनीति को अत्यधिक नुकसान पहुँचाया है। इसकी सबसे बड़ी कमजोरी उसकी मूल्य निरपेक्षता है जिसे अर्नाल्ड ब्रेख्त ने बीसवीं सदी की दुखान्त घटना कहा है। पुनः व्यवहारवाद आनुभाविक तथ्यों एवं आँकड़ों को इतना अधिक महत्व देता है कि अन्य तथ्य गौण हो जाते हैं। इसने तुलनात्मक राजनीति के विषय-क्षेत्र को ही दिग्भ्रमित कर दिया है।

अभ्यास प्रश्न

१. तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के कितने उपागम हैं ?
२. तुलनात्मक राजनीति के जनक किसे माना जाता है ?

2.11 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त यह जानने में सफलता मिली कि यद्यपि परम्परागत तुलनात्मक राजनीति का अध्ययन बदली हुई राजनीतिक परिस्थितियों एवं प्रक्रियाओं को समझने में सहायक नहीं रहा फिर भी विषय की दृष्टि से उनके योगदान को हम नजर अंदाज नहीं कर सकते। इस दृष्टिकोण के माध्यम से राजनीति के अनेक तथ्य संकलित किये गये जो बाद में राजनीतिक विश्लेषण का आधार बिन्दु बने। इस अध्ययनों में राजनीतिक व्यवस्थाओं की जटिलता का आभास मिला, जो अंततः आधुनिक राजनीतिक विश्लेषण में सहायक बना। एलेन बाल के शब्दों में, ‘‘परम्परागत

राजनीतिक विद्वानों द्वारा खड़े किये गये विचारों के महल चाहे कितनी ही कमजोर बुनियाद पर क्यों न हों, उनकी कृतियों द्वारा ही हमें सर्वप्रथम तुलनात्मक सरकार के बारे में जानकारी होती है।''[13]

आधुनिक तुलनात्मक राजनीति की सबसे प्रमुख विशेषता व्यवहारवादी अध्ययन दृष्टिकोण को स्वीकार करना है। व्यवहारवाद राजनीतिक तथ्यों की व्याख्या एवं विश्लेषण को राजनीतिक व्यवहार पर केन्द्रित करता है। राजनीतिक व्यवहार के अध्ययन से यह राजनीति उसकी संरचनाओं प्रक्रियाओं आदि के बारे में वैज्ञानिक व्याख्यायें प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। दूसरी ओर इसमें अन्तर अनुशासनात्मक शोध एवं विश्लेषण पर बल दिया जाता है। यह अनुभवात्मक एवं क्रियात्मक है तथा इसमें व्यक्तिनिष्ठ मूल्यों, मानकीय विवरणों, कल्पनाओं आदि का स्थान नहीं है। इस दृष्टि से यह आधुनिक तुलनात्मक राजनीति को अधिक वैज्ञानिक बनाता है तथा परम्परागत राजनीति को सर्वथा अलग कर देता है।

2.12 शब्दावली

ऐतिहासिक विश्लेषण: इतिहास के सांदर्भिक प्रमाण का अध्ययन करना और उसे समझने का प्रक्रिया

संस्थागत अध्ययन: संस्थाओं की संरचना, क्रिया, और प्रभाव का अध्ययन।

मानक विश्लेषण: विशेष मानकों या मापदंडों की आधारित विश्लेषण।

2.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. 2 , 2. अरस्तू

2.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Ecksten and After (Eds.) Comparative Politics: A Reader, Free Press, New York, (1963) p.3.

2. R.C. Macridis, A Survey of the field of Comparative Government' in Jean Blondel, Comparative Government, p. XI.

3.डॉ. सी. बी. गेना, पूर्वोक्त, 86-87.

4.सी. बी. गेना, पूर्वोक्तए 88-91.

5.डॉ. सी. बी. गेना, पूर्वोक्त, 115-127

6.Jean Blondel, Comparative Government : A Reader, (1969), pp.19.

7.Roy C. Macridas, The Study of Comparative Government, Roulbday, New Yark (1955) p.7

8.Eckstein and After, Comparative Politics, A Reader Free Press, New York. 1963,p.3.

9.R.C. Macridis, Op. cit. p. 9.

10.Almond and Powell, Comparative Politics : A Developmenental Approach, Little Brown, Boston (1966), p.2.

11.Roy C. Macridis, Op. cit. p.7.

12.Almond and Powell, Op. cit. p.3.

13. Almond and Powell, Op. cit. p.3.

2.15 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.कम्पेरेटिव पॉलिटिक्सः ए डेवलेपमेन्टल एप्रोच, ऑमण्ड एवं पॉवेल

2.कम्यूनिकेशन एण्ड पॉलिटिकल डेवलेपमेन्ट, लूसियन पाई

3.मॉडर्न पॉलिटिकल थ्योरी, एस0 पी0 वर्मा

2.16 निबन्धात्मक प्रश्न

1. परम्परागत तुलनात्मक राजनीति के विशेषताओं की विवेचना कीजिये |

2. तुलनात्मक राजनीति के आधुनिक उपागम की विशेषताओं की विवेचना कीजिये |

इकाई-3 संविधान, संवैधानिक सरकार

इकाई की रुपरेखा

3.0 प्रस्तावना

3.1 उद्देश्य

3.2 संविधान की आवश्यकता

3.3 संविधान का अर्थ और परिभाषा

3.4 संविधान का विकास

3.5 संविधानों का वर्गीकरण

- 3.5.1 उत्पत्ति के आधार पर
- 3.5.2 संविधान में प्रथाओं और कानूनों के अनुपात के आधार पर
- 3.5.3 संविधान में संशोधन के आधार पर

3.6 संवैधानिक सरकार

3.7 अभ्यास प्रश्न

3.8 सारांश

3.9 शब्दावली

3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

3.13 निबंधात्मक प्रश्न

3.0 प्रस्तावना

इस बात के ऐतिहासिक प्रमाण हैं कि जब राज्य का उद्भव हुआ या यह कहा जाये कि जब मनुष्य ने संगठित रुप से रहना प्रारम्भ किया अर्थात राज्य रुपी संस्था, अपने अनगढ़ रुप में ही सही, अस्तित्व में आयी उसी के साथ ही राज्य व जनता के आपसी रिश्तों को संचालित करने के लिए कुछ नियमों को लिखित अथवा अलिखित रुप में स्वीकार किया गया। जिसे संविधान का प्राचीनतम रुप माना जा सकता है। इस बात की पुष्टि इस ऐतिहासिक तथ्य से की जा सकती है कि आज से लगभग ढ़ाई हजार वर्ष पूर्व यूनानी राजनीतिक विचारक अरस्तु ने 158 राज्यों के संविधानों का तुलनात्मक अध्ययन कर संविधानों के वर्गीकरण का प्रथम प्रयास किया था।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पठने के उपरान्त आप-

1. संविधान, उसकी परिभाषा उसकी आवश्यकता और संविधानों के वर्गीकरण के विषय में जान पायेंगे।

2. संवैधानिक सरकार के बारे में जान पायेंगे।

3. संविधान के विकास को जान पायेंगे।

3.2 संविधान की आवश्यकता

किसी भी देश में निम्न कारणों से संविधान की आवश्यकता होती हैः-

1. शासन की शक्तियों को संविधान द्वारा ही सीमित किया जा सकता है।

2. राजतंत्र और कुलीन तंत्रीय शासनों में अत्याचारों के अनुभवों ने संविधान की आवश्यकता को स्पष्ट कर दिया है।

3. व्यक्ति और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए भी संविधान आवश्यक है।

4. वर्तमान और भावी पीड़ी की स्वेच्छा पर नियंत्रण के लिए संविधान आवश्यक है।

3.3 संविधान का अर्थ और परिभाषाएँ

संविधान अंग्रेजी शब्द 'कान्स्टीट्यूशन' का हिन्दी रूपान्तर है। जिस प्रकार मानव शरीर के संदर्भ में कान्स्टीट्यूशन का अर्थ शरीर के ढॉचे व गठन से होता है, उसी प्रकार राजनीति विज्ञान में 'कान्स्टीट्यूशन' का तात्पर्य राज्य के ढॉचे तथा संगठन से होता है। अतः राज्य के संविधान में राज्य की सरकार के विभिन्न अंगो, उनके संगठन व शक्तियों, जनता के अधिकारों आदि का उल्लेख रहता है। राज्य का रूप चाहे किसी भी प्रकार का हो, आवश्यक रूप से उसका एक संविधान होता है। आवश्यक नहीं है कि संविधान लिखित ही हो। आवश्यक यह है कि कुछ ऐसे नियमों का अस्तित्व हो, जिनके द्वारा देश की शासन-व्यवस्था के ढॉचे को निर्धारित किया जा सके और सरकार की कार्यप्रणाली के विषय में जाना जा सके।

राज्य के लिए संविधान की अनिवार्यता बतलाते हुए जैलीनेक ने कहा कि ''संविधानहीन राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती, संविधान के अभाव में राज्य, राज्य न होकर एक प्रकार की अराजकता होगी''। इसी प्रकार शुल्टज कहते हैं कि ''राज्य कहलाने का अधिकार रखने वाले हर समाज का संविधान अवश्य होना चाहिए, अर्थात ऐसे सिद्धान्तों की संहिता होनी चाहिए जो सरकार और प्रजा के संबंध निश्चित करें और जिनके अनुसार राज्य अपनी शक्ति का प्रयोग करें।'' यह एक वैधानिक उपकरण है जिसे भिन्न नामों जैसे-राज्य के नियम, शासन का उपकरण, देश का मौलिक कानून, राज्य व्यवस्था का आधारभूत-विधान, राष्ट्र-राज्य की आधारशिला आदि से भी जाना जाता है। किन्तु इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त शब्दावली 'संविधान' ही है।

परिभाषाएँ

गिलक्राइस्ट के अनुसार ''संविधान उन लिखित या अलिखित नियमों अथवा कानूनों का समूह होता है जिनके द्वारा सरकार का संगठन, सरकार की शक्तियों का विभिन्न अंगों में वितरण और इन शक्तियों के प्रयोग के सामान्य सिद्धान्त निश्चित किये जाते हैं।''

डायसी के अनुसार ''संविधान उन समस्त नियमों का संग्रह है जिनका राज्य की प्रभुत्व सत्ता के प्रयोग अथवा वितरण पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है।''

वूल्जे के अनुसार ''संविधान नियमों के उस समूह को कहते हैं जिसके अनुसार सरकार की शक्तियों, शासितों के अधिकारों और इन दोनों के पारस्परिक संबंधों के विषय में सामंजस्य स्थापित किया जाता हैं।''

फाइनर के अनुसार ''संविधान आधारभूत राजनीतिक संस्थाओं की व्यवस्था होती है।''

गैटिल के अनुसार ''वे मौलिक सिद्धान्त, जिनके द्वारा किसी राज्य का स्वरूप निर्धारित होता है, संविधान कहलाता है।''

ब्राइस के अनुसार ''संविधान ऐसे निश्चित नियमों का एक संग्रह होता है, जिनमें सरकार की कार्य-विधि प्रतिपादित होती है और जिनके द्वारा उसका संचालन होता है।''

चार्ल्स बर्गेन्ड के अनुसार ''संविधान एक आधारभूत कानून होता है, जिसके द्वारा किसी राज्य की सरकार संगठित की जाती है और जिसके अनुसार व्यक्तियों अथवा नैतिक नियमों का पालन करने वाले मनुष्य तथा समाज के पारस्परिक संबंध निर्धारित किये जाते है।''

3.4 संविधान का विकास

'संविधान' के निर्माण के संदर्भ में पूर्णतः यह नहीं कहा जा सकता कि इसका निर्माण एक निश्चित समय में विचार-विमर्श करके किया गया है। संविधान को चाहे कितना ही विचार-विमर्श करके बनाया जाए, लेकिन यह अपनी प्रकृति से विकास का परिणाम है। इसके विकास में कई महत्वपूर्ण तत्व सहायक होते हैं।

1. प्रथाएँ और परम्पराएँ प्रथाओं और परम्पराओं ने संविधान के विकास को दिशा दी है। ग्रेट ब्रिटेन का संविधान तो अधिकांशतः प्रथाओं और परम्पराओं के द्वारा ही निर्मित है, परन्तु अन्य देशों के संविधानों जैसे संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, भारत, स्विट्जरलैण्ड आदि को भी प्रथाओं और परम्पराओं से प्रभावित देखा जा सकता है। प्रथाएँ और परम्पराएँ मानव सभ्यता के विकास से हैं, जिनके साथ व्यक्ति भावनात्मक रूप से जुड़ा है। संविधान के निर्माण/विकास के बाद भी व्यक्ति ने अपनी प्रथाओं और परम्पराओं के साथ जीना नहीं छोड़ा, जिस कारण संविधान के विकास में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

2. न्यायाधीशों के निर्णय न्यायाधीशों के द्वारा संविधान के विभिन्न उपबन्धों के संबंध में दिए गये निर्णयों और व्याख्याओं से भी संविधान के विकास को गति मिलती है। भारत एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधानों में इसे देखा जा सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के विषय में तो यहॉ तक कहा जाता है कि ''संविधान वही है, जो न्यायाधीश कहते हैं।''

3. संशोधन प्रक्रिया संविधान में संशोधन के लिए जो संशोधन विधि वर्णित होती है उसके आधार पर संविधान में बहुत से संशोधन समय-समय पर होते रहते हैं। संविधान में संशोधनों के माध्यम से कई देशों ने मौलिक अधिकारों को संविधान का महत्वपूर्ण अंग बना दिया है। अतः संशोधन प्रक्रिया के माध्यम से भी संविधान के विकास का मार्ग प्रशस्त होता है।

संविधान का विकास इस आधार पर होना चाहिए कि उसमें समय-समय पर आने वाली परिस्थितियों से निपटने की क्षमता होनी चाहिए।

3.5 संविधानों का वर्गीकरण

संविधानों का तीन आधारों पर वर्गीकरण किया जा सकता है-

3.5.1 उत्पत्ति के आधार पर

उत्पत्ति के आधार पर संविधान दो प्रकार के होते है-विकसित और निर्मित संविधान

विकसित संविधान विकसित संविधान वे हैं, जिनका निर्माण संविधान-सभा जैसी किसी संस्था द्वारा निश्चित समय पर नहीं किया जाता वरन् ये संविधान विभिन्न परम्पराओं, रीति-रिवाजों, प्रथाओं और न्यायालयों के निर्णय पर आधारित होता हैं। इग्लैण्ड का संविधान विकसित संविधान का श्रेष्ठ उदाहरण है। वहॉ राजा, मंत्रिपरिषद, संसद अथवा अन्य राजनैतिक संस्थाओं की शक्ति और उनके अधिकार क्षेत्र आदि लेखबद्ध नहीं है तथा न उनसे संबंधित नियमों का एक समय निर्माण किया गया है। वस्तुतः ब्रिटिश संविधान का वर्तमान स्वरूप उसके पन्द्रह सौ वर्षो के संवैधानिक विकास का परिणाम है। इसी कारण प्रो0 मुनरो ने लिखा है कि 'ब्रिटिश-संविधान कोई पूर्णतया प्राप्त वस्तु न होकर एक विकासशील वस्तु है। यह बुद्धिमता और संयोग की सन्तान है जिसका मार्गदर्शन कहीं आकस्मिकता और कहीं उच्चकोटि की योजनाओं ने किया है।

निर्मित संविधान वे संविधान होते हैं, जिनका निर्माण एक विशेष समय पर संविधान सभा जैसी किसी विशेष संस्था के द्वारा किया जाता है। निर्मित-संविधान स्वाभाविक रूप से लिखित होते हैं और साधारणतया कठोर भी। 'अमेरिका' का संविधान विश्व का प्रथम निर्मित संविधान है, जिसे सन् 1787 ई0 के फिलाडेल्फिया सम्मेलन में निर्मित किया गया था। स्विट्जरलैण्ड का संविधान भी निर्मित है, जिसका प्रारूप 1848 में 14 सदस्यों के एक आयोग द्वारा तैयार किया गया था और इस प्रारूप में 1874 में व्यापक परिवर्तन किये गये। भारत के संविधान को संविधान-सभा ने लगभग तीन वर्षों (9 दिसम्बर 1946 से 26 नवम्बर 1949) के परिश्रम के बाद तैयार किया किन्तु यह लागू हुआ 26 जनवरी 1950 से। 1982 का नया चीनी संविधान भी निर्मित संविधानों की श्रेणी में आता है, जिसका निर्माण विशेष रूप से नियुक्त की गयी एक समिति तथा जनवादी-कांग्रेस ने किया। उपयुक्त विकसित तथा निर्मित संविधानों के अपने-अपने गुण-दोष भी देखने को मिलते हैं- जैसे विकसित संविधान में गतिशीलता होने की विशेषता है। यह लोगों की आवश्यकताओं तथा आंकाक्षाओं के अनुकूल सदा परिवर्तन की प्रक्रिया में रहता है, परन्तु दोष इसका यह है कि ये असंख्य अलग-अलग व बिखरे हुए प्रपत्रों तथा राजनीतिक रीति-रिवाजों के रूप में रहता है। अतः इसमें निश्चितता नहीं होती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर टॉमस पैन जैसे एक अमरीकी विचारक तथा डी0टाकविले जैसे एक फ्रांसीसी इतिहासकार ने यह मत प्रकट किया कि 'इंगलैण्ड में कोई संविधान नही हैं।

इसके विपरीत निर्मित संविधान सर्वथा सुनिश्चित होता है। संहिताबद्ध रूप में होने के कारण यह सदा लोगों के लिए महान सुविधा का स्रोत होता है, परन्तु इग्लैण्ड के लोग इस तथ्य के बावजूद अपने संविधान पर गर्व करते हैं।

3.5.2 प्रथाओं और कानूनों के आधार पर

इस आधार पर दो प्रकार के संविधान होते हैं - लिखित संविधान व अलिखित संविधान

लिखित संविधान वे संविधान होते हैं, जिनके प्रावधान विस्तारपूर्वक लिखे होते है। अमेरिका, स्विट्जरलैण्ड, फ्रांस, रूस, जापान, चीन, भारत आदि देशों के संविधान लिखित-संविधानों के श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

अमेरिका का संविधान विश्व का प्रथम लिखित संविधान है, जिसमें केवल 4000 शब्द हैं, जो 10 या 12 पृष्ठों में मुद्रित हैं और जिन्हें आधे घण्टे में पढ़ा जा सकता है। यह विश्व के लिखित संविधानों में सर्वाधिक संक्षिप्त है। इसमें केवल 7 अनुच्छेद हैं। भारत का संविधान विश्व के लिखित संविधानों में सबसे विस्तृत हैं। इसमें कोई 90,000 शब्द हैं। भारतीय संविधान में 445 अनुच्छेद एवं 12 अनुसूचियॉं हैं। भारत के मूल संविधान में 395 अनुच्छेद व 8 अनुसूचियॉं थी। स्विस संविधान में 123 अनुच्छेद है, जो 3 अध्यायों में बॅंटा है। चीन के नये संविधान में एक प्रस्तावना तथा 138 अनुच्छेद हैं जो 4 अध्यायों में बॅंटा है।

अलिखित संविधान वे संविधान होते हैं, जिसके लिखित प्रावधान बहुत संक्षिप्त होते हैं तथा संविधान के अधिकांश नियमों का अस्तित्व व्यवहारों व प्रथाओं के रूप में होता है। ब्रिटेन का संविधान, अलिखित संविधान का सर्वोत्तम उदाहरण है और अलिखित संविधान की व्यवस्था से ब्रिटेन को कोई हानि न होकर लाभ ही हुआ है।

3.5.3 संविधान में संशोधन के आधार पर

इस आधार पर संविधान के दो भेद हैं - लचीला संविधान और कठोर संविधान।

लचीला संविधान यदि सामान्य कानून और संवैधानिक कानून के बीच कोई अन्तर न हो और संवैधानिक कानून में भी सामान्य कानून के निर्माण की प्रक्रिया से ही संशोधन-परिवर्तन किया जा सके, तो संविधान को लचीला या परिवर्तनशील कहा जायेगा। गार्नर के शब्दों में लचीला संविधान वह है जिसको साधारण कानून से अधिक शक्ति एवं सत्ता प्राप्त नहीं है और जो साधारण-कानून की भॉंति ही बदला जा सकता है, चाहे वह एक प्रलेख या अधिकांशत परम्पराओं के रूप में हो।'' लचीले संविधान के उदाहरण स्वरूप हम इंग्लैण्ड के संविधान को ले सकते हैं। इग्लैण्ड में संसद, जिस प्रक्रिया द्वारा सड़क पर चलने के नियमों या मद्य-निषेध के नियमों में परिवर्तन करती है, बिल्कुल उसी प्रक्रिया के आधार पर संवैधानिक कानूनों में परिवर्तन कर सकती है। दूसरे शब्दों में ये दोनों काम संसद के साधारण बहुमत द्वारा सम्पन्न किये जा सकते हैं।

चीन का संविधान भी इसी श्रेणी में आता है क्योंकि इसमें साधारण कानून निर्माण प्रक्रिया से ही संशोधन किया जा सकता है। संविधान के अनुच्छेद 64 में संशोधन की प्रक्रिया वर्णित है। संविधान में संशोधन का प्रस्ताव राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की स्थायी समिति द्वारा या राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के 1/5 सदस्यों द्वारा रखा जाना चाहिए तथा यह प्रस्ताव राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के कुल सदस्यों के 2/3 बहुमत से स्वीकृत होना चाहिए।

ज्ञातव्य है कि चीन की राष्ट्रीय-जनवादी कांग्रेस विश्व का सबसे बड़ा एकसदनात्मक विधायी सदन है क्योंकि इसके सदस्यों की उपस्थिति नये संविधान (1982) को स्वीकृत करते समय 3,037 थी।

कठोर संविधान से अभिप्राय उस संविधान से है जिसमें संशोधन के लिये किसी विशेष प्रक्रिया को प्रयुक्त किया जाता है। कठोर-संविधान में संवैधानिक एवं साधारण कानून में मौलिक भेद समझा जाता है तथा इसमें संवैधानिक कानूनों में संशोधन-परिवर्तन के लिए साधारण कानूनों के निर्माण से भिन्न प्रक्रिया, जो साधारण कानून के निर्माण की पद्धति से कठिन होती है, अपनाना आवश्यक होता है। सरल शब्दों में व्यवस्थापिका जिस विधि अथवा प्रक्रिया से साधारण

कानूनों को पारित करती है, उसी विधि से संविधान में संशोधन नहीं कर सकती है। कठोर संविधान के उदाहरण स्विट्जरलैण्ड, आस्ट्रेलिया, रूस, इटली, फ्रांस, डेनमार्क, स्वीडन, नार्वे, जापान तथा भारत के संविधान हैं। किन्तु इसका सबसे अच्छा उदाहरण संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान है। वहॉ पर संविधान में संशोधन के लिए कांग्रेस (प्रतिनिधि सभा 435, सीनेट 100) के 2/3 बहुमत तथा 3/4 राज्यों के विधानमण्डलों की स्वीकृति आवश्यक हैं। इसी का परिणाम यह हुआ है कि 211 वर्षो में केवल 26 संशोधन किये जा सके हैं। यहॉ यह सूच्य है कि अमेरिका में संविधान के अनुच्छेद 5 में संशोधन प्रक्रिया वर्णित है।

स्विट्जरलैण्ड के संविधान में संशोधन की प्रक्रिया भारत से जटिल है किन्तु अमेरिका की तुलना में कम कठोर है। संविधान में संशोधन का प्रस्ताव स्विस व्यवस्थापिका (संघीय सभा) के दोनों सदनो (राष्ट्रीय परिषद 200 एवं राज्य परिषद 44) के बहुमत द्वारा पास होना चाहिए और उसके बाद उसका समर्थन मतदाताओं तथा कैन्टनों (राज्य) के बहुमत से होना चाहिए।

3.6 संवैधानिक सरकार

संविधानिक सरकार से तात्पर्य ऐसी सरकार से है जो संविधान की व्यवस्थाओं के अनुसार गठित, नियंत्रित व सीमित हो तथा व्यक्ति विशेष की इच्छाओं के स्थान पर विधि के अनुरुप ही संचालित होती हो। सामान्यतया ऐसा समझा जाता है कि जिस राज्य में संविधान हो वहॉ संवैधानिक सरकार भी होती है। हर राज्य में किसी न किसी प्रकार का संविधान तो होता ही है पर संविधानिक सरकार भी हो ऐसा आवश्यक नहीं है। हिटलर व स्तालिन के समय जर्मनी व रुस में संविधान तो थे पर संवैधानिक सरकारें भी थी ऐसा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि इन देशों का राजनीतिक आचरण संविधान पर आधारित न होकर व्यक्ति या राजनीतिक दल की महत्वाकांक्षाओं पर आधारित थी। संवैधानिक सरकारें विधि के अनुरुप व लोक कल्याण पर आधारित होती हैं। अतः राज्य में केवल संविधान का हेना मात्र सरकार को संवैधानिक नहीं बनाता है। केवल वही सरकार संवैधानिक सरकार कही जायेगी जो संविधान पर आधारित हो। संविधान द्वारा सीमित व नियंत्रित हो व निरंकुशता के स्थान पर विधि के अनुरुप ही संचालित हो।

अभ्यास प्रश्न-

1. ‘‘संविधानहीन राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती, संविधान के अभाव में राज्य, राज्य न

होकर एक प्रकार की अराजकता होगी’’। यह कथन किसका है?

क. जैलीनेक ख. शुल्टज ग. डायसी घ. गिलक्राइस्ट

2. संविधान की यह परिभाषा किसने दी ‘‘संविधान ऐसे निश्चित नियमों का संग्रह होता है जिसमें सरकार की कार्य-विधि प्रतिपादित होती है और जिसके द्वारा उसका संचालन होता है।‘‘

क. फाइनर ख. बूल्जे ग. ब्राइस घ. डायसी

3. विश्व का प्रथम लिखित संविधान है?

क. भारत का संविधान ख. ब्रिटेन का संविधान ग. फ्रॉस का संविधान घ.अमेरीका का संविधान

4. डायसी का यह कथन कि ''संविधान उन समस्त नियमों का संग्रह है जिसका राज्य की प्रभुत्व सत्ता के प्रयोग अथवा वितरण पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रुप से प्रभाव पड़ता है''।

सत्य/असत्य

5. डी0 टाकविले का कथन कि 'इंलैण्ड में संविधान जैसी कोई चीज नहीं है।' सत्य/असत्य

6. अमेरीकी संविधान विश्व का प्रथम.....संविधान है।

7. लिखित संविधानों में विश्व का सबसे विस्तृत संविधान.....का संविधान है।

3.7 सारांश

निष्कर्षतः, संविधान और संवैधानिक सरकार राष्ट्रों की राजनीतिक प्रणालियों को आकार देने और नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संविधान मौलिक कानूनी ढांचे के रूप में कार्य करते हैं जो सरकार के सिद्धांतों, संरचनाओं और शक्तियों को स्थापित करते हैं, जबकि संवैधानिक सरकारें कानून का शासन सुनिश्चित करती हैं और शक्ति के दुरुपयोग को रोकती हैं।

संविधान लोकतांत्रिक शासन के लिए एक आधार प्रदान करते हैं, पारदर्शिता, जवाबदेही और शक्तियों के पृथक्करण को बढ़ावा देते हैं। वे व्यक्तियों के अधिकारों और जिम्मेदारियों को रेखांकित करते हैं, सरकारी संस्थानों की संरचना को परिभाषित करते हैं, और संघर्षों के शांतिपूर्ण समाधान के लिए तंत्र स्थापित करते हैं। अधिकार के प्रयोग पर स्पष्ट सीमाएँ निर्धारित करके, संविधान अधिनायकवाद और अत्याचार के विरुद्ध ढाल के रूप में कार्य करता है।

इसके अलावा, संवैधानिक सरकारें व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करने और मानवाधिकारों को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक हैं। संविधान मौलिक स्वतंत्रता जैसे भाषण, सभा और धर्म की स्वतंत्रता को सुनिश्चित करता है, यह सुनिश्चित करता है कि नागरिक प्रतिशोध के डर के बिना खुद को अभिव्यक्त कर सकें। वे अल्पसंख्यक अधिकारों की सुरक्षा के लिए तंत्र भी स्थापित करते हैं, समाज के सभी सदस्यों के लिए समान व्यवहार और प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करते हैं।

हालाँकि, संवैधानिक सरकार की प्रभावशीलता अंततः सरकार और लोगों दोनों की प्रतिबद्धता और पालन पर निर्भर करती है। इसके लिए एक सुविज्ञ और समर्पित नागरिक वर्ग की आवश्यकता है जो लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग ले, कानून के शासन को कायम रखे और अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों को जवाबदेह बनाए। इसके अलावा, संवैधानिक प्रणालियों को बदलते सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिदृश्य को प्रतिबिंबित करते हुए, समाज की उभरती जरूरतों और आकांक्षाओं के अनुरूप होना चाहिए।

3.8 शब्दावली

1. संक्षिप्त- छोटा/आकार में कम

2. अवधारणा- विचार/विचारधारा

3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न-

1. क. जैलीनेक 2. ग. ब्राइस 3. घ. अमेरीकी संविधान 4. सत्य 5. सत्य 6. निर्मित 7. भारत

3.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

आधुनिक तुलनात्मक राजनीति- पीटर एच0 मार्कल

राजनीति विज्ञान एक परिचय- पिनांक एवं स्मिथ

संवैधानिक सरकारें और लोकतंत्र- कार्ल जे0 फ्रैडरिक

तुलनात्मक राजनीति एंव राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी0 गैना

3.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक राजनीति एंव राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी0 गैना

2. आधुनिक सरकारें- सिद्धान्त एंव व्यवहार- डॉ0 पुष्पेश पाण्डे, डॉ0 विजय प्रकाश पंत एंव घनश्याम जोशी

3.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. संविधानवाद का अर्थ एंवम परिभाषा बतलाते हुए संविधानों के वर्गीकरण को स्पष्ट करें।

2. संविधान की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए संविधान के विकास की व्याख्या करें।

3. संवैधानिक सरकार व संविधानवाद की व्याख्या करें।

इकाई- 4 संविधानवाद- पाश्चात्य एवं मार्क्सवाद

इकाई की रूप रेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 संविधानवाद का अर्थ और परिभाषा

4.4 संविधानवाद की अवधारणाएं

4.4.1 संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा

4.4.2 संविधानवाद की साम्यवादी अवधारणा

4.4.3 संविधानवाद की विकासशील लोकतांत्रिक अवधारणा

4.5 संविधानवाद के प्रमुख तत्व

4.6 संविधानवाद की विशेषताएं

4.7 अभ्यास प्रश्न

4.8 सारांश

4.9 शब्दावली

4.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.12 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामाग्री

4.13 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना:

संविधानवाद अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह एक न्यायपूर्ण समाज के लिए आवश्यक सिद्धांतों और रूपरेखा को स्थापित करता है। यह सुनिश्चित करता है कि एक राष्ट्र कानून के शासन द्वारा शासित हो, व्यक्तियों को मनमाने निर्णयों से बचाए और निष्पक्षता और समानता को बढ़ावा दे। संविधानवाद मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रता की भी रक्षा करता है, कानूनी सुरक्षा प्रदान करता है और उन अधिकारों के किसी भी उल्लंघन को चुनौती देने का साधन प्रदान करता है। संविधानवाद लोकतंत्र के संरक्षण, व्यक्तिगत अधिकारों की सुरक्षा और एक न्यायपूर्ण और सामंजस्यपूर्ण समाज की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण है।

4.2 उद्देश्य:

1. संविधनवाद की विभिन्न अवधारणाओं को जान पायेंगे।

2. संविधानवाद के तत्वों को जान पायेंगे।

3. संविधानवाद की विशेषताओं का अध्ययन कर पायेंगे।

4.3 संविधानवाद का अर्थ:

संविधानवाद एक आधुनिक विचारधारा है जो विधि द्वारा नियन्त्रित राजनीतिक व्यवस्था की स्थापना पर बल देती है। संविधानवाद एक राजनीतिक दर्शन और सरकार की प्रणाली को संदर्भित करता है जो देश के मौलिक कानून के रूप में संविधान के पालन पर जोर देता है। इसमें सरकार की शक्तियों को सीमित करने और यह सुनिश्चित करने में विश्वास शामिल है कि उन शक्तियों का प्रयोग संविधान के ढांचे के भीतर किया जाता है जो व्यक्तियों के अधिकारों और जिम्मेदारियों, सरकारी संस्थानों की संरचना और कार्यों, और कानून बनाने और लागू करने के सिद्धांतों और प्रक्रियाओं को स्थापित करता है।

एक संवैधानिक प्रणाली में, संविधान एक सर्वोच्च कानूनी दस्तावेज के रूप में कार्य करता है जो नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रता को रेखांकित करता है, सरकारी प्राधिकरण के प्रयोग के लिए पैरामीटर निर्धारित करता है, और सरकार की विभिन्न शाखाओं (जैसे कि) के बीच शक्तियों के पृथक्करण के लिए रूपरेखा स्थापित करता है। कार्यकारी, विधायी और न्यायिक शाखाएँ)। यह सत्ता की एकाग्रता को रोकने और सरकार द्वारा दुरुपयोग से बचाने के लिए जांच और संतुलन की एक प्रणाली प्रदान करता है।

संविधानवाद पर विद्वानों ने अपने- अपने विचार व्यक्त किये हैं -

(1) पिनॉक व स्मिथ ''संविधानवाद उन विचारों की ओर संकेत करता है जो संविधान का विवेचन व समर्थन करते हैं तथा जिनके माध्यम से राजनीतिक शक्ति पर प्रभावी नियंत्रण स्थापित करना सम्भव होता है।''

(2) पीटर एच0 मार्क ''संविधानवाद का तात्पर्य सुव्यवस्थित और संगठित राजनीतिक शक्ति को नियंत्रण में रखना है।''

(3) कार्ल जे0 फ्रैरडरिक ''शक्तियों का विभाजन सभ्य सरकार का आधार है, यही संविधानवाद है।''

(4) कॉरी और अब्रॉहम ''स्थापित संविधान के निर्देशों के अनुरुप शासन को संविधानवाद कहते हैं।''

(5) जे0 एस0 राउसेक ''धारणा के रुप में संविधानवाद का अर्थ है कि यह अनिवार्य रुप से सीमित सरकार तथा शासित तथा शासन के ऊपर नियंत्रण की एक व्यवस्था है।''

(6) के0सी0 व्हीयर ''संवैधानिक शासन का अर्थ किसी शासन के नियमों के अनुसार शासन चलाने से अधिक कुछ नहीं है। इसका अर्थ है कि निंरकुश शासन के विपरीत नियमानुकूल शासन। केवल अधिकार का उपयोग करने वालों की इच्छा और क्षमता के अनुसार चलने वाला शासन नहीं बल्कि संविधान के नियमों के अनुसार चलने वाला शासन होता है।''

उपरोक्त परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर स्पस्ट होता है कि संविधानवाद सीमित शासन का प्रतीक है।

4.4 संविधानवाद की अवधारणाएँ

वर्तमान में संविधानवाद की तीन प्रचलित अवधारणाएँ है-

1. पाश्चात्य अवधारणा, जो लोकतांत्रिक पूँजीवादी राज्यों में विशेष रुप से प्रचलित है।
2. साम्यवादी अवधारणा, यह प्रायः साम्यवादी विचारधारा पर आधारित राज्यों में प्रचलित है।
3. विकासशील लोकतांत्रिक अवधारणा, यह उन राज्यों में अस्तित्व ग्रहण कर रही है, जो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद स्वतंत्र हुए है और प्रायः 'तृतीय विश्व' के नाम से जाने जाते है।

4.4.1 संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा

संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा को उदारवादी लोकतांत्रिक अवधारणा भी कहा जाता है। यहॉ साध्य 'व्यक्ति स्वतंत्रता' व साधन 'सीमित सरकार ' को माना गया है। एक प्रकार से यह 'राज्य व व्यक्ति' के बीच समन्वयात्मक व सहजीवी दृष्टिकाण को स्वीकार करता है। यहॉ व्यक्तिगत स्वच्छन्दता व राज्य-निरंकुशता दोनों को अस्वीकार किया गया है। किन्तु समन्वयवादी दृष्टिकोण के बावजूद राज्य शक्ति को संस्थात्मक व प्रक्रियात्मक प्रतिबंधों के आधार पर नियंत्रित करने पर अधिक बल दिया गया है। चूकि उदारवादी लोकतंत्र का साध्य व्यक्ति है और साधन राज्य शक्ति, अतः यहॉ इस बात पर विशेष ध्यान दिया गया है कि साध्य पर साधन हावी न होने पाये। पाश्चात्य् अवधारणा इस साध्य की प्राप्ति हेतु निम्नांकित साधनों का प्रयोग करती है।

1. सीमित व उत्तरदायी सरकार- संविधानवाद का लक्ष्य चूकि व्यक्ति स्वतंत्रता की राज्य की निरकुंशता से रक्षा करना है। अतः संविधानवाद विविध माध्यमों से सरकार पर अंकुश आरोपित करता है। सरकार को सीमित क्षेत्र में ही अपने क्रियाकलापों को क्रियान्वित करने की इजाजत दी जाती है। साथ ही सरकार को उत्तरदायी बनाने पर जोर दिया जाता है। इन दो साधनों के द्वारा संविधानवाद के मूल लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास किया गया है।

2. विधि का शासन - सीमित सरकार के लक्ष्य प्राप्ति के लिए 'विधि का शासन' होना नितांत आवश्यक है। विधि के शासन से तात्पर्य है कि राज्य में व्यक्ति का शासन नही अपितु नियम कानून के द्वारा शासन होना चाहिए। विधि के

शासन का विचार यद्यपि काफी प्राचीन है, प्लेटो के ग्रंथ 'लॉज' व अरस्तु के 'पॉलिटिक्स ' में इसका प्रारम्भिक स्वरुप मिलता है, लेकिन आधुनिक युग में विधिवत रुप में इसकी स्थापना का श्रेय ब्रिटिश राजनीतिक विद्वान डायसी को जाता है। विधि के शासन में प्रायः दो बातों का समावेश किया जाता है- 1) विधि के समक्ष समानता 3. विधि का समान संरक्षण- पहली स्थिति का तात्पर्य है कि विधि की दृष्टि में राज्य का प्रत्येक व्यक्ति समान माना जायेगा, चाहे उसकी पद प्रतिष्ठा कुछ भी क्यों न हेा। विधि का उल्लेख करने पर समान दण्ड की व्यवस्था होगी। डायसी ने बड़े गर्व से इस बात को रखा था कि ब्रिटेन में विधि का शासन है वहॉ प्रधानमंत्री से लेकर कृषक तक सभी विधि के समक्ष समान है। संविधानवाद व्यक्ति के कल्याण की बात करता है और समानता के बिना यह सम्भव नही है अतः विधि के समक्ष समानता संविधानवाद का अनिवार्य लक्षण बन जाता है। जहॉ तक दूसरी स्थिति, 'विधि का समान संरक्षण' का सम्बन्ध है, यहॉ यह व्यवस्था है कि 'समानो के मध्य समानता'। अर्थात यदि किसी विशेष परिस्थिति में 'तर्कपूर्ण विभेद' किया जाता है तो वह स्वीकार्य होगा। किन्तु उल्लेखनीय है कि विभेद मनमाना या गैरतार्किक नहीं होना चाहिए।

3. मौलिक अधिकारों की व्यवस्था- संविधानवाद की पाश्चात्य् धारणा मौलिक अधिकारों की मांग करती है। प्रत्येक उदारवादी लोकंतात्रिक देश के संविधान में इनकी व्यवस्था को प्राथमिकता दी जाती है। इसके तहत् कई प्रकार के अधिकारों को लिया जाता है- स्वतंत्रता का अधिकार, जिसमें विचार, अभिव्यक्ति, अन्तःकरण, धर्म स्वीकारने की स्वतंत्रता, राजनीति में सहभागिता की स्वतंत्रता, आर्थिक क्षेत्र में स्वतंत्रता, आदि को प्रमुख रुप से लिया जाता है। इसी प्रकार समानता के अधिकार को स्थान दिया गया है। मौलिक अधिकारों की सूची भिन्न-भिन्न राष्ट्रों में भिन्न-भिन्न है। मौलिक अधिकारों को सर्वप्रथम सन् 1791 ई0 में प्रथम दस संशोधनों के द्वारा अमेरिकी संविधान में जगह दी गयी। उसके बाद जितने भी उदारवादी देशों में संविधान बने, लगभग सभी में मौलिक अधिकारों को स्थान दिया है।

4. स्वतंत्र व निष्पक्ष न्यायपालिका- न्याय की उचित व्यवस्था न होने पर मौलिक अधिकारों की व्यवस्था का कोई औचित्य नहीं रह जाता है। अतः संविधानवाद मौलिक अधिकारों के साथ स्वतंत्र व निष्पक्ष न्यायपालिका की माँग करता है। सरकार की निंरकुशता पर अंकुश लगाने व नागरिक अधिकारों की रक्षा करने के लिए निष्पक्ष न्यायपालिका की व्यवस्था होनी चाहिए। न्यायपालिका के महत्व को समझाते हुए पीटर एच0 मार्क ने कहा कि स्वतंत्र न्यायपालिका आधुनिक संवैधानिक सरकार के सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्ष्यों में से एक है। न्यायपालिका की निष्पक्षता व स्वतंत्रता बनाये रखने के लिए विभिन्न देशों में न्यायाधीशों की नियुक्ति, कार्यावधि, वेतन आदि के सम्बन्ध में ऐसे विशेष प्रावधान किये हैं। न्यायपालिका को न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार भी दिया जाता है। वस्तुतः जैसा कि कार्टर और हर्ज ने भी उल्लेख किया है, ''मूल अधिकार व स्वतंत्र न्यायपालिका प्रत्येक संविधानवाद की अनिवार्य विशेषता है।''

5. शक्ति पृथक्करण और शक्ति विभाजन- संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा का शक्ति पृथ्थककरण व शक्ति विभाजन में अटूट विश्वास है। शक्ति पृथ्थककरण से तात्पर्य है कि सरकार के तीनों अंगों -व्यवस्थापिका, कार्यपालिका व न्यायपालिका की शक्तियों को पृथक-पृथक हाथों में दिया जाना चाहिए। चूँकि यदि ये तीनों शक्तियॉ किसी एक के हाथ में पड़ जायेंगी तो सत्ताधारी की मनमानी होगी और उसकी स्वार्थपरता को बढावा मिलेगा और निश्चित रुप से ऐसे में व्यक्ति स्वतंत्रता खतरे में पड़ जायेगी। अतः शक्तियों के एक हाथ में जाने से रोकना संविधानवाद

की मुख्य मॉग है। दूसरी बात, संविधानवाद शक्तियों के विभाजन की मॉग भी करता है। अर्थात, शक्तियों को केन्द्र व राज्य या क्षेत्रीय स्तर पर वितरण किया जाता ताकि निम्न स्तर से उच्च स्तर तक शक्तियों का व्यक्तियों के अधिकतम कल्याण में प्रयोग किया जा सके। इस प्रकार शक्तियों का पृथ्थककरण, विभाजन व विकेन्द्रीकरण पाश्चात्य संविधानवाद की परम्परा का मुख्य अंग है।

6.नियत-कालिक व नियमित निर्वाचन व्यवस्था- राजनीतिक उत्तरदायित्व पाश्चात्य संविधानवाद का अनिवार्य तत्व है और उत्तरदायित्व निर्धारण का तरीका नियत कालिक व नियमित निर्वाचन व्यवस्था में ढूढा गया है। पाश्चात्य संविधानवाद 'लोकतंत्र' के आदर्श मे विश्वास करता है। लोकतंत्रात्मक व्यवस्था में व्यक्ति अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से अपनी राजनीतिक इच्छा को अभिव्यक्त करता है चूँकि वर्तमान में राज्यों का आकार बड़ा होने के कारण प्रधिनिधियात्मक लोकतंत्र को ही राज्यों ने अपनाया है। अतः प्रतिनिधि जिन वायदों के साथ संसद में प्रवेश करते हैं उनके प्रति प्रतिबद्ध रहें। इसके लिए केवल एकमात्र तरीका यही बचता है कि निश्चित समयावधि के बाद चुनाव हो। चुनाव नागरिकों के हाथ में वह हथियार है जिससे भय खाकर प्रत्येक सरकार नागरिकों के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझते हुए उनकी इच्छाओं और आवश्यकताओं के प्रति सजग और सचेत बनी रहती है। इस हथियार को प्रभावी तभी रखा जा सकता है जबकि चुनाव नियमित रुप से निश्चित अन्तराल के बाद होते रहें।

7.राजनीतिक दलों की उपस्थिति- संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा का विश्वास लोकतांत्रिक शासन पद्यति में है और लोकतंत्र के लिए राजनीतिक दल शरीर में रक्त के समान कार्य करते हैं। दो या दो से अधिक दल होना स्वयं में लोकतंत्र की परिपक्वता का परिचायक होते है यदि अन्य परिस्थितियॉ सामान्य हों। एकदलीय व्यवस्था में लोकतंत्र का औचित्य नहीं रह जाता है। वहॉ लोकतंत्र की आड़ में अधिनायकतंत्र का फैलता है। कई साम्यवादी देशों में ऐसा देखने में मिलता है। राजनीतिक दल सरकार को दिन-प्रतिदिन नियंत्रित रखकर सरकार की अहितकारी नीतिओं का विरोध करते है। प्रतिपक्ष सदैव सत्तापक्ष पर नियत्रंण बनाये रखता है, जो कि संविधानवाद की अनिवार्य मॉग है।

8. प्रेस की स्वतंत्रता- लोकतंत्र में प्रेस को शासन का चौथा स्तम्भ माना जाता है। प्रेस जनता को अपने विचार अभिव्यक्त करने का शक्तिशाली माध्यम प्रदान करती है। इसलिए पाश्चात्य संविधानवाद, प्रेस को अधिकाधिक स्वतंत्रता प्रदान करने का पक्षधर है। प्रेस की स्वतंत्रता से मात्र इतना तात्पर्य नहीं है कि किसी विषय पर हम अपने विचार सार्वजनिक कर पायें बल्कि प्रेस की वास्तविक स्वतंत्रता से तात्पर्य है कि 'सूचना प्राप्त करने' की स्वतंत्रता व सूचना तक पहुॅचने की स्वतंत्रता। इसे आज कई देशों ने 'सूचना का अधिकार' के रुप में स्वीकार कर लिया है। सूचना के अधिकार से व्यक्ति सरकार की नीतियों पर प्रत्यक्ष नजर रख सकता है और सरकार को उत्तरदायी बनने पर मजबूर कर सकता है।

9.सत्ता परिवर्तन हेतु संवैधानिक उपायों को स्वीकृति- संविधानवाद सत्ता परिवर्तन हेतु संवैधानिक उपायों को स्वीकृति प्रदान करता है। जनता के समक्ष विविध राजनीतिक दल होते हैं, उसे यह स्वतंत्रता है कि वह उस दल के पक्ष में मतदान करे जो उसके आदर्श कल्याण में सहायक हो, जिसकी नीतियों व कार्यविधियों से वह सहमत हो। संविधानवाद ने चुनावों को सत्ता परिवर्तन का संवैधानिक माध्यम घोषित किया है अतः सैनिक विद्रोह या अधिनायकी तांडव से सत्ता पर कब्जा करने के लिए यहॉ कोई स्थान नहीं है। कार्ल जे0 फ्रेडरिक लिखते है ''व्यवस्थित परिवर्तन की जटिल प्रक्रियात्मक व्यवस्था ही संविधानवाद है।'' सत्ता में शांतिपूर्वक परिवर्तन तभी सम्भव है जबकि नियतकालिक निर्वाचन होगा, एक से अधिक राजनीतिक दलों की उपस्थिति होगी और लोकमत

निर्माण व प्रेस की स्वंतत्रता होगी। बदलते परिदृश्य में मूल्यों में भी परिवर्तन होता है अतः ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि राजनीतिक व्यवस्था स्वतः इन मूल्य परिवर्तनों को आत्मसात कर अनुकूल करने में सक्षम हो।

10.आर्थिक समानता व सामाजिक न्याय पर बल- पाश्चात्य संविधानवाद आर्थिक व सामाजिक व राजनीतिक क्षेत्र में अवसर की समानता पर बल देता है। यद्यपि स्वतंत्रता प्रथम लक्ष्य है तथापि संविधानवाद ऐसी स्वंतत्रता को स्वीकार नहीं करता जो केवल एक व्यक्ति को प्राप्त हो। यहाँ लक्ष्य प्रत्येक व्यक्ति है और जब प्रत्येक व्यक्ति की बात होती है तो वहॉ समानता व न्याय का स्वतः समावेश हो जाता है।

4.4.2 संविधानवाद की साम्यवादी अवधारणा

संविधानवाद की साम्यवादी अवधारणा को मार्क्सवादी अवधारणा भी कहा जाता है। मार्क्सवाद जिस पर पूरा साम्यवादी भवन खड़ा है उसकी कुछ आधारभूत मान्यताएं है। मार्क्सवाद इस बात को लेकर चलता है कि सम्पूर्ण व्यवस्था के मूल में आर्थिक घटक कार्य करता है। आर्थिक घटक से तात्पर्य उत्पादन प्रणाली से है जिसमें दो बातें हैं एक उत्पादन के साधन, दूसरे, उत्पादन सम्बन्ध। जिस वर्ग के हाथ में उत्पादन के साधन होते हैं वही शासन करता है। सामाजिक, राजनीतिक सभी व्यवस्थाएँ उसी के अनुरुप चलती हैं। राज्य को शासक वर्ग ने शासित वर्ग के शोषण के यंत्र के रुप में इजाद किया है। अतः राज्य कृत्रिम संगठन है, शोषण का यंत्र है। प्रत्येक समाज दो वर्गो में बॅटा होता है सर्वहारा वर्ग व बुर्जआ वर्ग और इन वर्गों के मध्य संघर्ष होता है कभी धीमा तो कभी तेज। तेज संघर्ष क्रांति का प्रतीक होता है। संक्षेप में यह मार्क्सवाद का सार है। यहॉ ध्यान देने योग्य बातें हैं- मार्क्सवाद ने राज्य को शोषण का यंत्र बताया है, समाज वर्गों में बॅटा है, तथा आर्थिक शक्ति व्यवस्था की धुरी है। इसमें जिस वर्ग के पास साधन नहीं हैं उसका शोषण होता है। अब ऐसी समाज व्यवस्था में 'व्यक्ति की स्वतंत्रता' को कैसे बचाया जाये? उसे आर्थिक व सामाजिक न्याय कैसे दिलाया जाये? यह साम्यवादी संविधानवाद इस ध्येय की पूर्ति के लिए निम्नांकित बातों पर बल देता है-

1. वर्ग-विहीन, राज्य विहीन समाज की स्थापना- जब तक वर्गों का अस्तित्व रहेगा तब तक राज्य भी रहेगा क्योंकि राज्य, शासक वर्ग के हाथ में शासितों के शोषण का यंत्र है। समाज चाहे कोई भी रहें जहॉ-जहॉ वर्ग रहे, वहॉ राज्य भी रहा। क्योंकि राज्य की प्रकृति शोषण की है। अतः आम जनता की स्वतंत्रता को यदि बचाना है तो समाज में वर्गों का अस्तित्व समाप्त हो जाना चाहिए, राज्य स्वतः विलुप्त हो जायेगा। वर्ग-विहीन राज्य विहीन समाज में व्यक्ति शोषण से मुक्त स्वंतत्र जीवन जीयेगा।

2. उत्पादन के साधनों पर समाज पर नियंत्रण- समाज में वर्गों की उत्पत्ति का कारण उत्पादन के साधनों पर किसी वर्ग विशेष का आधिपत्य होना है और वही अन्ततः शोषण का कारण बनता है। अतः संविधानवाद की साम्यवादी धारणा उत्पादन के साधनों को पूरे समाज के नियत्रंण में कर देना चाहती है। ऐसी स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति कार्य भी करेगा और प्रतिफल भी पायेगा। समाज का सारी सम्पत्ति पर आधिपत्य होगा। मार्क्स कहता है वर्ग विहीन, राज्य विहीन समाज का यह नारा होगा कि ''प्रत्येक से उसकी क्षमता के अनुसार काम लिया जाये और प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार पारितोषित दिया जाये।''

3. सम्पत्ति के वितरण में समानता- संविधानवाद की साम्यवादी अवधारणा आर्थिक तत्व पर अधिक बल देती है। अतः उसका मत है कि साम्यवादी नारे के अनुरुप व्यवस्था कायम कर दी जाये तो इसमें सम्पत्ति के वितरण में

समानता स्वतः आ जायेगी। सम्पत्ति के वितरण में समानता का अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति को समान मात्रा में सम्पत्ति दे दी जाये, बल्कि इसका अर्थ है कि योग्यता व आवश्यकता के अनुरुप सम्पत्ति का वितरण होगा। जैसा कि लास्की ने भी स्पष्ट किया कि साम्यवादी व्यवस्था यह नही कहती कि एक मजदूर व एक वैज्ञानिक को समान वेतन दिया जाये।

4.व्यक्ति को 'अलगाव' से बचाने की व्यवस्था- कार्ल मार्क्स ने 'इकॉनामिक एंड फिलॉसॉफिकल मैनुस्क्रिप्टस ऑफ 1844' में लिखा कि ''साम्यवाद का अर्थ निजी सम्पत्ति और मानवीय परायेपन का नितांत उन्मूलन और मानवीय प्रकृति का मानव के लिए यथार्थ विनियोजन है। यह स्वयं खोए हुए मनुष्य की वापसी है, अतः साम्यवाद पूर्ण विकसित प्रकृतिवाद के रुप में मानववाद और पूर्ण विकसित मानववाद के रुप में प्रकृतिवाद है।'' मनुष्य को यंत्र न मानकर उसे मानव माना जाना चाहिए। इसमें मानवीय पराधीनता के प्रत्येक रुप को समाप्त किया जाना लक्ष्य है। अतः प्रत्येक सभ्य समाज को तभी संविधानवादी माना जायेगा जबकि वहॉ उपरोक्त व्यवस्थाएँ विद्यमान हों।

4.4.3 संविधानवाद की विकासशील लोकतांत्रिक अवधारणा

वस्तुतः संविधानवाद की दो ही मौलिक अवधारणाएँ हैं- एक पाश्चात्य व दूसरी साम्यवादी। जिन विद्वानों ने तीसरी अवधारणा को प्रस्तुत किया है वास्तव में वे संविधानवाद को न समझकर विकासशील राज्यों की सम्स्याओं पर अपना ध्यान केंन्द्रित किए हुए है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद 'एशिया, अफ्रीका व लैटिन अमेरिका' के नवोदित राज्यों को इस श्रेणी में रखा गया है, इसे प्रायः तृतीय विश्व के नाम से जाना जाता है। इन राज्यों की अपनी आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक समस्याएँ हैं। इन राज्यों में से कुछ ने पाश्चात्य् लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था को अपना लिया और उसी के अनुरुप संविधानवाद के मौलिक तत्वों को अंगीकार करने का प्रयास किया है। दूसरी ओर कुछ राज्यों ने साम्यवाद अपना लिया व साम्यवादी अवधारणा के अनुरुप संविधानवाद को अपना लिया। कुछ ऐसे देश भी है जो मिश्रित प्रकार का ढॉचा तैयार किये हुए हैं। अतः यह कहना उचित प्रतीत होता है कि संविधानवाद की तीसरी अवधारणा नहीं है। तीसरी दुनियॉ के देश अपने मूल्यों के अनुरुप उपरोक्त दो मौलिक अवधारणाओं में से एक के प्रति अथवादोनोंके मिश्रित रुप के प्रति अग्रसर है।

4.5 संविधानवाद के प्रमुख तत्व

1. **संविधानवाद व्यक्ति स्वतंत्रता की गारंटी देता है-** संविधान के अस्तित्व में आने के कारण ही व्यक्ति स्वतंत्रता की रक्षा करना है। यहॉ व्यक्ति की स्वतंत्रता को दोहरे खतरे से बचाया जाता है। व्यक्तियों व समाज की ओर से होने वाले खतरे से तथा राज्य की ओर से होने वाले खतरे से बचाया जाता है। यही कारण है कि संविधानवाद की दोनों अवधारणाओं (पाश्चात्य व मार्क्सवादी) मे यद्यपि कई मूलभूत अन्तर है तथापि दोनों व्यक्ति की स्वंतत्रता को उद्देश्य मानते है। पाश्चात्य अवधारणा व्यक्ति को राज्य की निंरकुशता के साथ ही साथ व्यक्ति व समाज वर्गों द्वारा किये जाने वाले शोषण से भी मुक्ति दिलाना चाहते है। यही कारण है कि मार्क्स के दर्शन को 'स्वतंत्रता का दर्शन' कहा जाता है।

2.राजनीतिक सत्ता पर अंकुश की स्थापना- संविधानवाद सीमित सरकार की धारणा में विश्वास करता है। उसकी मान्यता है कि राजनीतिक सत्ता का प्रयोग इस प्रकार किया जाना चाहिए कि व्यक्ति स्वतंत्रता को क्षति नहीं पहुंचने पाये। 1215 ई0 का मेग्नाकार्टा व 1688 ई0 की रक्तविहीन क्रांति इसी दिशा में प्रयत्न थे। जॉन लॉक सीमित सरकार को 'ट्रस्टी' के रुप में स्वीकार किया जिसके पास केवल तीन अधिकार (व्यवस्थापिका, कार्यपालिका, तथा

न्यायपालिका सम्बन्धी अधिकार) थे। व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकार सरकार पर अंकुश स्थापित करते थे। संविधानवाद वस्तुतः सीमित सरकार की अवधारणा का ही पर्यायवाची माना जा सकता है लेकिन एक शर्त के साथ जब सीमित सरकार का उद्देश्य जनकल्याण हो।

3.शक्ति पृथक्करण एवं अवरोध व संतुलन- संविधानवाद का एक महत्वपूर्ण तत्व शक्ति पृथक्करण है। इसके पीछे मूलतः मान्टेस्क्यू का दिमागा काम करता है। जिसकी मान्यता थी कि यदि व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करनी हो तो सरकार के तीनों अंगों के कार्य अलग-अलग हाथों में होने चाहिए और प्रत्येक को अपनी सीमा में काम करना चाहिए। मान्टेस्क्यू का यह विचार 'इंग्लैड के शासन का अनुभवात्मक अध्ययन' पर आधारित था। इस विचार के समर्थकों का मानना है कि शक्ति विभाजन से सरकार के कार्यों पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित हो जाता है और इसी स्थिति में संविधानवाद सम्भव है। किन्तु मात्र शक्ति पृथक्करण कर देने से संविधानवाद स्थापित होना सम्भव नही है चूँकि ऐसी स्थिति में शासन में गतिरोध उत्पन्न होने की प्रबल सम्भावना रहती है और इससे जनकल्याण की नीतियॉ प्रभावित होती है। अतः इस कमी को सुधारने के लिए अवरोध व सन्तुलन के सिद्धान्त को शक्ति पृथक्करण के पूरक के रुप में स्वीकार किया गया है। अमेरिकी संविधान में इन व्यवस्थाओं को बड़ी स्पष्टता के साथ अपनाया गया है।

4.संवैधानिक साधनों के प्रयोग से परिवर्तन- संविधानवाद परिवर्तन व विकास में विश्वास करता है। लेकिन ये प्रक्रियाए संवैधानिक माध्यमों से होनी चाहिए। यदि सत्ता परिवर्तन हो तो वह प्रजांतात्रिक माध्यम अर्थात चुनाव के माध्यम से होना चाहिए। किसी प्रकार के सैनिक अपदस्थ या अधिमानकवादिता या साम्राज्यवादी प्रवृत्ति के लिए संविधानवाद में कोई स्थान नहीं है। कुछ विचारकों ने संविधानवाद को दिवालिया घोषित करते हुए हिंसात्मक साधनों द्वारा परिवर्तन को स्वीकृति दी है। किन्तु ऐसी स्थिति संविधानवाद की सीमा से बाहर है।

5. संविधान सम्मत शासन में विश्वास- कुछ विचारकों ने संविधान व संविधानवाद में व्याप्त विभेद को अनदेखा करते हुए संविधान के अनुरुप चलने वाली शासन व्यवस्था को ही संविधानवाद मान लिया है। जैसे कोरी और अब्राहम ने लिखा, ''स्थापित संविधान के निर्देशों के अनुरुप शासन को संविधानवाद माना जाता है।'' ऐसा ही मत के0 सी0 व्हीयर का भी है उनका मानना है कि संवैधानिक शासन का अर्थ किसी शासन के नियम के अनुसार शासन चलाने से अधिक कुछ नहीं है। उसका अर्थ है निरंकुश शासन के विपरीत नियमानुकूल शासन केवल अधिकार उपयोग करने वालों की इच्छा के अनुसार चलने वाला शासन नहीं, बल्कि संविधान के नियमों के अनुसार चलने वाला शासन होता है।

6.संविधानवाद का उत्तरदायी सरकार में विश्वास- संविधानवाद का विश्वास उत्तरदायी सरकार में होता है। क्योंकि उत्तरदायी सरकार में व्यक्ति को शोषण से मुक्ति मिलती है, उसके अधिकार प्राप्त करवाये जाते हैं, उसकी स्वतंत्रता की रक्षा सम्भव होती है। विधायक व सांसद जनता के प्रति जवाबदेय होते हैं।

4.6 संविधानवाद की विशेषताएँ

1. मूल्य सम्बद्ध अवधारणा- संविधानवाद एक मूल्य सम्बद्ध अवधारणा है। इसका सम्बन्ध राष्ट्र के जीवन दर्शन से होता है। इसमें उन सभी अथवा अधिकांश तत्वों का समावेश होता है जो राष्ट्र के जीवन दर्शन में पहले से ही उपस्थित है। जैसे एक उदारवादी समाज में लोकतंत्र, स्वतंत्रता, समानता, न्याय, भ्रातृत्व, जनकल्याण आदि मूल्य प्रायः समाहित होते हैं। भारतीय समाज विदेश नीति के क्षेत्र में पंचशील व गुटनिरपेक्षता जैसे मूल्यों से संबद्ध है। यह

संविधानवाद का व्यापक स्वरुप है चूँकि यहॉ राष्ट्र की स्वतंत्रता व सम्प्रभुता को बचाने का प्रयास किया गया है। इसे संविधानवाद का अन्तर्राष्ट्रीय स्वरुप माना जा सकता है। राष्ट्रीय स्तर पर संविधानवाद उन मूल्यों की रक्षा करता है जो व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करते है।

2. संस्कृतिबद्ध अवधारणा- संविधानवाद का विकास एवं समाज के मूल्यों का निर्माण देश में स्थापित संस्कृति से सम्बद्ध होता है। प्रायः हर देश में राजनीतिक संस्कृति मूल्यों को जन्म देती है। परन्तु व्यवहारवादी विचारधारा के अनुसार मूल्य एंव विचारधाराएँ संस्कृति में उचित परिवर्तन लाने के लिए साधन के रुप में भी प्रयोग किये जाते हैं।

3.गतिशील अवधारणा- परिवर्तन प्रकृति का नियम है, संविधानवाद इसे स्वीकार करता है। यही कारण है कि संविधानवाद की अवधारणा जड़ न होकर गतिशील है। इसमें समयानुकूल परिवर्तन व विकास की क्षमता होती है। समाज में मूल्य सदैव एक से रहे यह सम्भव नहीं है। ज्यों-ज्यों समाज का विकास होता है समाज के मूल्यों में विकासात्मक परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन संस्कृति के विकास व संवर्द्धन में सहायक होता है। चूँकि संविधानवाद संस्कृतिबद्ध अवधारणा है अतः यह गत्यात्मकता को सहज स्वीकार करती है। संविधानवाद वर्तमान के साथ-साथ भविष्य की आकांक्षाओं का प्रतीक भी होता है।

4.साध्य मूलक अवधारणा- यद्यपि संविधानवाद में साधनों व साध्यों को प्रायः समान दृष्टि से देखा जाता है, फिर भी साध्य -प्रधानता इसका मूल लक्षण है। चूँकि इस अवधारणा का जन्म ही, एक साध्य की प्राप्ति के लिए हुआ है और वह साध्य है- 'व्यक्ति की स्वतंत्रता को राज्य निंरकुशता से बचाना'। इसी अभीष्ट की प्राप्ति के लिए संविधानवाद में कई साधनों का प्रयोग किया जाता है। जैसे- विधि का शासन, शक्ति पृथक्करण, स्वतंत्र न्यायपालिका, मौलिक अधिकारों की व्यवस्था, 'समानता, स्वतंत्रता, भ्रातृत्व' को साकार करना आदि। ये सभी साधन संविधानवाद की पाश्चात्य् अवधारणा के उपकरण हैं जबकि मार्क्सवादी अवधारणा में व्यक्ति की स्वंतत्रता व समानता तथा शोषण मुक्ति के लिए 'राज्य को अस्वीकार' किया गया है तथा पूँजीवादी व्यवस्था की समाप्ति व समाजवादी और साम्यवादी व्यवस्था की स्थापना पर बल दिया गया है। इस प्रकार संविधानवाद की दोनों अवधारणाओं- पाश्चात्य व मार्क्सवादी, में साध्य 'व्यक्ति स्वतंत्रता' को माना गया है और उसी साध्य की प्राप्ति के लिए भिन्न-भिन्न साधन इजाद किये गये हैं।

5.सहभागी अवधारणा- संविधानवाद को सम्भागी अवधारणा करार देने के पीछे मूल कारण कुछ मूल्यों को प्राप्त सार्वभौमिक स्वीकृति है। आज प्रायः सभी लोकतांत्रिक देश स्वतंत्रता ,समानता, न्याय, भ्रातृत्व, विधि के शासन, जन सहभागिता, आदि मूल्यों में अपनी आस्था प्रकट करते हैं, इसी प्रकार साम्यवादी व्यवस्था वाले देशों की लगभग एक जैसी आस्थाएँ जैसे- समानता, शोषण का अंत आदि है। अतः वर्तमान में एक श्रेणी पाश्चात्य् संविधानवादी अवधारणा के रुप में जानी जाती है। दूसरी साम्यवादी धारणा के रुप में। सम्भागी कहने का तात्पर्य है संविधानवाद के मूल्यों के प्रति दो या अधिक राज्यों के विचारों में समानता पाया जाना। वस्तुतः संविधानवाद के उपरोक्त दो मॉडलों केा अपनाने वाले राज्यों में अपने -अपने मॉडलों के प्रति कई समानताएँ पायी जाती हैं। अतः पाश्चात्य् मॉडल अपनाने वालों में मूल्यों के सम्बन्ध में प्ररकार का भेद न होकर मात्रा का भेद है। यही स्थिति मार्क्सवादी या साम्यवादी राज्यों के सम्बन्ध में भी लागू होती है।

6.संविधान-सम्मत अवधारणा- चूँकि प्रत्येक देश के संविधान में जहॉ एक ओर शासन व्यवस्था के स्वरुप, कार्यप्रणाली, शासन-अंगों के मध्य अन्तः सम्बन्धों, अन्तः क्रियाओं, जनता शासन के रिश्तों आदि का वर्णन होता हैं उस देश की संस्कृति के अनुरुप मूल्यों, आस्थाओं, विश्वासों का भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष वर्णन होता है। अतः संविधानवाद का संविधान में स्वतः समावेश होता है। यह स्थिति तो सैद्धान्तिक है। अब यदि संविधान में वर्णित आदर्शों के अनुरुप व्यवहार में उसका पालन भी हो रहा है तो कहा जा सकता है संविधान सम्मत कार्य ही वही संविधानवाद है और यदि ऐसा नही हो रहा है तो दोनों भिन्न-भिन्न चीजें हैं। दूसरी बात जो अधिक महत्वपूर्ण है वह यह कि क्या संविधान मानव स्वतंत्रता का पोषक है या केवल राज्य का अस्तित्व कायम रखने के लिए बनाया गया है? यदि यह मानव स्वतंत्रता व कल्याण की गारंटी देता है तब तो संविधानवाद संविधान सम्मतता को स्वीकार करेगा अन्यथा नहीं। अतः संविधानवाद केवल वहीं संविधान सम्मत अवधारणा कहलायेगी जहॉ संविधान का उद्देश्य व्यक्ति स्वतंत्रता व कल्याण की सिद्धि करना हो।

"संविधान ऐसे निश्चित नियमों का एक संग्रह होता है, जिनमें सरकार की कार्य-विधि प्रतिपादित होती है और जिनके द्वारा उसका संचालन होता है।"

4.7 अभ्यास प्रश्न

1. संविधानवाद की यह परिभाषा किसने दी कि ''संविधानवाद का आशय सुव्यवस्थित और संगठित राजनीतिक शक्ति को नियंत्रण में रखता है''।

क. पिनॉक एवं स्मिथ ख. फ्रैडरिक ग. पीटर एच0 मार्क घ.केसी व्हीयर

2. ''शक्तियों का विभाजन सभ्य सरकार का आधार है, यही संविधानवाद है।'' संविधानवाद की यह परिभाषा किसने दी?

क. कार्ल जे फ्रेडरिक ख. जेएस राऊसेक ग. कॉरी एंव अब्राहम घ. पिनाक एवं स्मिथ

3. कार्ल जे फ्रेडरिक के अनुसार ''व्यवस्थित परिवर्तन की जटिल प्रक्रियात्मक व्यवस्था ही संविधानवाद है। सत्य/असत्य

4. मार्क्स के दर्शन को स्वतंत्रता का दर्शन कहा है। सत्य/असत्य

4.8 सारांश

विश्व के किसी भी देश में चाहे शासन का जो भी स्वरुप उस देश का एक संविधान अवश्य होता है। शासन के लोकतंत्रात्मक स्वरुप शासन संविधान के अनुरुप व उसके नियंत्रण में चलता है। किन्तु शासन के अन्य रुपों में चाहे वह सैनिक शासन हो या तानाशाही शासन, इन व्यवस्थाओं में शासन, संविधान को दर किनार करते हुए एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों के समुह के निर्देशन में चलता है। संविधान लिखित रूप में भी हो सकता है और अलिखित रुप में

भी। आवश्यक यह है कि कुछ एसे नियम-कानून हों जिनके अनुरुप राज्य की शासन-प्रणाली चल सके। जिस पर विद्वानों ने इसकी अलग-अलग परिभाषा दी है। संविधान के विभिन्न स्वरुपों के आधार पर इसका वर्गीकरण किया गया है। संवैधानिक सरकार से आशय एसी सरकार से है जो संविधान की व्यवस्थाओं के अनुरुप गठित, नियंत्रित व संचालित होती है। परन्तु एसा भी नहीं है कि जिस राज्य में संविधान हो वहां संवैधानिक सरकार भी हो। लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था में संवैधानिक सरकार तो हो सकती है। किन्तु शासन के अन्य रुपों में इसकी कोई गारंटी नहीं कि वहां संविधान के साथ-साथ संवैधानिक सरकार हो, क्यों कि संवैधानिक सरकारें विधि के अनुरुप व लोक कल्याण पर आधारित होती हैं।

संविधानवाद एक आधुनिक विचारधारा है, जो नियंत्रित राजनीतिक व्यवस्था की स्थापना पर जोर देती है। कहा जा सकता है कि संविधानवाद सीमित शासन का प्रतीक है। एक आधुनिक विचारधारा होने के कारण संविधानवाद की तीन प्रचलित अवधारणाएं हैं। पहला- पाश्चात्य् अवधारणा, दुसरी- साम्यवादी अवधारणा व तीसरी- विकासशील लोकतांत्रिक अवधारणा। संविधानवाद के तत्व व विशेषताएं संविधानवाद की प्रकृति व महत्व को स्पष्ट करती है।

4.9 शब्दावली

1. अंगीकार- ग्रहण करना/ अपनाना

2. गत्यात्मकता- परिवर्तनशीलता/परिवर्तन/बदलाव

4.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. पीटर एच मार्क 2. कार्ल जे0 फ्रैडरिक 3. सत्य 4. सत्य

4.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

आधुनिक तुलनात्मक राजनीति- पीटर एच0 मार्कल

राजनीति विज्ञान एक परिचय- पिनांक एवं स्मिथ

संवैधानिक सरकारें और लोकतंत्र- कार्ल जे0 फ्रैडरिक

तुलनात्मक राजनीति एंव राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी0 गैना

4.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक राजनीति एंव राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी0 गैना

2. आधुनिक सरकारें- सिद्धान्त एंव व्यवहार- डॉ0 पुष्पेश पाण्डे, डॉ0 विजय प्रकाश पंत एंव घनश्याम जोशी

4.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. संवैधानिक सरकार व संविधानवाद की व्याख्या करें।

2. संविधानवाद का अर्थ एवं परिभाषा बतलाते हुए संविधानवाद की अवधारणाएं बतलाइये।

3. संविधानवाद की परिभाषा देते हुए संविधानवाद के तत्वों को स्पष्ट करें।

4. संविधानवाद की परिभाषा दीजिए एवं संविधानवाद की विशेषताएं बताइये।

इकाई- 5 संसदात्मक शासन प्रणाली

इकाई की संरचना

5.0 प्रस्तावना

5.1 उद्देश्य

5.2 संसदात्मक शासन प्रणाली- अर्थ एवं परिभाषा

5.3 संसदात्मक शासन प्रणाली की विशेषताएं

5.4 संसदीय शासन प्रणाली के गुण

5.5 संसदीय शासन प्रणालीके दोष

5.6 सारांश

5.7 शब्दावली

5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

5.10 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

5.11 निबंधात्मक प्रश्न

5.0 प्रस्तावना

सभी मानवीय समुदायों ने सामाजिक संबंधो के संयोजन, संघर्षों की रोकथाम और समाधान तथा समाज के समान उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, कोई न कोई नियंत्रण व्यवस्था अपना रखी है। सत्ता और नियंत्रण की इस व्यवस्था को सरकार (शासन) कहा जाता है। मूलतः सरकार (शासन) के तीन कार्य होते हैं। पहला- कानून बनाना, दूसरा- कानून लागू करना और तीसरा-विवादों को सुलझाना। इन कार्यो को पूरा करने वाले सरकार के तीन अंग होते है- विधायिका, कार्यपालिका व न्यायपालिका। विधानमण्डल व कार्यपालिका के पारस्परिक संबंधों के आधार पर सरकारों का वर्गीकरण करते हुए दो प्रकार की सरकारें होती हैं- 1- संसदीय सरकार और 2- अध्यक्षीय सरकार। इस इकाई के अंतर्गत हम संसदीय शासन व्यवस्था को विस्तृत रूप से समझेंगे।

संसदीय सरकार शासन की एक लोकतांत्रिक प्रणाली है जो किसी देश की कार्यकारी और विधायी शाखाओं के बीच घनिष्ठ संबंध पर जोर देती है। यह यूनाइटेड किंगडम, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, भारत और दुनिया भर के कई देशों में व्यापक रूप से प्रचलित है। संसदीय प्रणाली में, कार्यकारी शाखा, जिसका नेतृत्व प्रधान मंत्री या उसके समान पद पर होता है, विधायी निकाय से उत्पन्न होती है और उसके प्रति जवाबदेह रहती है। संसदीय सरकार की परिभाषित विशेषताओं में से एक कार्यकारी और विधायी शाखाओं के बीच शक्तियों का संलयन है। राष्ट्रपति प्रणाली के विपरीत जहां दो शाखाएं अलग और स्वतंत्र होती हैं, संसदीय प्रणाली दोनों का विलय करती है, जिससे एक अन्योन्याश्रित संबंध बनता है। यह अंतर्संबंध सहयोग, सहकार्यता और अधिक सरल निर्णय लेने की प्रक्रिया को बढ़ावा देता है। निर्वाचित प्रतिनिधियों से बनी संसद, संसदीय सरकार के कामकाज में केंद्रीय भूमिका निभाती है। यह बहस, विधायी गतिविधि और कार्यकारी शाखा की निगरानी के लिए मंच के रूप में कार्य करता है। विभिन्न राजनीतिक दलों और निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने वाले संसद सदस्य, कानूनों को आकार देने और पारित करने, सरकारी कार्यों की जांच करने और सरकार को उसके निर्णयों और नीतियों के लिए जवाबदेह बनाने में योगदान देते हैं।

यदि सामान्य भाषा में हम इसे समझें तो ऐसे समझ सकते हैं, जिस शासन व्यवस्था में कार्यपालिका का जन्म व्यवस्थापिका में से होता है और कार्यपालिका, विधानमण्डल के नियंत्रण में कार्य करती है एवं पूर्णरूप से उसके प्रति ही उत्तरदायी होती है तो ऐसी सरकार (शासन व्यवस्था) को संसदीय सरकार या मंत्रीमण्डलीय शासन या उत्तरदायी शासन कहते हैं।

ब्रिटेन संसदीय शासन का सर्वोत्तम व आदर्श उदाहरण है, वह इस शासन व्यवस्था की जननी भी है। भारत में भी ब्रिटिश संसदीय पद्धति को ग्रहण किया गया है।

5.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप जान पाएंगे:

1. संसदात्मक शासन प्रणाली के अर्थ एवं परिभाषा को जान पायेंगे।
2. संसदात्मक शासन प्रणाली के विशेषताओं के विषय में जान पायेंगे।
3. संसदात्मक शासन प्रणाली के गुण एवं दोषों के विषय में विस्तार से जान पायेंगे।

5.2 संसदात्मक शासन प्रणाली- अर्थ एवं परिभाषा

संसदात्मक/संसदीय शासन प्रणाली में कार्यपालिका की शक्तियाँ मंत्रीपरिषद् के हाथों मे रहती है और यह कार्यपालिका व्यवस्थापिका या उसके निचले सदन के प्रति उत्तरदायी होती है, राज्याध्यक्ष नाममात्र का शासक या प्रधान होता है।

प्रो0 गार्नर ने संसदात्मक या मंत्रीमंडलीय सरकार को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''संसदीय सरकार वह प्रणाली है, जिसमें वास्तविक कार्यपालिका (मंत्रीपरिषद्) अपने विधायी और प्रशासनिक कार्यों के लिए प्रत्यक्ष और कानूनी तौर पर, विधानमण्डल अथवा उसके एक सदन (प्रायः लोकप्रिय सदन) के प्रति और राजनीतिक तौर पर निर्वाचक गणों के प्रति उत्तरदायी होती है, जबकि नाममात्र की कार्यपालिका (राज्य का प्रधान) अनुत्तरदायी स्थिति में होता है।''

गैटिल का, संसदात्मक शासन से अभिप्राय, शासन के उस प्रकार से है जिसमें कि प्रधानमंत्री और मंत्रीमण्डल से मिलकर बनने वाली वास्तविक कार्यपालिका अपने कार्यों के लिए व्यवस्थापिका के प्रति वैधानिक रूप से उत्तरदायी होती है।

यहाँ पर मंत्रीमण्डल और मंत्रीपरिषद् शब्दों का प्रयोग हुआ है। दरअसल कार्यपालिका जो वास्तविक शासक या प्रधान और उसके मंत्रियों से मिलकर बनती है में दो स्तर के मंत्री होते हैं। पहला- केन्द्रीय मंत्री और दूसरा- राज्य मंत्री। राज्य स्तर के मंत्री भी दो प्रकार के होते हैं- स्वतंत्र प्रभार के मंत्री और राज्यमंत्री। स्वतंत्र प्रभार के मंत्री उन मंत्रियों को कहा जाता है, जिस विभाग में केन्द्र स्तर का मंत्री न हो और वह अपने विभाग के निणर्य स्वयं ले सकते है। जबकि राज्यमंत्री केन्द्रीय मंत्री के सलाह से ही कार्य करते है और निर्णय लेते है। मंत्रीमण्डल में वास्तविक शासक या प्रधान और केन्द्रीय मंत्री होते हैं, जबकि मंत्रीपरिषद् में वास्तविक शासक या प्रधान और केन्द्र व राज्य स्तरीय सभी मंत्री होते हैं।

5.3 संसदात्मक शासन प्रणाली की विशेषताएं

संसदीय शासन प्रणाली की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं:

1. वास्तविक और नाममात्र की कार्यपालिका का भेद- संसदीय प्रणाली में दो प्रकार की कार्यपालिकाएं होती हैं- पहला नाममात्र की कार्यपालिका, और दूसरा वास्तविक कार्यपालिका। राज्य का प्रधान, नाममात्र की कार्यपालिका और प्रधानमंत्री सहित मंत्रीपरिषद् वास्तविक कार्यपालिका होती है। ब्रिटेन में वर्तमान समय में रानी और भारत में राष्ट्रपति नाममात्र के प्रधान ही हैं। ये मंत्रीपरिषद् के निर्णयों के अनुसार ही अपने कार्य करते है। शासन के अच्छे या बुरे कार्यों का श्रेय मंत्रीपरिषद् को ही मिलता है।

2. कार्यपालिका और व्यवस्थापिका में अभिन्न संबंध- संसदीय शासन में कार्यपालिका और व्यवस्थापिका में अभिन्न संबंध होता है। कार्यपालिका का व्यवस्थापिका में से चयन होता है। मंत्रीगण व्यवस्थापिका के सदस्य होते है, वे व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होते हैं, व्यवस्थापिका वाद-विवाद, प्रश्न पूछकर, काम रोको प्रस्ताव, अविश्वास प्रस्ताव आदि द्वारा मंत्रिपरिषद को नियंत्रित करती है और हटा भी सकती है।

दूसरी ओर कार्यपालिका के सदस्य अर्थात मंत्री व्यवस्थापिका की कार्यवाहियों में भाग लेते हैं। व्यवस्थापिका का नेतृत्व करते हैं, अधिकांश कानून उन्हीं की इच्छानुसार बनते हैं। आवश्यकतानुसार मंत्रीपरिषद् निचले अर्थात लोकप्रिय सदन को भंग भी करा सकती है।

3. राज्य के अध्यक्ष द्वारा सरकार के अध्यक्ष की नियुक्ति- राज्य के अध्यक्ष द्वारा सरकार के अध्यक्ष (प्रधानमंत्री) की नियुक्ति की जाती है। यह नियुक्ति लोकसदन में बहुमत प्राप्त दल के नेता की होती है, लेकिन जब किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं हो तो ऐसी स्थिति में सबसे बड़े दल के नेता को, एक से अधिक दलों में गठित दल के नेता को अथवा सर्वाधिक संख्या का समर्थन प्राप्त करने वाले नेता को प्रधानमंत्री के रूप में नियुक्त किया जाता है। पिछले अनेक वर्षों से यह परम्परा सी बन गई है।

4. कार्यपालिका की अवधि की अनिश्चितता- जैसा कि स्पष्ट है, इस शासन में मंत्रीपरिषद् का कार्यकाल निश्चित नहीं होता है, मंत्रीपरिषद्उसी समय तक रह सकती है जब तक कि उसे निचले सदन में बहुमत का समर्थन प्राप्त है।

5. सामूहिक उत्तरदायित्व- इसका अर्थ यह है कि किसी एक मंत्री के कार्य के लिए अकेला वही उत्तरदायी नहीं, वरन् समस्त मंत्रीपरिषद् उत्तरदायी होती है। कारण यह है कि मंत्रिपरिषद में निर्णय सामूहिक रूप से ही होते है। इस प्रकार सामूहिक उत्तरदायित्व के कारण एक अच्छे शिक्षा मंत्री को बड़े व असफल रहे अन्य मंत्री के कारण त्यागपत्र देना पड़ सकता है। संक्षेप में मंत्रीगण एक साथ तैरते हैं, एक साथ डूबते हैं, वे सब एक के लिए है, और एक सब के लिए।

6 राजनीतिक सजातीयता- इसका अर्थ यह है कि सभी मंत्री एक ही राजनीतिक विचार और सिद्धान्त के हों , इसके लिए आवश्यक है कि साधारणतः वे एक ही राजनीतिक दल के हों, यद्यपि असाधारण स्थिति में मिली-जुली मंत्रीपरिषद्भी बनती है। गंभीर संकट के समय अन्य दल के लोगों को लेकर राष्ट्रीय सरकार बनायी जा सकती है। जब संसद में कोई दल स्पष्ट बहुमत में न हो तो दो या दो से अधिक दल मिलकर मिली जुली सरकार का गठन कर सकते हैं। मंत्रीपरिषद्की सजातीयता, उसकी एकता व सामूहिक उत्तरदायित्व की दृष्टि से आवश्यक है।

7. मंत्रीमण्डल की एकता- मंत्रीमण्डल एक इकाई है, इसलिए मंत्रीमण्डल में जो निर्णय बहुमत से हो जाते है, उन्हें प्रत्येक मंत्री को स्वीकार करना पड़ता है या उन्हें मंत्री पद से त्यागपत्र देना पड़ता है। इस प्रकार मंत्रीमण्डल में रहते हुए कोई मंत्री किसी मतभेद को संसद में या सार्वजनिक रूप से प्रकट नहीं कर सकता है। सभी मंत्री एक ही स्वर में बोलते हैं।

8. प्रधानमंत्री का नेतृत्व- संसदीय सरकार में प्रधानमंत्री का विशिष्ट स्थान होता है। वह मंत्रीपरिषद्का नेता होता है, उसका कप्तान होता है, मंत्रीमण्डल का आधार स्तम्भ होता है, लोकसदन का नेता होता है, राष्ट्रीय प्रशासन का संचालक होता है। मंत्रियों की नियुक्ति व निष्कासन करता है, विभागों में परिवर्तन करता है। प्रधानमंत्री मंत्रीपरिषद् का न केवल निर्माण करता है, वरन् वह उसके जीवन तथा मृत्यु का केन्द्र-बिन्दु भी है। प्रधानमंत्री किसी मंत्री से असंतुष्ट होने पर उससे त्यागपत्र मॉग सकता है। लार्ड मॉर्ले ने ब्रिटिश प्रधानमंत्री को ''मंत्रीमण्डल रूपी भवन की आधारशिला कहा है''।

9. गोपनीयता- मंत्रीमण्डल की कार्यवाही गुप्त रहती है। सभी मंत्री गोपनीयता की शपथ ग्रहण करते हैं। मंत्रिगण मंत्रिमंडल के निर्णयों को या मतभेदों को संसद में या सार्वजनिक रूप से प्रकट नहीं कर सकते। मंत्री उचित समय पर ही कैबिनेट के निर्णयों को जनता तक पहुँचाते हैं।

5.4 संसदीय शासन प्रणाली के गुण

संसदात्मक शासन प्रणाली के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं।

1. कार्यपालिका और व्यवस्थापिका के बीच संघर्ष नहीं - संसदीय शासन प्रणाली का एक गुण यह है कि व्यवस्थापिका (संसद) और कार्यपालिका में मतैक्य रहता है संघर्ष नहीं। दोनों अंग एक दूसरे की आवश्यकता और उपादेयता को समझते हैं, मंत्री व्यवस्थापिका में बैठते हैं, इच्छानुसार विधेयक व बजट आदि पारित कराते हैं, और संसद के प्रति अपने उत्तरदायित्व का पालन करते हैं। ब्रिटेन में संसद व कैबिनेट के बीच संघर्ष देखने को नहीं मिलता है, जबकि अमेरिका में, जहॉ कि अध्यक्षीय शासन है, कॉग्रेस (व्यवस्थापिका) ओर राष्ट्रपति में संघर्ष की स्थिति पैदा हो जाती है।

प्रो0 डायसी ने लिखा है कि ''मंत्रीमण्डलात्मक सरकार की स्थापना कार्यपालिका और विधायिका शक्तियों के संयोजन पर आधारित है, साथ ही वह इन दोनों के बीच समरूप संबंधों को बनाये रखती हैं।''

2. शीघ्र निर्णय- शक्तियॉ मंत्रिमंडल में निहित होती हैं, जिसका संसद में बहुमत होता है। अतः वह शीघ्र निर्णय लेने में सक्षम हैं, दल का बहुमत होने के कारण वह आवश्यक कानून बनवा सकती है।

3. कार्यपालिका निरंकुश नहीं हो सकती- संसदीय सरकार का सबसे बड़ा गुण यह है कि इसमें कार्यपालिका निरंकुश नहीं हो सकती है। दूसरे शब्दों में यह सरकार उत्तरदायी सरकार है, जिसमें संसद मंत्रीपरिषद्से प्रश्न व पूरक प्रश्न पूछकर, काम रोको प्रस्ताव व अविश्वास प्रस्ताव द्वारा उसे नियंत्रित करती है। किसी मंत्री के कार्यो के लिए वह जॉच समिति भी नियुक्त कर सकती है। निःसंदेह यह शासन प्रजातंत्र शासन के अधिक निकट है।

4. उत्तरदायित्व का निर्धारण सरलता से- संसदीय शासन में उत्तरदायित्व का निर्धारण भी सरलता से हो जाता है, क्योंकि विधि निर्माण व प्रशासन का कार्य एक ही दल के हाथों में रहता है।

5. उच्चकोटि का शासक वर्ग- संसदीय सरकार की बागडोर प्रतिष्ठित व योग्य व्यक्तियों के हाथों में रहती है। लास्की ने ब्रिटेन के संदर्भ में लिखा है कि ''मंत्री लोग माने हुए संसदीय नेता होते हैं, मंत्री बनने से पूर्व वे संसद सदस्यों के रूप में राजनीतिक जीवन का अच्छा अनुभव कर चुके होते हैं।'' मंत्रियों को अपनी योग्यता दिखाने का भी अवसर मिलता है और वे स्वंय भी लोकप्रिय होने के लिए जनहित में कार्य करते हैं। अध्यक्षीय शासन में मंत्री, राष्ट्रपति के केवल सहालकार मात्र होते हैं।

6. लचीली व्यवस्था- प्रो0डायसी के अनुसार लचीलापन, संसदीय शासन का महत्वपूर्ण गुण है। यह शासन नयी परिस्थितियों व संकटकाल का सामना आसानी व कुशलता से कर सकता है। बेजहॉट के शब्दों में '' इस प्रणाली के अन्तर्गत लोग, अवसर के योग्य ऐसा शासक निर्वाचित कर सकते हैं जो राष्ट्रीय संकट में से राज्य के जहाज को सफलतापूर्वक ले जाने में विशिष्ट रूप में दक्ष हो।'' यह उल्लेखनीय है कि द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान ब्रिटेन में

चेम्बरलेन के स्थान पर चर्चिल को प्रधानमंत्री बनाया गया था, ऐसा परिवर्तन अध्यक्षीय शासन में सम्भव नहीं है। इसमें गम्भीर संकट के समय राष्ट्रीय सरकार बनाने की व्यवस्था होती है।

7. राजनीतिक चेतना और शिक्षा- इस शासन से जनता में राजनीतिक चेतना पैदा होती है, लोगों को राजनीतिक प्रशिक्षण भी मिलता है, न केवल चुनावों के अवसर पर, वरन् राजनीतिक दल समय-समय पर विभिन्न विचारधाराओं व समस्याओं को जनता के समक्ष रखते हैं और अपना मत प्रकट करते हैं, जो समाचार पत्रों, सभा-सम्मेलनों, दलीय प्रत्रिकाओं आदि के माध्यम से जनता तक पहुँचते हैं और उन्हें जागरूक रखते हैं।

8. राज्याध्यक्ष, दलबन्दी से दूर- संसदीय प्रणाली में राज्य के प्रधान का पद बहुत हितकारक होता है, क्योंकि वह राजनीतिक दलबन्दी से परे रहता है। वह राष्ट्र की एकता का प्रतीक रहता है, वह सरकार के आलोचनात्मक मित्र के रूप में कार्य करता हैं।

9. वैकल्पिक शासन की व्यवस्था- संसदीय शासन का एक गुण यह भी है कि यदि किसी कारणवश सत्तारूढ़ दल अपना त्यागपत्र दे दे तो तुरन्त ही विरोधी दल को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करके वैकल्पिक सरकार बन सकती है। शासन के कार्यों में रूकावट पैदा नहीं होती है। सरकार का परिवर्तन बहुत ही स्वाभाविक ढंग से हो जाता है। सन् 1979 में देसाई सरकार का पतन व विरोधी दल के नेता चरणसिंह को सरकार बनाने हेतु आमंत्रित किया गया।

10. जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व - डायसी के शब्दों में ''संसदीय प्रणाली के मंत्रीमण्डल को जनमत के प्रति बहुत सचेत रहना पड़ता है। मंत्रीमण्डल जनता की इच्छा व उसकी आलोचनाओं की उपेक्षा नहीं कर सकता है या शासन व्यवस्था जनता के प्रति उत्तरदायी होती है।

5.5 संसदीय शासन प्रणाली के दोष

संसदीय शासन प्रणाली के दोष निम्नलिखित हैं।

1. अस्थिर शासन- संसदीय शासन का पहला दोष यह है कि यह अस्थिर शासन है, क्योंकि मंत्रीपरिषद् का कार्यकाल निश्चित नहीं होता है। बार-बार मंत्रीपरिषद् के बदलने से प्रशासनिक नीतियों में भी स्थिरता नहीं रहती और इस प्रकार जनता के हितों को हानि पहुँचती है। यदि किसी देश में बहुदलीय प्रणाली है तो वहाँ के लिए तो यह स्थिति और भी भयंकर हो जाती है। फ्रांस के तीसरे और चौथे गणतंत्र इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है। ब्रिटेन में सरकार की स्थिरता के पीछे वहॉ की द्विदलीय प्रणाली है।

2. दुर्बल कार्यपालिका- अध्यक्षीय शासन की अपेक्षा संसदीय शासन में कार्यपालिका दुर्बल रहती है, क्योंकि पदच्युत् होने के डर से वह संसद को प्रसन्न करने में लगी रहती है। मंत्रिपरिषदीय नीतियों का प्रयोग साहसपूर्वक नहीं कर पाती है।

3. विधानमण्डल में समय और शक्ति का दुरूपयोग- संसदीय शासन में विभिन्न राजनीतिक दलों का पारस्परिक विरोध उग्र रूप धारण कर लेता है। विरोधी दल की आलोचना भी सदैव रचनात्मक नहीं होती हैं। सत्तारूढ़ दल और

विरोधी दलों में आरोपों और प्रत्यारोपों का दौर चलता ही रहता है। इसके कई बडें परिणाम निकलते हैं। जैसे विधानमण्डल में समय नष्ट होता है, कानून बनाने में विलम्ब होता है ओर जनता में उदासीनता आती है।

4. उग्र राजनीतिक दलबन्दी- संसदीय शासन राजनीतिक दलबन्दी को प्रोत्साहन देता है। **लार्ड ब्राइस** के शब्दों में ''यह प्रथा दलबन्दी की भावना में वृद्धि करती है और इसे सदैव उबलती रखती है। यदि राष्ट्र के सामने महत्वपूर्ण नीति संबंधी विषय न हो तो भी इसमें पद प्राप्त करने की लड़ाई बनी रहती है। एक दल के पास पद होता है, दूसरा इसे लेने की इच्छा रखता है और यह झगड़ा चलता रहता है क्योंकि पराजित होने के शीघ्र बाद ही हारा हुआ दल जीते हुए दल को हटाने के लिए अभियान आरम्भ कर देता है।''

5. बहुमत दल की निरंकुशता का भय- संसदीय शासन में बहुमत दल संसद और देश में निरंकुशता का व्यवहार करता है। ब्रिटेन और भारत में प्रायः कैबिनेट के अधिनायकतंत्र की बात कही जाती है। **प्रो0 लास्की** ने ब्रिटिश कैबिनेट के संदर्भ में कहा है कि ''यह निश्चय ही कार्यपालिका को अत्याचारी बनने का अवसर देती है। यदि कार्यपालिका चाहे तो छोटे से छोटे विषय को विश्वास का प्रश्न बनाकर संसद को अपनी बात को मानने वाले केवल एक अंग मात्रा बनने के लिए बाध्य कर सकती है।'' रैम्जैम्योर तो संसदीय शासन को कैबिनेट की नहीं केवल एक व्यक्ति-प्रधानमंत्री की तानाशाही मानता हैं।

6. शक्ति पृथक्करण, सिद्धान्त की उपेक्षा- क्योंकि संसदीय शासन में व्यवस्थापिका और कार्यपालिका में समन्वय रहता है। अतः शक्ति पृथक्करण के अभाव में न केवल व्यवस्थापिका की स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है वरन् नागरिकों की स्वतंत्रता के अपहरण का डर भी बना रहता है।

7. संकट के समय दुर्बल शासन- **डायसी** जैसे विचारकों का मत है कि युद्ध या राष्ट्रीय संकट के समय संसदीय शासन अनुपयुक्त रहता है। कारण यह है कि निर्णय लेने से पूर्व मंत्रीमण्डल में पर्याप्त वाद-विवाद करना पड़ता है। मतभेद होने की स्थिति में प्रधानमंत्री को निर्णय लेने में कठिनाइओं का सामना करना पड़ता है। अधिकांश समय विचार-विमर्श व वाद-विवाद में नष्ट हो जाता है। मंत्रीपरिषद् का अधिकांश समय संसद में अपनी नीतियों को स्पष्ट करने, संसद सदस्यों के प्रश्नों के उत्तर देने तथा वाद-विवाद में व्यतीत हो जाता है। प्रो0 गिलक्राइस्ट के शब्दों में ''शान्ति के समय में वाद-विवाद करना संसदीय शासन का गुण है, परन्तु युद्धकाल में यह इसके सबसे बड़े दोषों में से एक है।''

8**. नौकरशाही का शासन पर अनुचित प्रभाव**- संसदीय शासन में मंत्री पद उनको दिया जाता है जो दल में अपना प्रभाव रखते हैं, जिन्हें राजनीतिक हथकंडे आते हैं। योग्यता के आधार पर तो कम लोगों को ही मंत्री पद मिलता है। फिर मंत्रियों का अधिकांश समय संसदीय वाद-विवादों में, दल की बैठकों में, उद्घाटन समारोह आदि में व्यतीत होता है। फलस्वरूप मंत्री नौसिखिए बने रहते हैं और विशेषज्ञों अर्थात सिविल सेवकों के हाथों में वे कठपुतली बने रहते हैं। रैम्जेम्यूर ने ब्रिटेन के संदर्भ में लिखा है कि ''मंत्री उत्तरदायित्व की आड़ में नौकरशाही पनपती है।''

9. निजी कार्यक्षेत्र में विमुखता- सिजविक के अनुसार संसदीय प्रणाली का एक दोष यह है कि कई बार कार्यपालिका अपने प्रशासनिक कार्यों से विमुख होकर विधायनी कार्यों में जुट जाती है, इसी प्रकार संसद कानून बनाने से विमुख होकर शासन कार्यों में अनुचित हस्तक्षेप करने लगती है।

10. देश-हित का उल्लंघन- आलोचकों का यह भी कहना है कि संसदीय शासन सत्तारूढ़ दल के द्वारा अपने दलीय स्वार्थ में ही होता है। इस शासन में राष्ट्रीय हितों की उपेक्षा का भय सदैव बना रहता है। अपने दल के हितों को ध्यान में रखकर ही मामलों का निपटारा होता है। फलस्वरूप प्रजातंत्र का ह्रास होता है।

11. बहुदलीय प्रणाली में सरकार बनाने में कठिनाई- संसदीय शासन उन देशों के लिए उपयुक्त नहीं है जहाँ कि बहुदलीय प्रणाली है। कारण यह है कि एक दल को जब स्पष्ट बहुमत नहीं मिलता तो मिली-जुली सरकार बनती है जो कि असफल सिद्ध होती है। फ्रांस ने बहुदलीय प्रणाली के कारण संसदीय प्रणाली को छोड़ दिया क्योंकि इसके कारण यहाँ सरकार में अस्थिरता बनी रहती थी। पिछले कुछ वर्षो से भारत में केन्द्र में यह स्थिति बनी हुई है।

अभ्यास प्रश्न-

1. संसदात्मक शासन प्रणाली का जनक किस देश को माना जाता है?

क. भारत ख. अमेरिका ग. ब्रिटेन घ. जापान

2. अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली का जनक किस देश को माना जाता है?

क. अमेरिका ख. भारत ग. ब्रिटेन घ. फ्रान्स

5.6 सारांश

निष्कर्षतः, संसदीय सरकार दुनिया भर के कई देशों में लोकतांत्रिक शासन के एक प्रमुख और सफल मॉडल के रूप में खड़ी है। इसकी शक्तियों का संलयन, कार्यकारी और विधायी शाखाओं के बीच सहयोग पर जोर, और संसद के प्रति जवाबदेही निर्णय लेने और शासन में इसकी प्रभावशीलता में योगदान करती है। आम सहमति-निर्माण, लचीलेपन और स्थिरता को बढ़ावा देकर, संसदीय प्रणाली समावेशी और उत्तरदायी शासन को बढ़ावा देती है जो लोगों के विविध हितों और दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करती है। जबकि पार्टी अनुशासन और कार्यकारी प्रभुत्व जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं, संसदीय सरकार एक लचीली और अनुकूलनीय प्रणाली बनी हुई है जो प्रतिनिधित्व, जवाबदेही और लोकतांत्रिक भागीदारी के सिद्धांतों को कायम रखती है।

5.7 शब्दावली

संयोजन- व्यवस्थित करना, विशिष्ट- प्रमुख/मुख्य या महत्वपूर्ण, सजातीयता- एक जाति विशेया का होना/समान्ता,

5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग 2. क

5.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

आधुनिक तुलनात्मक राजनीति- पीटर एच0 मार्कल

राजनीति विज्ञान एक परिचय- पिनांक एवं स्मिथ

संवैधानिक सरकारें और लोकतंत्र- कार्ल जे0 फ्रैडरिक

तुलनात्मक राजनीति एंव राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी0 गैना

5.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक राजनीति एंव राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी0 गैना

2. आधुनिक सरकारें- सिद्धान्त एंव व्यवहार- डॉ0 पुष्पेश पाण्डे, डॉ0 विजय प्रकाश पंत एंव घनश्याम जोशी

5.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. संसदात्मक शासन प्रणाली को स्पष्ट करते हुए इसके गुण-दोषों को स्पष्ट कीजिए।

2. संसदात्मक शासन प्रणाली की अर्थ एवं परिभाषा को स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं की विस्तार से चर्चा काजिए।

इकाई 6 अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली

इकाई की संरचना

6.0 प्रस्तावना

6.1 उद्देश्य

6.2 अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली: अर्थ एवं परिभाषा

6.3 अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली की विशेषताएं

6.4 अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली के गुण

6.5 अध्यक्षात्मक शासन प्रणालीके दोष

6.6 संसदात्मक व अध्यक्षात्मक सरकारों में अंतर

6.7 सारांश

6.8 शब्दावली

6.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

6.11 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

6.12 निबंधात्मक प्रश्न

6.0 प्रस्तावना

सरकार का अध्यक्षीय स्वरूप लोकतांत्रिक शासन की एक प्रणाली है जो संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस, ब्राजील और कई अन्य सहित दुनिया भर के कई देशों में प्रचलित है। इसकी विशेषता कार्यकारी और विधायी शाखाओं के बीच शक्तियों का पृथक्करण है, जिसमें प्रत्येक शाखा की भूमिकाओं और जिम्मेदारियों के बीच स्पष्ट अंतर होता है। यदि विधानमण्डल और कार्यपालिका एक दूसरे से पृथक व स्वतंत्र होकर कार्य करते हैं, दोनों समकक्ष दर्जे के होते हैं, दूसरे शब्दों में ये दोनों शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त के आधार पर काम करते है, तो ऐसी सरकार को अध्यक्षात्मक सरकार कहते है।

राष्ट्रपति प्रणाली में, कार्यकारी शाखा का नेतृत्व एक राष्ट्रपति करता है जो सीधे लोगों द्वारा या निर्वाचक मंडल के माध्यम से चुना जाता है। राष्ट्रपति राज्य के प्रमुख और सरकार के प्रमुख दोनों के रूप में कार्य करता है, कार्यकारी प्राधिकार का प्रतीक है और महत्वपूर्ण शक्तियों का प्रयोग करता है। संसदीय प्रणाली के विपरीत, जहां कार्यकारी शाखा विधायिका के भीतर से बनती है, राष्ट्रपति प्रणाली में राष्ट्रपति विधायिका से स्वतंत्र होता है।

विधायिका, जिसे अक्सर संसद या कांग्रेस के रूप में जाना जाता है, सरकार की एक अलग और स्वतंत्र शाखा है। यह कानून बनाने, लोगों के हितों का प्रतिनिधित्व करने और कार्यकारी शाखा पर नियंत्रण और संतुलन प्रदान करने के लिए जिम्मेदार है। हालाँकि राष्ट्रपति कानून का प्रस्ताव कर सकते हैं, लेकिन बहस करना, संशोधन करना और कानून पारित करना अंततः विधायिका पर निर्भर है।

बेजहॉट ने संसदीय व अध्यक्षीय सरकारों का अन्तर इस प्रकार स्पष्ट किया है- ''व्यवस्थापिका और कार्यपालिका शक्तियों की एक दूसरे से स्वतंत्रता, अध्यक्षीय शासन का विशेष लक्षण है और इन दोनों का एक दूसरे से संयोग तथा घनिष्ठता संसदीय शासन का लक्षण है।''

6.1 उद्देश्य

1. अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली के अर्थ एवं परिभाषा को जान पाएंगे।

2. अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली की विशेषताओं को जान पाएंगे।

3. अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली के गुण- दोषों को जान पाएंगे।

4. संसदात्मक और अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली के मध्य अंतर को समझ पाएंगे।

6.2 अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली: अर्थ एवं परिभाषा

जहां संसदीय सरकार सत्ता के संयोजन के सिद्धान्त पर आधारित होती है, वहीं अध्यक्षयात्मक/अध्यक्षीय शासन प्रणाली शक्ति विभाजन सिद्धान्त पर आधारित है। अध्यक्षीय शासन प्रणाली का आधार शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धान्त है। इसमें व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका सभी एक दूसरे से पृथक व स्वतन्त्र रहकर अपने कार्य करते हैं। कार्यपालिका शक्तियॉ राष्ट्रपति में ही निहित होती हैं जिनका प्रयोग वह स्वतन्त्रतापूर्वक करता है। राष्ट्रपति या उसके मंत्री व्यवस्थापिका के न तो सदस्य होते हैं और न उसकी कार्यवाहियों में भाग लेते हैं। राष्ट्रपति

का कार्यकाल भी निश्चित होता है। व्यवस्थापिका उसे अविश्वास प्रस्ताव द्वारा नहीं हटा सकती हैं। इसी प्रकार व्यवस्थापिका भी अपने गठन, कार्य तथा कार्यकाल की दृष्टि से कार्यपालिका से पृथक व स्वतंत्र होती है। संयुक्त राज्य अमेरिका का अनुकरण करते हुए कई क्षेत्रों में, खासकर, लेटिन अमेरिकी देशों ने अपनी परिस्थितियों के अनुरूप इस शासन प्रणाली को अपनाया है। इनमें ब्राजील, अर्जनटाईना, चिली मैक्सिको तथा एशियाई देश, फिलीपिन्स, दक्षिण कोरिया आदि प्रमुख हैं।

प्रो0गार्नर ने अध्यक्षीय सरकार की परिभाषा इस प्रकार की है- ''यह वह प्रणाली है जिसमें कार्यपालिका (मंत्रियों सहित राज्य का प्रधान) संवैधानिक रूप से अपने कार्यकाल के संबंध में और राजनीतिक नीतियों के संबंध में व्यवस्थापिका से स्वतंत्र होती है। इस प्रकार की प्रणाली में राज्य का प्रधान नाममात्र की कार्यपालिका नही होता, वरन् वास्तविक कार्यपालिका होती है और उन शक्तियों का वास्तव में प्रयोग करता है, जो संविधान व कानून के अनुसार उसको प्राप्त होती है।''

6.3 अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली की विशेषताएं

अध्यक्षीय शासन प्रणाली की निम्नलिखित विशेषताएं हैं:

1. राज्य के अध्यक्ष की स्थिति- राष्ट्रपति सरकार व राज्य दोनों का प्रधान- अध्यक्षीय शासन में राष्ट्रपति राज्य व सरकार दोनों का ही प्रधान होता है। वह राष्ट्रीय नीति का निर्माण करता है। सेनाओं के संचालन का ओदश देता है। आपातस्थिति की घोषणा कर सकता है तथा देश में व्यवस्था बनाए रखने हेतु कानूनों के प्रवर्तन के लिए सभी आवश्यक कदम उठाता है। इस प्रकार ऐसे शासन में ससंदीय शासन की तरह दो कार्यपालिकाएं (नाममात्र की व वास्तविक) नहीं होती हैं। संविधान द्वारा कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति को प्राप्त होती हैं, साथ ही उसकी यह शक्तियॉ वास्तविक भी होती हैं।

2. राष्ट्रपति का निश्चित कार्यकाल- अध्यक्षीय सरकार में राष्ट्रपति एक निश्चित अवधि के लिए निर्वाचित किया जाता है। अमेरिका में राष्ट्रपति का कार्यकाल चार वर्ष के लिए निश्चित है, इस अवधि से पहले व्यवस्थापिका उसे महाभियोग के अलावा अन्य किसी तरह से नहीं हटा सकती है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में महाभियोग का कार्य ''हाऊस आफ रिप्रेजंटेटिव'' (प्रतिनिधि सदन) से आरम्भ होता है तथा राष्ट्रपति अपना स्पष्टीकरण देता है। विवाद का निर्णय सीनेट में पूरे सदन के 2/3 बहुमत से होता है। अब तक केवल एक बार अमेरिका में सन् 1867 में राष्ट्रपति जानसन के विरूद्ध महाभियोग लगाया गया लेकिन सीनेट में यह प्रस्ताव एक मत से पास होने से रह गया और राष्ट्रपति को पद से नही हटाया जा सका।

3. राष्ट्रपति व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नहीं- अध्यक्षीय शासन में राष्ट्रपति, व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नहीं होता है तथा राष्ट्रपति(कार्यपालिका), व्यवस्थापिका को भंग नही कर सकता है। राष्ट्रपति तथा उसके मंत्री व्यवस्थापिका की कार्यवाहियों में भाग नहीं लेते । राष्ट्रपति व्यवस्थापिका में कोई महत्वपूर्ण भाषण देने हेतु जा सकता है अथवा वह अपना संदेश भेज सकता है जिसे व्यवस्थापिका स्वीकार या अस्वीकार कर सकती है। मंत्रीगण भी व्यवस्थापिका के सत्र में उपस्थित हो सकते है परन्तु मतदान का अधिकार नहीं होता। राष्ट्रपति या उसके मंत्री न तो व्यवस्थापिका के सदस्य होते हैं और न उन्हें अपने कार्यों के लिए व्यवस्थापिका के समर्थन पर निर्भर रहना पड़ता है, यानि व्यवस्थापिका भी कार्यपालिका को भंग नही कर सकती।

4. मंत्रीमण्डल का अभाव- अध्यक्षीय शासन में वैसा मंत्रीमण्डल नहीं होता, जैसा संसदीय शासन में होता है। राष्ट्रपति को सहायता व परामर्श देने के लिए कुछ सचिव होते हैं। इन सचिवों को सामूहिक नाम से 'राष्ट्रपति की कैबिनेट' कह दिया जाता है। परन्तु सच्चे अर्थो में यह कैबिनेट नहीं है, न तों यह कैबिनेट एक इकाई के रूप में कार्य करती हैं, न वह विधायिका के प्रति उत्तरदायी है, न उसकी तानाशाही है। व्यवस्थापिका से मंत्रियों को कुछ लेना-देना नहीं है, राष्ट्रपति ही उनका 'स्वामी' है।

5. शक्ति-पृथक्करण सिद्धान्त पर आधारित- अध्यक्षीय सरकार की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त पर आधारित है। सरकार के तीनों अंग एक दूसरे से पृथक व स्वतंत्र होते है। कार्यपालिका के सदस्य न तो व्यवस्थापिका के सदस्य होते है और न वे कानून निर्माण में भाग लेते हैं, इसी प्रकार व्यवस्थापिका केवल कानून बनाती है। वह राष्ट्रपति या उसके मंत्रियों से न तो प्रश्न पूछ सकती है और न अविश्वास प्रस्ताव द्वारा पदच्युत कर सकती है।

6. संसदीय शासन में जिस प्रकार प्रधानमंत्री की महत्ता है वैसे ही अध्यक्षीय शासन में राष्ट्रपति की महत्ता होती है।

6.4 अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली के गुण

अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं:

1. स्थायी एवं दृढ़ शासन- अध्यक्षीय शासन का सबसे महत्वपूर्ण गुण है-शासन में स्थायित्व। निश्चित कार्यकाल के कारण राष्ट्रपति अधिक आत्म-विश्वास के साथ नीतियों का निर्माण व उन पर अमल कर सकता है। इसका कार्यकाल चार वर्ष, दो बार से अधिक नही हो सकता है, यानि कार्यपालिका का भाग्य व्यवस्थापिका के परिवर्तनशील मत पर निर्भर नही होता है। अतः सरकार स्थिर नीति का पालन कर सकती है। उसे अपने कार्यों को पूरा करने के लिए व्यवस्थापिका की ओर ताकने की आवश्यकता नहीं होती है। अमेरिका में कॉंग्रेस राष्ट्रपति के कार्यो में बहुत कम हस्तक्षेप कर सकती है।

2. अधिक कुशल शासन- शक्ति पृथक्करण पर आधारित होने के कारण यह शासन संसदीय शासन की तुलना में अधिक कुशल होता है। इसका कारण बताते हुए मैरियट ने लिखा है कि ''शासन की इस व्यवस्था में प्रशासन में वास्तविक रूप से कुशलता आती है क्योंकि मंत्रियों को हर समय व्यवस्थापिका में उपस्थित रहने में समय लगाना नहीं होता और व्यवस्थापन कार्य भी कुशलता से होता है, क्योंकि व्यवस्थापिका के सदस्यों के मस्तिष्क अपने विशिष्ट कार्य में ही लगे रहते हैं।''

3. दलबन्दी का अभाव- अध्यक्षीय शासन में दलबन्दी का उग्र व दूषित वातावरण वैसा नहीं रहता, जैसा संसदीय शासन में देखा जाता है। इस प्रणाली में कार्यपालिका (राष्ट्रपति) व व्यवस्थापिका के निर्वाचनों के समय ही राजनीतिक दल सक्रिय रहते हैं, हर समय नहीं क्योंकि बीच में राष्ट्रपति को हटाया नही जा सकता है। अनावश्यक विरोध भी नही होता है और न राष्ट्रपति का दल उसका अन्धानुकरण करता है। निर्वाचन की समाप्ति के बाद राष्ट्रपति यदि चाहे तो अपने राजनीतिक दल से मुक्त होकर स्वतंत्र नीति पर चल सकता है। राजनीतिक दल प्रशासन पर अनुचित प्रभाव डालने में सक्षम नही हो पाते क्योंकि विरोधी दल के सामने ऐसा कोई लालच नहीं होता कि सदन के

ज्यादा सदस्य यदि उसकी तरफ आ जाएँ तो वर्तमान सरकार टूट जायेगी और उसके स्थान पर दूसरी सरकार कायम हो सकेगी। यही कारण है कि दलबंदी की भावना जितनी संसदात्मक प्रणाली मे है, उतनी अध्यक्षीय प्रणाली में नही।

4. संकटकाल के लिए उपयुक्त- यह शासन संकटकाल के लिए सर्वाधिक उपयुक्त शासन है। कारण यह है कि कार्यपालिका शक्तियॉ सैद्धान्तिक व व्यावहारिक दोनों दृष्टियों में राष्ट्रपति में ही निहित होती हैं। अतः किसी संकट के समय में वह अकेला निर्णय लेने में समर्थ है।

5. राष्ट्रीय एकता की सुदृढ़ता- अध्यक्षीय शासन का एक गुण यह भी है कि राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ रहती है। राष्ट्रपति पूरे देश का नेता है, एक दल का नहीं। इसलिए भी उससे बुद्धिपूर्ण न्यायोचित और राष्ट्रहित की अपेक्षा लोगों को रहती है।

6. निरंकुशता का अभाव- इस शासन प्रणाली में शक्ति-पृथक्करण होता है। अतः शक्तियॉ एक स्थान पर केन्द्रित न होने के कारण जनता के अधिकारों व स्वतंत्रताओं को संसदीय शासन की अपेक्षा कम खतरा रहता है। अध्यक्षीय शासन में जैसा कि अमेरिका में है अवरोध और सन्तुलन की प्रणाली'' के द्वारा, एक सरकार का अंग दूसरे अंग को नियंत्रित करता रहता है। जैसे राष्ट्रपति द्वारा की गई सभी नियुक्तियॉ व विदेशों के साथ संधियॉ, सीनेट द्वारा पुष्ट की जाती हैं। कांग्रेस द्वारा निमित कानून तथा कार्यपालिका के आदेश न्यायालय द्वारा इस आधार पर रदद् किए जा सकते हैं कि वे संविधान के विरूद्ध हैं। साथ ही राष्ट्रपति को भी इतनी व्यापक शक्तियॉ प्राप्त हैं कि व्यवस्थापिका और न्यायपालिका भी तानाशाह बनने का स्वप्न नहीं देख सकते।

7. योग्य और अनुभवी व्यक्तियों को मंत्री नियुक्त किया जा सकता है- अध्यक्षीय शासन में राष्ट्रपति मंत्रियों को योग्यता व अनुभव के आधार पर नियुक्त करने के लिए स्वतंत्र है। राष्ट्रपति निकसन तथा जेराल्ड फोर्ड के शासनकाल में हेनरी कीसिंगर विदेश मंत्री बनाये गये जो पहले हारवर्ड विश्व विद्यालय में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के प्रोफेसर थे। परन्तु संसदीय सरकार में प्रधानमंत्री के ऊपर कई प्रकार के बन्धन होते हैं और वह मंत्रियों की नियुक्ति केवल योग्यता व अनुभव के आधार पर ही नही करता है।

8. बहुदलीय प्रणाली वाले देशों के लिए उपयुक्त- उन देशों के लिए जहॉ बहुदलीय प्रणाली है, अध्यक्षीय शासन अधिक लाभकारी हो सकता है, कारण स्पष्ट है कि राष्ट्रपति का निर्वाचन एक निश्चित समय के लिए हो जायेगा, संसदीय सरकार की तरह मिले-जुले मंत्रीमण्डलों के बदलने का भय समाप्त हो जायेगा।

9. विशाल राष्ट्रों के लिए उपयुक्त- विशाल और विभिन्नतापूर्ण राष्ट्रों के लिए अध्यक्षीय शासन अच्छा है। जिस देश में भाषा, जाति व संस्कृति की विभिन्नता हैं, उसमें संसदीय शासन की तुलना में अध्यक्षीय शासन अधिक सफल हो सकता है।

6.5 अध्यक्षात्मक शासन प्रणालीके दोष

अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली के दोष निम्नलिखित हैं:

1. अनुत्तरदायी एवं निरंकुश शासन- अध्यक्षीय शासन का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसमें राष्ट्रपति का कार्यकाल निश्चित होने के कारण उसके निरंकुश होने का खतरा बना रहता है। इसीलिए आलोचक इस प्रणाली को ''निरंकुश,

गैर जिम्मेदार एवं खतरनाक'' कहते हैं। उसे महाभियोग की अत्यधिक कठिन प्रक्रिया होने के कारण आसानी से नहीं हटाया जा सकता। अतः वह एक अधिनायक की तरह शासन कर सकता है। बेजहॉट ने कहा है कि ''आपने अपनी सरकार (अध्यक्षीय) के संबंध में अग्रिम निर्णय कर दिया है, भले ही वह आपको पसन्द है अथवा नहीं, वह आपकी इच्छा की है या नहीं, आपको कानूनन उसे रखना ही होगा।''

2. सहयोग का अभाव- अध्यक्षीय शासन में शक्ति पृथक्करण के कारण सरकार के विभिन्न अंगो में सहयोग नहीं रह पाता है, प्रत्येक अंग एक दूसरे से ईर्ष्या रखता है व संघर्ष के लिए तैयार रहता है। राष्ट्रपति न तो व्यवस्थापिका की समस्या को समझ पाता है और न व्यवस्थापिका राष्ट्रपति की समस्या को। कभी-कभी इन कारणों से शासन में मतभेद व गतिरोध पैदा हो जाता है। विशेष रूप से उस समय जबकि राष्ट्रपति के दल का व्यवस्थापिका में बहुमत न हो। वास्तव में राष्ट्रपति की शक्तियॉं चाहे जितनी व्यापक हो, परन्तु कांग्रेस यदि वित्तीय मॉंगों का अनुमोदन न करें तो कार्यपालिका विषम हो जाती है। ऐसा कई बार हुआ है।

3. कठोर शासन प्रणाली- अध्यक्षीय शासन में लचीलेपन का गुण नहीं होता है जोकि संसदीय शासन में होता है। इसके तीन कारण हैं, प्रथम, शासन संबंधी सभी बाते संविधान में निश्चित होती हैं। दूसरे, जब कोई संवैधानिक विवाद पैदा होता है तो न्यायालय की शरण ली जाती है, जिसका रवैया कठोर ही रहता है। तीसरे, संविधान कठोर होता है, अतः आवश्यकतानुसार संशोधन नही किये जा सकते हैं। यह सब बातें अमेरिका में पायी जाती हैं।

4. उत्तरदायित्व के निर्धारण की समस्या- अध्यक्षीय शासन में जब कोई गलत कार्य होता है, तो कार्यपालिका व व्यवस्थापिका इसका उत्तरदायित्व एक दूसरे पर थोपने का प्रयास करते है। संसदीय शासन की तरह यह उत्तरदायित्व कार्यपालिका के पास निश्चित नहीं होता है। चूँकि राजसत्ता बॅंट जाती है। अतः यह पता नही चलता कि शासन की बुराई के लिए कार्यपालिका दोषी है अथवा विधानमंडल। राष्ट्रपति को शिकायत रहती है कि जिन कानूनों को वह जरूरी समझता है, उन्हे कांग्रेस या विधानमंडल पारित नहीं कर रहा है। दूसरी ओर विधानमंडल के नेता, यह कहते है कि कानूनों को ईमानदारी के साथ लागू नहीं किया जा रहा है।

5. वैदेशिक नीति की दुर्बलता- अमरीकन अध्यक्षीय शासन के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रपति स्वतंत्र व सुदृढ़ वैदेशिक नीति पर नहीं चल सकता, क्योंकि व्यवस्थापिका उसके कार्यो में बांधा डालती है। 1919 में राष्ट्रपति विलसन द्वारा की गई 'वार्साय की संधि' को अमरीकन सीनेट ने ठुकरा दिया था।

6. शक्ति-पृथक्करण की अव्यावहारिकता- अध्यक्षीय शासन शक्ति-पृथक्करण के सिद्धान्त पर आधारित है, परन्तु यह सिद्धान्त अव्यावहारिक है। शासन के कार्यों का पूर्ण पृथक्करण न तो सम्भव है और न वॉंछनीय ही समस्त शासन मनुष्य के शरीर के समान है जिसके कई अंग कर देने से वह बेकार हो जाता है। शक्ति पृथक्करण के कारण कभी-कभी सरकार के अंगों में अनावश्यक मतभेद व गतिरोध होता है, जिससे प्रशासन निष्क्रिय हो जाता है।

7. एक व्यक्ति पर उत्तरदायित्व- अध्यक्षीय शासन का एक दोष यह भी है कि शासन का पूरा भार एक ही व्यक्ति राष्ट्रपति पर होता है। अतः शासन की सफलता या विफलता उसी के गुणों व अवगुणों पर निर्भर रहती है।

8. अत्यधिक खर्चीली- इस व्यवस्था में चुनाव बहुत खर्चीला होता है तथा आम-चुनावों के समय राजनीतिक दल पूर्ण रूप से सक्रिय होते हैं। वहीं सामान्य काल में महत्वहीन रहते हैं और राजनीतिक चेतना को प्रदीप्त करने का महत्वपूर्ण कार्य नही कर पाते।

6.6 संसदात्मक व अध्यक्षात्मक सरकारों में अंतर

1.संसदीय सरकार का आधार शक्तियों का संयोजन है, जबकि अध्यक्षीय सरकार का आधार है- शक्ति पृथक्करण।

2.संसदीय सरकार में राज्य का प्रधान (राजा या राष्ट्रपति) नाममात्र का होता है। प्रधानमंत्री सहित मंत्रीपरिषद्वास्तविक कार्यपालिका होती है, अध्यक्षीय शासन में राष्ट्रपति ही राज्य व सरकार दोनों का प्रधान होता है। अतः एक ही कार्यपालिका होती है।

3.संसदीय सरकार में कार्यपालिका, व्यवस्थापिका से स्वतंत्र नही रहती, अध्यक्षीय शासन में वह व्यवस्थापिका से स्वतंत्र रहती है। अध्यक्षीय शासन में व्यवस्थापिका व कार्यपालिका दोनों के कार्यक्षेत्र अलग-अलग रहते हैं।

4.संसदीय शासन में कार्यपालिका तभी तक अपने पद पर है जब तक कि उसे संसद (प्रायः निचले) मे बहुमत का समर्थन प्राप्त है, परन्तु अध्यक्षीय शासन में कार्यपालिका (राष्ट्रपति) का कार्यकाल संविधान द्वारा निश्चित होता है। इससे पहले केवल महाभियोग की कार्यवाही से ही उसे पदच्चुत किया जा सकता है।

5.संसदीय शासन में मंत्रिगण व्यक्तिगत व सामूहिक रूप से व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी रहते हैं, परन्तु अध्यक्षीय शासन में केवल राष्ट्रपति के प्रति।

6.संसदीय शासन में मंत्रिगण आवश्यक रूप से व्यवस्थापिका के सदस्य होते हैं और उनकी कार्यवाहियों में भाग लेते हैं। इतना ही नही वे व्यवस्थापिका का मार्ग-निर्देशन व नेतृत्व भी करते हैं। अध्यक्षीय शासन में मंत्री राष्ट्रपति के अधीनस्थ होते हैं।

7.संसदीय सरकार में प्रधानमंत्री और अध्यक्षीय शासन में राष्ट्रपति देश का नेतृत्व करता है।

अभ्यास प्रश्न-

1.निम्नांकित में से कौन सा एक अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली का आधारभूत तत्व है?

क. संविधान की कठोरता ख. एकल कार्यपालिका ग. व्यवस्थापिका की सर्वोच्चता घ. अवशिष्ट अधिकार राज्यों के पास होना

2. अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली का जनक किस देश को माना जाता है?

क. अमेरिका ख. भारत ग. ब्रिटेन
घ. फ्रान्स

3. निम्नलिखित में से कौन अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था का लक्षण नहीं है?

क. स्थिरता ख. समस्त शक्तियाँ राज्याध्यक्ष के पास ग. शक्ति पृथक्करण घ. नाममात्र और

6.7 सारांश

राष्ट्रपति शासन प्रणाली शक्तियों का स्पष्ट पृथक्करण प्रदान करता है, जिसमें सीधे निर्वाचित राष्ट्रपति राज्य और सरकार के प्रमुख के रूप में कार्य करता है। इससे स्थिरता और जवाबदेही आ सकती है, क्योंकि राष्ट्रपति सीधे लोगों के प्रति जवाबदेह होता है। हालाँकि, राष्ट्रपति प्रणाली की कुछ कमियाँ भी हैं: शक्तियों के पृथक्करण के परिणामस्वरूप कभी-कभी गतिरोध और राजनीतिक ध्रुवीकरण हो सकता है, क्योंकि राष्ट्रपति और विधायिका अलग-अलग राजनीतिक दलों से संबंधित हो सकते हैं और उनके परस्पर विरोधी एजेंडे हो सकते हैं। यह प्रभावी शासन और आवश्यक कानून पारित करने में बाधा उत्पन्न कर सकता है।

अंततः, राष्ट्रपति शासन प्रणाली की सफलता इसके संस्थानों और अभिनेताओं की एक साथ काम करने, लोकतांत्रिक सिद्धांतों को बनाए रखने और लोगों के सर्वोत्तम हितों की सेवा करने की क्षमता पर निर्भर करती है। प्रणाली का लगातार मूल्यांकन और सुधार करके, इसकी कमियों को दूर करके, और सहयोग और समावेशिता के माहौल को बढ़ावा देकर, राष्ट्रपति शासन प्रणाली शासन की एक प्रभावी और उत्तरदायी प्रणाली हो सकती है।

6.8 शब्दावली

सामूहिक उत्तरदायित्व- सब की जिम्मेदारी, शक्ति पृथक्करण- शक्ति का बंटा होना, बहुदलीय- एक से अधिक दल, आपात स्थिति- संकट का समय

6.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख 2. क 3. सत्य

6.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

आधुनिक तुलनात्मक राजनीति- पीटर एच0 मार्कल

राजनीति विज्ञान एक परिचय- पिनांक एवं स्मिथ

संवैधानिक सरकारें और लोकतंत्र- कार्ल जे0 फ्रैडरिक

तुलनात्मक राजनीति एंव राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी0 गैना

6.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक राजनीति एंव राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी0 गैना

2. आधुनिक सरकारें- सिद्धान्त एंव व्यवहार- डॉ0 पुष्पेश पाण्डे, डॉ0 विजय प्रकाश पंत एंव घनश्याम जोशी

6.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. अध्यक्षीय शासन प्रणाली से आप क्या समझते हैं? इसकी विशेषताओं को स्पष्ट करते हुए इसके गुण-दोष बताइये।

2. संसदात्मक व अध्यक्षात्मक शासन प्रणालियों को स्पष्ट करते हुए, दोनों शासन प्रणालियों में अंतर को स्पष्ट करें।

इकाई 7 एकात्मक शासन प्रणाली

इकाई की संरचना

7.0 प्रस्तावना

7.1 उद्देश्य

7.2 एकात्मक शासन- अर्थ एवं परिभाषा

7.3 एकात्मक शासन की विशेषताएँ

7.4 एकात्मक शासन के गुण-दोष

7.5 एकात्मक शासन के गुण

7.6 एकात्मक शासन के दोष

7.7 सारांश

7.8 पारिभाषिक शब्दावली

7.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

7.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

7.11 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

7.12 निबंधात्मक प्रश्न

7.0 प्रस्तावना

वर्तमान में छोटे राज्यों के साथ बड़े राज्य भी अस्तित्व में हैं। इन बड़े और विस्तृत राज्यों का शासन एक केन्द्रीय आधार पर या एक स्थान से कुशलता के साथ नहीं किया जा सकता। इसीलिए शासन की सुविधा की दृष्टि से समस्त राज्य को कई इकाइयों में बांट दिया जाता है। तत्पश्चात केन्द्र एवं इकाइयों में शक्तियों का विभाजन किया जाता है। संविधान द्वारा क्षेत्र के आधार पर शक्तियों का जो केन्द्रीकरण या वितरण किया जाता है और देश के शासन में केन्द्रीय और स्थानीय इकाइयों के बीच जों सम्बन्ध होता है,उसके आधार पर शासन व्यवस्थाओं को एकात्मक और संघात्मक दो रूपों में वर्गीकृत किया जाता है। इस इकाई के अंतर्गत हम एकात्मक शासन प्रणाली को समझेंगे।

सरकार के एकात्मक रूप में, शक्ति और अधिकार राष्ट्रीय या केंद्रीय स्तर पर केंद्रित होते हैं, जहां एक ही सरकार सभी प्रशासनिक प्रभागों पर नियंत्रण रखती है और पूरे देश को प्रभावित करने वाले निर्णय लेने की क्षमता रखती है। यह केंद्रीय प्राधिकरण अंतिम शक्ति रखता है और स्थानीय या क्षेत्रीय सरकारों को कुछ जिम्मेदारियाँ सौंप सकता है, लेकिन आवश्यक समझे जाने पर ऐसे प्रतिनिधिमंडल को रद्द करने या संशोधित करने की क्षमता रखता है। एकात्मक प्रणाली की परिभाषित विशेषताओं में से एक पूरे देश में कानूनों और नीतियों की एकरूपता है। केंद्र सरकार ऐसे कानून स्थापित और लागू करती है जो सभी क्षेत्रों में समान रूप से लागू होते हैं, जिससे शासन में स्थिरता और सुसंगतता सुनिश्चित होती है। यह केंद्रीकृत निर्णय लेने की संरचना त्वरित और कुशल नीति कार्यान्वयन की अनुमति देती है और केंद्र सरकार को राष्ट्रीय संकटों या आपात स्थितियों पर तेजी से प्रतिक्रिया करने में सक्षम बनाती है।

7.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के उपरान्त आप समझ पायेंगे-

1. एकात्मक शासन प्रणाली की अर्थ और परिभाषा समझ पायेंगे।
2. एकात्मक शासन प्रणाली की विशेषताओं को जान पायेंगे।
3. एकात्मक शासन प्रणाली के गुण व दोष जान पायेंगे।

7.2 एकात्मक शासन प्रणाली का अर्थ एवं परिभाषा

एकात्मक शासन व्यवस्था में, शक्तियों का केन्द्रीकरण होता है। संविधान द्वारा शासन की समस्त शक्तियॉं केवल केन्द्रीय सरकार को ही सौंपी जाती हैं तथा इकाइयों को शासन की शक्तियाँ केन्द्र से प्राप्त होती हैं। स्थानीय अथवा इकाइयों की सरकारों का अस्तित्व एवं शक्तियॉं केन्द्रीय सरकार की इच्छा पर निर्भर करती है। एकात्मक शासन व्यवस्थाओं के प्रमुख उदाहरण हैं- ब्रिटेन, फ्रांस,चीन और बेल्जियम।

विभिन्न विद्वानों ने एकात्मक शासन की परिभाषाएँ दी हैं-

सी0एफ0स्ट्रांग के अनुसार ''एकात्मक शासन में केन्द्रीय सरकार सर्वोच्च होती है तथा सम्पूर्ण शासन एक केन्द्रीय सरकार के अधीन संगठित होता है और उसके अधीन जो भी क्षेत्रीय प्रशासन कार्य करता है, उसकी शक्तियॉं उसे केन्द्र सरकार से प्राप्त होती हैं।''

फाइनर के शब्दों में ''एकात्मक शासन वह शासन है जिसमें सम्पूर्ण सत्ता, शक्ति, केन्द्र में निहित होती है और जिसकी इच्छा एवं अभिकरण पूर्ण क्षेत्र पर वैद्य रूप से मान्य होते हैं।''

प्रो0गार्नर के अनुसार ''एकात्मक शासन, शासन का वह रूप है जिसमें शासन की सर्वोच्च शक्ति संविधान के माध्यम से एक केन्द्रीय सरकार को प्राप्त होती है तथा केन्द्र एवं स्थानीय सरकार के बीच संवैधानिक शक्ति का विभाजन नही होता और केन्द्र सरकार से ही स्थानीय सरकारों को शक्ति एवं स्वतंत्रता प्राप्त होती है।''

डायसी के शब्दों में ''एकात्मक राज्य में कानून बनाने की समस्त शक्तियॉं केन्द्रीय सत्ता के हाथों में निवास करती हैं।''

विलोबी के शब्दों में ''एकात्मक शासन में शासन के सम्पूर्ण अधिकार मौलिक रूप से एक केन्द्रीय सरकार में निहित रहते हैं तथा केन्द्रीय सरकार अपनी इच्छानुसार शक्तियों का वितरण इकाइयों में करती है।''

7.3 एकात्मक शासन प्रणाली के विशेषताएं

एकात्मक शासन प्रणाली की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. शासन की पूर्ण शक्ति केन्द्र में निहित- एकात्मक शासन की प्रमुख विशेषता यह है कि शासन कार्य की समस्त शक्तियॉं केन्द्रीय सरकार में निहित रहती हैं। शासन की सुविधा के लिए राज्य को प्रदेशों एवं प्रान्तों में बॉंटा जा सकता है किन्तु इन प्रदेशों व प्रान्त सरकारों को शासन कार्य के लिए स्वतंत्र शक्तियॉं प्राप्त नहीं होती। केन्द्र ही उन्हें आवश्यकतानुसार शक्तियॉं देता है। उन्हें केन्द्र के अधीन रहकर ही कार्य करना होता है और इनका अस्तित्व पूर्णतः केन्द्र सरकार की इच्छा पर निर्भर रहता है।

2. इकहरी नागरिकता- एकात्मक शासन में नागरिकों को इकहरी नागरिकता (केन्द्र की) प्राप्त होती है। जबकि संघात्मक शासन में केन्द्र व राज्यों की पृथक-पृथक यानि दोहरी नागरिकता प्राप्त होती है।

3. एक संविधान- एकात्मक शासन में सम्पूर्ण राष्ट्र का एक संविधान होता है। इकाइयों के लिए कोई अलग संविधान नहीं होता। संघात्मक शासन में कहीं-कहीं पर इकाइयों के अलग-अलग संविधान भी होते हैं। जैसे भारत में जम्मू-कश्मीर राज्य का अलग संविधान हैं। एकात्मक शासन वाले राज्यों में ऐसा नहीं होता।

4. कुशल निर्णय लेना: एकात्मक प्रणाली की केंद्रीकृत प्रकृति त्वरित और कुशल निर्णय लेने की अनुमति देती है। नीति कार्यान्वयन को सुव्यवस्थित किया जा सकता है क्योंकि सरकार के कई स्तरों के बीच बातचीत या समन्वय की कोई आवश्यकता नहीं है। केंद्र सरकार अंतर-सरकारी विवादों से बाधित हुए बिना राष्ट्रीय संकटों या आपात स्थितियों पर तुरंत प्रतिक्रिया दे सकती है।

5. सुव्यवस्थित नौकरशाही: एकल शासकीय प्राधिकारी के साथ, एकात्मक प्रणाली में आम तौर पर एक सुव्यवस्थित नौकरशाही होती है। सरकार की कई परतों की अनुपस्थिति प्रशासनिक जटिलताओं को कम करती है और अधिक कुशल संसाधन आवंटन और सेवा वितरण को जन्म दे सकती है।

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि सरकार के एकात्मक स्वरूप की विशेषताएं विशिष्ट देश और उसकी राजनीतिक संरचना के आधार पर भिन्न हो सकती हैं। विभिन्न देश अलग-अलग डिग्री के केंद्रीकरण या विकेंद्रीकरण को अपना सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप एकात्मक प्रणाली की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ होती हैं।

7.4 एकात्मक शासन व्यवस्था के गुण-दोष

एकात्मक प्रणाली एक शासन संरचना है जहां शक्ति और अधिकार राष्ट्रीय या केंद्रीय स्तर पर केंद्रीकृत होते हैं, जिसमें क्षेत्रीय या स्थानीय सरकारों को सीमित स्वायत्तता दी जाती है। सरकार के किसी भी रूप की तरह, एकात्मक प्रणाली की भी अपनी ताकत और कमजोरियां हैं, जिन्हें हम इस इकाई में समझेंगे।

7.5 एकात्मक शासन व्यवस्था के गुण

1. शासन में एकरूपता व शक्ति सम्पन्नता- एकात्मक शासन व्यवस्था में शासन में एकरूपता पाई जाती है। सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए एक सा कानून होता है और केन्द्र के निर्देशन में उसे समान रूप से सर्वत्र लागू किया जाता है। फलतः पूरे राष्ट्र के शासन कार्यों में एकरूपता बनी रहती है। शासन की इस एकरूपता के कारण शासन-शक्ति संगठित रहती है, शासन कार्यों में दृढ़ता एवं मजबूती आ जाती है और संकट के समय यह शीघ्र निर्णय लेने के लिए सक्षम हो जाता है।

2. राष्ट्रीय एकता में वृद्धि- एकात्मक शासन व्यवस्था में सम्पूर्ण राज्य में एक सा कानून, एक सी शासन व्यवस्था होने तथा सभी को एक समान न्याय मिलने के कारण, आपसी मतभेद पैदा नहीं हो पाते। सभी के साथ एक सा व्यवहार होने के कारण नागरिकों में राष्ट्र के प्रति सम्मान पैदा होता है और राष्ट्रीय एकता में वृद्धि होती हैं।

3. संकटकाल के लिए उपयुक्त- एकात्मक शासन व्यवस्था में शासन की शक्ति एक ही स्थान पर केन्द्रीत होने के कारण संकट के समय यह शीघ्र निर्णय लेने में सक्षम होता है। इन निर्णयों को गुप्त भी रखना होता है और शीघ्र ही कार्यान्वित भी करना पड़ता है, इस हेतु एकात्मक शासन ही सक्षम होता है।

4. मितव्ययता- एकात्मक शासन व्यवस्था में एक ही स्थान से शासन का संचालन होने और राज्य इकाइयों में अलग से कोई मंत्रिमण्डल व व्यवस्थापिका का गठन न करने से काफी खर्च बच जाता है। इस दृष्टि से यह मितव्ययी शासन व्यवस्था है।

5. छोटे राज्यों के लिए उपयोगी- एकात्मक शासन व्यवस्था छोटे राज्यों के लिए बहुत ही उपयोगी है, क्योंकि इसमें सम्पूर्ण शासन का संचालन एक ही स्थान से किया जाता है।

6. नीति संबंधी निर्णय में एकरूपता- एकात्मक शासन प्रणाली में नीति संबंधी जो भी निर्णय लिए जाते हैं उनमें एकरूपता बनी रहती है क्योंकि ये निर्णय एक स्थान से अर्थात केन्द्र से लिये जाते हैं। इसके अतिरिक्त नीति-संबंधी निर्णयों के लिए केन्द्र को राज्य सरकारों से कोई भी राय व सहमति नहीं लेनी होती है, जिस कारण नीति संबंधी निर्णयों में एकरूपता आ जाती हैं।

7. आर्थिक विकास के लिए उपयुक्त- एकात्मक शासन व्यवस्था में एक ही स्थान से निर्णय लिये जाने के कारण पूरे राष्ट्र की आर्थिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निर्णय लिए जा सकते हैं, जिस कारण यह व्यवस्था आर्थिक विकास के लिए उपयोगी होती हैं।

8. सुदृढ़ अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति- एकात्मक शासन की स्थिति अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में काफी सुदृढ़ रहती है, क्योंकि इसके अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में शीघ्रता से निर्णय लिया जा सकता है, समान रूप की नीति का अनुसरण किया जा सकता है और अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्वों को अधिक कुशलता के साथ निभाया जा सकता है।

9. संघर्ष की सम्भावना नहीं- एकात्मक शासन में शासन की समस्त शक्तियॉ केन्द्र के हाथों में रहती हैं तथा इकाइयॉ केन्द्र के पूर्णतः अधीन होकर कार्य करती हैं, जिस कारण केन्द्र तथा इकाइयों के बीच संघर्ष की सम्भावना नहीं रहती है। प्रशासनिक निर्णय लेने में आसानी होती है।

10. स्पष्ट पदानुक्रम और जवाबदेही: एकात्मक प्रणाली की केंद्रीकृत प्रकृति सत्ता का एक स्पष्ट पदानुक्रम स्थापित करती है, जिससे निर्णय लेने और नीति कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार लोगों की पहचान करना और उन्हें जवाबदेह बनाना आसान हो जाता है। इससे शासन में पारदर्शिता, प्रभावशीलता और जवाबदेही बढ़ती है।

7.6 एकात्मक शासन प्रणाली के दोष

1. शासन कार्य में कुशलता की कमी- एकात्मक शासन में शासन कार्यों का सम्पूर्ण संचालन एक ही स्थान अर्थात केन्द्र से संचालित होता है, जिसे शासन कार्य की कुशलता के लिए उपर्युक्त नहीं कहा जा सकता, क्योंकि एक ही स्थान से केन्द्रीय सरकार पूरे देश में कुशल शासन संचालन कर ले यह सम्भव नहीं है। अतः देश के सभी भागों के हितों व आवश्यकताओं की पूर्ति केन्द्र द्वारा नहीं हो सकती।

2. लोकतंत्र की भावना के विरूद्ध- एकात्मक शासन व्यवस्था लोकतंत्र की भावना के विरूद्ध हैं क्योंकि इसमें प्रान्तीय अथवा स्थानीय स्वशासन को वो महत्ता नहीं मिलती जो लोकतंत्र में मिलती है।

3. शासन की निरंकुशता की सम्भावना- एकात्मक शासन व्यवस्था में शासन की निरंकुशता का भय बना रहता है क्योंकि शासन की समस्त शक्तियॉं केन्द्र में ही निहित होती हैं। केन्द्र अपनी शक्तियों को बढ़ा कर निरंकुश न हो जाए और शासन के सभी क्षेत्रों में अपनी मनमानी न करने लगे, इस बात की सम्भावना बनी रहती हैं।

4. विविधताओं वाले राष्ट्रों में असफल- एकात्मक शासन व्यवस्था विविधताओं वाले राष्ट्रों में असफल रहती हैं, छोटे-छोटे राज्यों के लिए यह शासन व्यवस्था सफल हो सकती है, बड़े व विविधताओं वाले राष्ट्रों में नहीं, क्योंकि एक ही स्थान से शासन चलाने पर विभिन्न जाति, धर्म, भाषाओं व नस्लों के लोगों के हितों की पूर्ति सम्भव नहीं हो सकती।

5. स्थानीय संस्थाओं के क्रिया-कलापों पर प्रतिबन्ध- एकात्मक शासन व्यवस्था में, शासन में इतनी कठोरता और अंकुश रहता है कि इससे स्थानीय संस्थाओं के क्रिया-कलापों पर प्रतिबन्ध लग जाते हैं उनकी स्वायत्तता लगभग समाप्त ही हो जाती है।

6. शासन कार्यो के प्रति उदासीन जनता- एकात्मक शासन-व्यवस्था में जनता को सार्वजनिक कार्यो में भागीदारी का पूर्ण अवसर प्राप्त नहीं होता, जिस कारण जनता सार्वजनिक कार्यों के प्रति उदासीन रहती हैं। जनता को प्रशासनिक कार्यो में भाग लेने का अवसर प्राप्त न होने के कारण उन्हें राजनीतिक ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता है।

7. क्रान्ति का भय- एकात्मक शासन पर अनुदार होने का आरोप लगाया जाता है, क्योंकि प्रशासनिक अधिकारियों का अपरिवर्तनशील श्रंखलाबद्ध शासन स्थापित हो जाता है। अपनी उदारता के कारण यह प्रगति विरोधी हो जाता है तथा नई योजनाओं को जल्दी क्रियान्वित नहीं करता। फलस्वरूप इस शासन व्यवस्था में क्रान्ति का भय उत्पन्न हो जाता है।

अभ्यास प्रश्न- 1

1. एकात्मक शासन प्रणाली में शक्तियों का विकेन्द्रीकरण होता है। सही/गलत

2. एकात्मक शासन प्रणाली की यह परिभाषा किसने दी ‘‘एकात्मक शासन वह शासन है जिसमें सम्पूर्ण सत्ता, शक्ति, केन्द्र में निहित होती है और जिसकी इच्छा एवं अभिकरण पूर्ण क्षेत्र पर वैद्य रूप से मान्य होते हैं।‘‘

क. फाइनर ख. गार्नर ग. डायसी घ. लास्की

3. इकहरी नागरिकता..... पायी जाती है।

क. एकात्मक शासन प्रणाली में ख. संघात्मक शासन प्रणाली में

ग. मिश्रित शासन प्रणाली में घ. इनमें से कोई नहीं

7.7 सारांश:

सरकार का एकात्मक स्वरूप दुनिया भर के कई देशों में शासन के लिए एक प्रमुख मॉडल के रूप में खड़ा है। सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, एकात्मक प्रणाली निर्णय लेने में दक्षता और स्पष्टता को बढ़ावा देती है। एक संकेंद्रित प्राधिकार के साथ, विकेंद्रीकृत प्रणालियों में उत्पन्न होने वाली जटिलताओं के बिना, नीतियों और कानूनों को तेजी से लागू किया जा सकता है। निर्णायक रूप से कार्य करने की यह क्षमता सरकारों को स्थिरता और प्रगति को बढ़ावा देते हुए चुनौतियों और अवसरों पर तुरंत प्रतिक्रिया देने में सक्षम बनाती है।

एकात्मक प्रणाली की सफलता सुनिश्चित करने के लिए, केंद्रीकृत प्राधिकार और सत्ता के हस्तांतरण के बीच संतुलन बनाना महत्वपूर्ण है। स्थानीय शासन पर जोर देने से एकात्मक संरचना की दक्षता और एकता लाभ को बनाए रखते हुए क्षेत्रीय असमानताओं की चिंताओं को दूर करने में मदद मिल सकती है।

सरकार का एकात्मक स्वरूप कई संदर्भों में एक व्यवहार्य और प्रभावी मॉडल बना हुआ है, जो स्थिर शासन, त्वरित निर्णय लेने और राष्ट्रीय एकता के लिए एक मजबूत आधार प्रदान करता है। हालाँकि, नीति निर्माताओं के लिए यह आवश्यक है कि वे अपने नागरिकों की उभरती जरूरतों और आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए प्रणाली का लगातार आकलन करें और उसे अनुकूलित करें, जिससे केंद्रीय प्राधिकरण और क्षेत्रीय स्वायत्तता के बीच सामंजस्यपूर्ण संतुलन सुनिश्चित हो सके।

7.8 शब्दावली

केन्द्रीकरण- एक स्थान पर एकत्र होना

अपरिवर्तनशील- जो परिवर्तित (बदल) ना हो सके

प्रभुत्व शक्ति- सर्वोच्च शक्ति, प्रभावी शक्ति

7.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. गलत 2. क 3. क

7.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. इंटर-गवर्मेन्ट रिलेशन इन इंडिया ए स्टडी ऑफ फैडरलिज्म- अमल राय

2. फैडरल गवर्मेन्ट- के0 सी0 व्हीयर

3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी गैना

7.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी गैना

2. आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त- डॉ0 पुष्पेश पाण्डे, डॉ विजय पंत एवं घनश्याम जोशी

7.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. एकात्मक शासन प्रणाली के अर्थ एवं परिभाषा को स्पष्ट करते हुए इसके गुण-दोष बतलाइये।

2. एकात्मक शासन प्रणाली की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिये।

इकाई 8 संघात्मक शासन प्रणाली

इकाई संरचना

8.0 प्रस्तावना

8.1 उद्देश्य

8.2 संघात्मक शासन प्रणाली: अर्थ, परिभाषा

8.3 संघात्मक शासन की विशेषताएँ

8.4 संघात्मक शासन के गुण-दोष

8.5 संघात्मक शासन के गुण

8.6 संघात्मक शासन के दोष

8.7 संघ के लिए अपेक्षित शर्तें

8.8 एकात्मक व संघात्मक शासन प्रणाली में अंतर

8.9 सारांश

8.10 शब्दावली

8.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

8.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामाग्री

8.14 निबंधात्मक प्रश्न

8.0 प्रस्तावना

संघीय सरकार प्रणाली शासन का एक मॉडल है जिसे दुनिया भर के कई देशों द्वारा व्यापक रूप से अपनाया जाता है। यह केंद्रीय या राष्ट्रीय सरकार और क्षेत्रीय या राज्य सरकारों के बीच शक्ति और अधिकार को विभाजित करने के सिद्धांत पर आधारित है। इस प्रणाली में, सरकार के दोनों स्तरों पर प्रभाव के अलग-अलग और स्वतंत्र क्षेत्र होते हैं, और वे एक ही राजनीतिक इकाई के तहत सह-अस्तित्व में होते हैं।

संघीय सरकार के पीछे मुख्य विचार केंद्रीकृत प्राधिकरण के लाभों और क्षेत्रीय स्वायत्तता के लाभों के बीच संतुलन बनाना है। शक्ति को क्षैतिज रूप से वितरित करके, यह एक ही राष्ट्र के भीतर विविध आबादी, अलग-अलग हितों और अद्वितीय क्षेत्रीय आवश्यकताओं द्वारा उत्पन्न चुनौतियों का समाधान करना चाहता है।

8.1 उद्देश्य

1. संघात्मक शासन प्रणाली की परिभाषा, उसकी विशेषताएँ व गुण- दोष के विषय में जान पाएंगे।

2. संघ के लिए अपेक्षित शर्तों के विषय में जानकारी ले पाएंगे।

3. एकात्मक व संघातमाक शासन प्रणाली में अंतर को जान पाएंगे।

8.2 संघात्मक शासन प्रणाली: अर्थ और परिभाषा

संघात्मक शासन प्रणाली में संविधान के द्वारा केन्द्र व उसकी इकाइयों के बीच शक्तियों का विभाजन किया जाता है। इस शासन में संघीय (केन्द्रीय) सरकार और राज्य सरकारें अपने-अपने क्षेत्रों में संविधान द्वारा दी गई शक्तियों के आधार पर शासन कार्य करती हैं। दोनों सरकारें अपने-अपने क्षेत्रों में स्वतंत्र होकर कार्य करती हैं। 'संघ' शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के फोएड्स शब्द से हुई हैं, जिसका अर्थ है, 'समझौता' या 'संधि'। इस अर्थ के आधार पर समझौता या सन्धि द्वारा निर्मित राज्य को 'संघ' कहा जाता है। वर्तमान विश्व में संघीय राज्यों की संख्या दो दर्जन से ज्यादा नहीं है किन्तु ये राज्य-विश्व के बहुत बड़े हिस्से पर फैले हैं। विश्व के 06 बड़े राज्यों में 05 संघीय राज्य हैं, जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका ,कनाडा, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, रूस। भारत, जर्मनी, दक्षिण अफ्रीका, व स्विट्जरलैण्ड आदि अन्य प्रमुख देश हैं। ज्ञातव्य है कि संघीय व्यवस्था ऐसा बना बनाया ढॉंचा नहीं है जिसे भिन्न-भिन्न देशों में ज्यों का त्यों लागू किया जा सके। भिन्न-भिन्न देशों में अपनी-अपनी परिस्थितियों के अनुसार संघीय व्यवस्था अपने-अपने ढंग से विकसित हुई है।

परिभाषाएँ

फाइनर के अनुसार ''संघात्मक राज्य वह है, जिसमें सत्ता शक्ति का एक भाग इकाइयों में निहित रहता है, दूसरा भाग केन्द्र में, जो क्षेत्रीय इकाइयों के लोगों द्वारा जान-बूझकर संगठित की जाती है।''

गार्नर के अनुसार, ''संघ एक ऐसी प्रणाली है, जिसमें केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारें एक ही प्रभुत्व शक्ति (संविधान) के अधीन होती हैं तथा ये सरकारें अपने-अपने क्षेत्र में संविधान द्वारा दी गई शक्तियों के आधार पर ही कार्य करती हैं।''

स्ट्रांग के शब्दों में, ''एक संघात्मक राज्य कई राज्यों के मेल से बना एक प्रभुत्व-सम्पन्न राज्य है जिसकी अपनी सत्ता ,मेल करने वाले राज्यों से प्राप्त होती है और जिसमें वे राज्य इस प्रकार बँधे होते हैं कि एक राजनीतिक इकाई का निर्माण होता है।''

8.3 संघात्मक शासन की विशेषताएँ

संघात्मक शासन की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. लिखित एवं कठोर संविधान- संघीय शासन का संविधान लिखित एवं कठोर होता है, ऐसा इसलिए कि इकाइयों के अहित में संविधान में कोई संशोधन न हो सके।

2. संविधान की सर्वोच्चता- संघात्मक शसन में संविधान सर्वोच्च होता है। केन्द्र एवं राज्य सरकारें संविधान द्वारा प्राप्त शक्तियों के आधार पर ही कार्य करती हैं, वे संविधान के प्रतिकूल कोई कार्य नहीं कर सकती हैं।

3. सम्प्रभु शक्ति का दोहरा प्रयोग- संघीय शासन में सम्प्रभुता अविभाजित होती है किन्तु एक संघीय राज्य में सम्प्रभुता की अभिव्यक्ति केन्द्र सरकार व राज्य सरकार को प्राप्त शक्तियों के आधार पर होती है तथा दोनों ही अपनी शक्तियॉ संविधान से प्राप्त करती हैं।

4. कार्यों एवं शक्ति का विभाजन- संघीय शासन व्यवस्था में शासन की शक्तियों का विभाजन संविधान द्वारा केन्द्र व राज्य सरकारों के बीच किया जाता है। शक्तियों के वितरण के साथ ही दोनों सरकारें अपने-अपने क्षेत्रों में कार्य करने को भी स्वतंत्र होती हैं।

5. स्वतंत्र एवं सर्वोच्च न्यायपालिका- संघीय शासन में सर्वोच्च न्यायालय स्वतंत्र होता है। उस पर सरकार के किसी भी अंग (व्यवस्थापिका व कार्यपालिका) का न तो कोई प्रभाव होता है न ही कोई दबाव। संविधान के संरक्षक के रूप में होने के कारण यह सर्वोच्च होता है।

6. दोहरी नागरिकता- संघीय शासन-व्यवस्था में नागरिकों को दोहरी नागरिकता प्राप्त होती है, एक तो केन्द्र की व दूसरी राज्यों (इकाइयों) की किन्तु भारतीय संघ इसका एक अपवाद है। यहॉ नागरिकों को संघ की ही नागरिकता प्राप्त हैं।

7. संबंध विच्छेद की स्वीकृति नहीं- संघीय शासन व्यवस्था में संघ एक स्थाई राज्य होता है। इसलिए किसी भी संघात्मक राज्यों में इकाइयों केा केन्द्र से अलग होने की स्वतंत्रता प्राप्त नहीं होती है।

8. द्विसदनीय विधानमण्डल- संघीय शासन में द्विसदनीय विधानमण्डल (संसद) की व्यवस्था होती है। एक सदन-जिसमें राष्ट्र का प्रतिनिधित्व होता है और दूसरा सदन-जिसमें संघ की इकाइयों को प्रतिनिधित्व दिया जाता है। अमरीकी 'प्रतिनिधि सभा' व भारत की 'लोकसभा' समस्त राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करती हैं, जबकि 'सीनेट' व 'राज्य सभा' इकाइयों का प्रतिनिधित्व करती हैं।

8.4 संघात्मक शासन के गुण-दोष

वर्तमान में शासन व्यवस्था का सर्वाधिक प्रचलित रूप संघात्मक शासन है। इसीलिए 'सिजविक' का कथन है कि ''जब हम शासन व्यवस्था के स्वरूप के संबंध में भूत से भविष्य की ओर नजर दौड़ाते हैं तो हमें संघात्मक शासन-व्यवस्था के विकास की सबसे अधिक सम्भावना प्रतीत होती है। लास्की भी इसके समर्थन में कहते हैं कि सम्पूर्ण विश्व समाज संधात्मक शासन-व्यवस्था की ओर बढ़ रहा है।

8.5 संघात्मक शासन के गुण

1. विविधता वाले राष्ट्रों के लिए उपयोगी- संघात्मक शासन व्यवस्था विविधता वाले राष्ट्रों के लिए उपयोगी है। जिस राष्ट्र में धर्म, जाति, वर्ग व भाषा के आधार पर विविधता पायी जाती है, उस राष्ट्र में यह शासन व्यवस्था इन विविधताओं की रक्षा करते हुए उपयोगी सिद्ध होती है। इस शासन व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रीय एकता एवं स्थानीय शासन दोनों के ही हित सम्भव है। भारत जैसे देश में जहॉ इतनी विविधता पायी जाती है संघीय शासन पद्धति श्रेष्ठता के साथ कार्य कर रही हैं।

2. छोटे व कमजोर राज्यों के लिए उपयुक्त- संघीय शासन व्यवस्था में छोटे व कमजोर राज्य संगठित होकर शक्तिशाली राज्य बन सकते हैं क्योंकि संघीय शासन व्यवस्था में छोटे व कमजोर राज्यों की स्वतंत्रता और उनका पृथक अस्तित्व बना रहता है और उन्हें आर्थिक विकास व सुरक्षा के पूर्ण अवसर प्राप्त होते हैं।

3. सार्वजनिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण- संघीय शासन व्यवस्था सार्वजनिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण है। इस व्यवस्था में नागरिकों को राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में विकास के पूर्ण अवसर प्राप्त होते हैं तथा संघ व राज्य इकाइयों को सार्वजनिक जीवन को उपयोगी बनाने हेतु सभी तरह के प्रयोग करने की स्वतंत्रता होती है।

4. बड़े राष्ट्रों के लिए उपयोगी- संघीय शासन प्रशासनिक क्षमता की दृष्टि से बड़े राष्ट्रों के लिए उपयोगी है। संघीय शासन में केन्द्र व राज्य इकाइयों के बीच शासन कार्यो की शक्तियों का बंटवारा होने के कारण यह शासन विशाल राज्यों के लिए उपयुक्त है।

5. नागरिक अधिकारों की सुरक्षा- संघीय शासन में नागरिक अधिकारों की सुरक्षा बनी रहती है क्योंकि इस शासन व्यवस्था में शासन की निरंकुशता पर नियंत्रण लगाये जाते हैं, जिससे नागरिक अधिकार सुरक्षित रहते हैं।

6. आर्थिक रूप से लाभकारी- संघात्मक शासन आर्थिक रूप से लाभकारी है। इस शासन व्यवस्था में केन्द्र तथा राज्य इकाइयों को अपने-अपने आर्थिक संसाधनों को विकसित करने का अवसर मिलता है। संघात्मक शासन मितव्ययी भी है। सेना, रेल, डाक एवं तार तथा अन्य व्यवस्थाओं के एक हो जाने से व्यय में बहुत कमी आ जाती है।

7. सार्वजनिक कार्यों के प्रति उत्साह- संघात्मक शासन में नागरिकों की राजनीतिक चेतना के कारण सार्वजनिक कार्यों के प्रति उनमें उत्साह रहता है। संघात्मक शासन में नागरिकों को शासन-कार्यों में भागीदारी प्राप्त होती है, जिस कारण नागरिक समस्याओं के समाधान में अधिक रूचि लेते हैं, और उनमें आत्म-सम्मान व अभिरूचि की भावना का विकास होता है।

8. प्रजातंत्र के लिए उपयोगी- संघात्मक शासन-व्यवस्था प्रजातंत्र के लिए उपयोगी है, क्योंकि इसमें सत्ता के विकेन्द्रीकरण के कारण स्थानीय स्वशासन की भावनाओं का विकास होता है, जो प्रजातंत्र की सफलता के लिए आवश्यक है। स्थानीय स्वशासन के विकास के कारण नागरिकों को राजनीतिक ज्ञान मिलता है, उनमें राजनीतिक चेतना का विकास होता है।

9. निरंकुशता की सम्भावना नहीं- संघात्मक शासन व्यवस्था में सरकार के निरंकुश होने की सम्भावना नहीं रहती। इस शासन व्यवस्था में केन्द्र व राज्य इकाइयों के बीच शासन-सत्ता का स्पष्ट विभाजन रहने के कारण केन्द्रीय सरकार निरंकुश और स्वेच्छाचारी नहीं बन सकती है। संविधान तथा न्यायपालिका का उनकी शक्तियों पर नियंत्रण रहता है। केन्द्र तथा स्थानीय सरकारें कोई भी एक-दूसरे के कार्य-क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं कर सकती। स्थानीय स्वशासन के संबंध में राज्य इकाइयों को बहुत स्वतंत्रता रहती है, जिस कारण तानाशाही की सम्भावना नहीं रहती।

8.6 संघात्मक शासन के दोष

उपरोक्त गुणों के बावजूद संघात्मक शासन में अनेक दोष पाए जाते हैं-

1. संगठन व कार्य-पद्धति में भिन्नता- संघीय शासन प्रणाली में प्रशासनिक संगठन व कार्य-पद्धति में भिन्नता पाई जाती है क्योंकि केन्द्र एवं राज्यों को अपने-अपने क्षेत्रों में कार्य करने के लिए स्वतंत्रता और शक्तियॉं प्राप्त होती हैं। कई बार ऐसे विषय होते हैं जो सामान्य महत्व के होते है लेकिन राज्यों को शक्ति प्राप्त होने के कारण अलग-अलग राज्यों द्वारा उस विषय पर अलग-अलग नियम बनाए जाते हैं, जो कठिनाई पैदा करते हैं।

2. जटिल और खर्चीली शासन प्रणाली- संघीय शासन व्यवस्था में संविधान कठोर होने के कारण इसमें आसानी से संशोधन नहीं किया जा सकता, जिस कारण कई बार शासन कार्यो में परेशानी आ जाती है और शासन कार्य जटिल हो जाता है। केन्द्र व राज्यों में दोहरी शासन प्रणाली होने के कारण यह व्यवस्था बहुत ही खर्चीली हो जाती है।

3. केन्द्र व राज्य सरकारों में विवाद- इस शासन व्यवस्था में कई बार संघ व राज्य सरकारों में शासन कार्यो के विषय में विवाद उत्पन्न हो जाता है। कुछ विषय ऐसे होते है जिन पर कानून बनाने व कार्य करने की शक्ति दोनों सरकारों को प्राप्त होती है। ऐसे विषयों पर केन्द्र व राज्य सरकारों में विवाद उत्पन्न हो जाता है।

4. संकट-काल में अनुपयुक्त- संघीय शासन प्रणाली में संविधान संशोधन की प्रक्रिया अत्यन्त जटिल होती है जिस कारण यह शासन-प्रणाली संकटकाल के लिए उपयोगी नहीं होती।

5. प्रशासन कार्यों में एकरूपता का अभाव- संघीय शासन में केन्द्र व राज्य सरकारों को अपने-अपने क्षेत्रों में कार्य करने के लिए स्वतंत्रता व शक्तियॉं प्राप्त होती हैं और वे अपने-अपने राजनीतिक हितों और सुविधाओं के अनुसार कार्य करती हैं, कभी-कभी एक राज्य की नीति दूसरे राज्य पर गलत प्रभाव डालती है। अतः प्रशासनिक कार्यो के संबंध में इनमें (केन्द्र व राज्यों में) एकरूपता नहीं पायी जाती है।

6. विद्रोह की सम्भावना- संघात्मक शासन में यह आशंका बनी रहती है कि इकाई राज्यों की सरकारें विद्रोह कर सकती हैं और विरोधी हितों की रक्षा के लिए राज्य इकाइयों में फूट और कलह हो सकता है। गृह-युद्ध की स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है।

8.7 संघ के लिए अपेक्षित शर्ते

संघ निर्माण के लिए कुछ अपेक्षित शर्तों या तत्वों का होना आवश्यक है। इन शर्तों की पूर्ति होने पर ही संघ का निर्माण सम्भव है। संघ की सफलता या असफलता इन शर्तों पर ही निर्भर करती है। संघ निर्माण के लिए केन्द्र तथा इकाइयों के बीच शासन-शक्तियों का स्पष्ट विभाजन होना चाहिए। साथ ही केन्द्र और इकाइयों की सरकारें एक-दूसरे से स्वतंत्र और एक-दूसरे के समकक्ष होनी चाहिए।

संघ निर्माण तथा उसकी सफलता के लिए निम्नलिखित शर्तें अनिवार्य है:

1. भौगोलिक सामीप्य- संघीय राज्य का क्षेत्र भौगोलिक दृष्टि से सम्पर्कयुक्त होना चाहिए, यदि संघीय राज्य के भाग या इकाइयॉं जल अथवा भूमि द्वारा बड़ी दूरी से एक-दूसरे से कटे होंगे, तो संघीय-व्यवस्था को सफलतापूर्वक नहीं चलाया जा सकेगा। भौगोलिक दृष्टि से निकटता होने पर राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से राष्ट्रीय प्रगति तेजी से हो सकती है। सैनिक दृष्टि से भी भौगोलिक समीपता का विशेष महत्व है। भारत व अमेरिका के संघीय शासन की सफलता का एक बड़ा कारण यह भी है कि भौगोलिक दृष्टि से इकाइयॉं एक दूसरे के निकट हैं। स्विट्जरलैण्ड व आस्ट्रेलिया के संघों में भी यह गुण मौजूद है।

2. संघ की इकाइयों में समानता- संघीय राज्य के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि संघ की इकाइयों को शक्तियों के स्तर में समानता प्राप्त होनी चाहिए, चाहे उनका प्रादेशिक और जनसंख्या संबंधी आकार कुछ भी हो ।सभी इकाइयों को शक्तियों का वितरण समानता के आधार पर प्राप्त होना चाहिए। शक्तियों के असमान वितरण से इकाइयों में असंतोष पनप सकता है और यह संघ निर्माण के लिए उचित नहीं हो सकता। इस संबंध में मिल का कथन है कि ''संघ का सार यह है कि, कोई एक इकाई राज्य अन्य की अपेक्षा इतना अधिक शक्तिशाली और सम्पन्न न हो कि वह उन्हें दबाए और केन्द्रीय शासन को भी प्रभावित करने का प्रयास करे।

3. राजनीतिक तथा सामाजिक संस्थाओं में समानता- संघ के निर्माण की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि केन्द्र तथा राज्य स्तरों पर प्रशासनिक व्यवस्थाओं की शैली समान हो, भारत तथा आस्ट्रेलिया में केन्द्र तथा राज्यों के स्तर पर शासन का संघीय रूप है। यदि सामाजिक व राजनीतिक दृष्टि से संस्थाओं में समानता नहीं होगी तो संघ का संगठित रहना कठिन हो जायेगा।

4. सामाजिक एवं आर्थिक विकास- संघीय शासन व्यवस्था सफलता पूर्वक कार्य करे इसके लिये यह आवश्यक है कि सम्पूर्ण संघ का आर्थिक एवं सामाजिक विकास हो। यदि संघ का कोई भी क्षेत्र आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़ा एवं अविकसित होगा तो यह संघीय व्यवस्था के लिए क्षेत्रीय असन्तुलन पैदा कर देगा और यह स्थिति संघ की सफलता के लिए उचित नहीं है।

5. राजनीतिक योग्यता आवश्यक- संघ की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि राजनीतिक नेतृत्व कुशल होना चाहिए और जन-जागरूकता होनी चाहिए। असफल नेतृत्व संघीय व्यवस्था को कमजोर कर सकता है।

6. केन्द्र-राज्य समन्वय- संघ निर्माण की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि केन्द्र तथा राज्य इकाइयों के बीच सुखद समन्वय होना चाहिए तथा संघ का चरित्र प्रतियोगी नहीं सहयोगी होना चाहिए ,उसे अपनी नीतियों के प्रति कठोर नहीं नरम होना चाहिए। संघ की क्रिया दमनकारी नहीं बल्कि सहयोग पूर्ण होनी चाहिए।

7. धर्म, संस्कृति, भाषा आदि में समानता- संघ की सफलता में समान संस्कृति, भाषा, धर्म का बड़ा योगदान होता है क्योंकि भौगोलिक दृष्टि से नजदीक राज्य अपनी संस्कृति, भाषा, धर्म की एकता व सुरक्षा के लिए एकत्र होकर संघ बना लेते हैं और यही एकता व समानता संघ की सफलता है।

8. संसाधनों की उपलब्धता- संघीय व्यवस्था में प्रत्येक इकाई की सरकार को मिलने वाले संसाधन एवं विषय पर्याप्त होने चाहिए। जिन राज्य इकाइयों में इन संसाधनों की कमी होती है उन्हें केन्द्र पर निर्भर रहना पड़ता है जिससे संघ की व्यवस्था डगमगा जाती है। अतः संघीय व्यवस्था में संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धता होनी चाहिए।

9. राजनीतिक एवं राष्ट्रीय एकता- संघ की सफलता या निर्माण के लिए संघीय राज्य के नागरिकों को राष्ट्रीय रूप में व राजनीतिक दृष्टि से एकताबद्ध होना चाहिए तथा राष्ट्र का राजनीतिक स्वरूप इस तरीके से तैयार होना चाहिए कि पूर्ण राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता और राज्य इकाइयों से संबंधित लोंगों की इच्छाओं और आकांक्षाओं के बीच सामंजस्य स्थापित किया जा सके। अतः जब तक लोगों में अपनी राजनीतिक व्यवस्था के मूल्यों के प्रति अपनी निष्ठाएँ व वचनबद्धताएँ नहीं होगीं, तब तक कोई राजनीतिक व्यवस्था सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर सकती। संघीय राज्य के लिए यह अति आवश्यक है ताकि लोग दोहरे शासनों के प्रति अपनी निष्ठा को कायम रख सकें।

10. राजनीतिक जागृति- संघ के निर्माण एवं सफलता के लिए उसके नागरिकों में सक्षम राजनीतिक चेतना होनी चाहिए। संघ के नागरिकों को, संघ और इकाई राज्यों के प्रति अपने कर्त्तव्यों और अधिकारों का ज्ञान आवश्यक है। संघ की सफलता उसके नागरिकों की राजनीतिक जागृति पर बहुत निर्भर करती है।

8.8 एकात्मक व संघात्मक शासन प्रणाली में अंतर

एकात्मक और संघात्मक शासन प्रणालियों में निम्नलिखित आधारों पर अन्तर पाया जाता है-

1. कार्यों और शक्तियों के विभाजन के आधार पर- एकात्मक शासन प्रणाली में शक्ति का स्रोत केन्द्र ही होता है। स्थानीय सरकारों को जो भी शक्ति प्राप्त होती हैं वह केन्द्र के द्वारा ही होती है और शासन कार्यों में किसी भी प्रकार का विभाजन नहीं होता। किन्तु संघात्मक शासन में शासन शक्तियॉ केन्द्र में निहित न होकर क्षेत्रीय सरकारों में भी वितरित होती है ओर इन शक्तियों का स्रोत संविधान होता है।

2. सरकारों की स्थिति के आधार पर अन्तर- एकात्मक शासन व्यवस्था मे केन्द्र सरकार के पास शासन की समस्त शक्तियॉ होती हैं तथा स्थानीय सरकारें केन्द्र के अधीन रह कर कार्य करती हैं। अतः इस शासन व्यवस्था में स्थानीय सरकारों का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता। इसके विपरीत संघात्मक शासन में केन्द्र के साथ-साथ स्थानीय सरकारों को भी शासन शक्तियॉ प्राप्त होती हैं तथा वे केन्द्र से स्वतंत्र होकर संविधान की सीमाओं में रहकर कार्य करती हैं।

3. नागरिकता के आधार पर अन्तर- एकात्मक शासन वाले राज्यों में नागरिकों की एक ही नागरिकता होती हैं अर्थात राष्ट्रीय नागरिकता होती है, जबकि संघात्मक राज्यों में नागरिकों को राष्ट्रीय नागरिकता के साथ-साथ इकाइयों की नागरिकता भी प्राप्त होती है अर्थात संघात्मक राज्यों में दोहरी नागरिकता प्राप्त होती है।

4. संविधान की स्थिति के आधार पर अन्तर- एकात्मक शासन वाले राज्यों मे संविधान लिखित और अलिखित दोनों प्रकारों का हो सकता है, जबकि संघात्मक शासन वाले राज्यों में शासन की शक्ति केन्द्र व राज्य सरकारों में विभाजित होती है ओर उस विभाजन को स्पष्ट करने की दृष्टि से संविधान का लिखित होना अनिवार्य है।

5. न्यायपालिका के कार्य संबंधी अंतर- संघात्मक शासन में न्यायपालिका को केन्द्र व इकाइयों, इकाई व इकाई के पारस्परिक अधिकारों संबंधी विवादों का निर्णय करना होता है, जबकि एकात्मक शासन में न्यायपालिका का कार्य मात्र यह देखना होता है कि व्यवस्थापिका द्वारा पारित कानून कितनी ईमानदारी से लागू हो रहे हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. संघात्मक शासन प्रणाली में संविधान के द्वारा केन्द्र व उसकी इकाइयों के बीच शक्तियों का विभाजन किया जाता है। सही/गलत

2. 'संघ' शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के ''फोएड्स'' शब्द से हुई हैं। सही/गलत

3. संघात्मक शासन प्रणाली की यह परिभाषा किसने दी कि ''संघ एक ऐसी प्रणाली है, जिसमें केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारें एक ही प्रभुत्व शक्ति (संविधान) के अधीन होती हैं तथा ये सरकारें अपने-अपने क्षेत्र में संविधान द्वारा दी गई शक्तियों के आधार पर ही कार्य करती हैं।''

क. लास्की ख. फाइनर ग. गार्नर घ. ब्राइस

4. किस शासन प्रणाली में दोहरी नागरिकता पायी जाती है?

क. एकात्मक शासन प्रणाली में ख. संघात्मक शासन प्रणाली में

ग. मिश्रित शासन प्रणाली में घ. इनमें से कोई नहीं

8.9 सारांश

मानव सभ्यता के विकास क्रम में किसी न किसी रुप में शासन का संचालन होता आया है। शासन संचालन के ये रुप समय व आवश्यकता के अनुसार बदलते रहे हैं। वर्तमान समय में शासन के दो रुपों एकात्मक व संघात्मक शासन प्रणाली की विशेष चर्चा है। एकात्मक शासन प्रणाली शासन के सभी अधिकार केन्द्र के हाथों में रहते है और वहीं से शासन का संचालन होता है। तथा केन्द्रीय सरकार अपनी इच्छा अनुसार शक्तियों का वितरण करती है। प्रजातंत्रीय शासन प्रणाली में एकात्मक शासन प्रणाली अधिक प्रभावी नहीं है। लेकिन संघीय शासन प्रणाली में केन्द्र व स्थानीय सरकारों में शक्ति का विभाजन होता है। विश्व के बड़े राज्यों जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका ,कनाडा, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, रूस ने संघात्मक शासन प्रणाली को अपनाया है।

8.10 शब्दावली

सामीप्य- सुलभता, संगमता

समन्वय- सहयोग, सामंजस्य

8.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सही 2. सही 3. ग. 4. ख.

8.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. इंटर-गवर्मेन्ट रिलेशन इन इंडिया ए स्टडी ऑफ फैडरलिज्म- अमल राय

2. फैडरल गवर्मेन्ट- के0 सी0 व्हीयर

3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी गैना

8.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएं- सी0बी गैना

2. आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त- डॉ0 पुष्पेश पाण्डे, डॉ विजय पंत एवं घनश्याम जोशी

8.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. संघात्मक शासन प्रणाली से आप क्या समझते हैं? इसकी विशेषताओं को स्पष्ट करते हुए इसके गुण-दोष बतलाइये।

2. एकात्मक व संघात्मक शासन प्रणाली को स्पष्ट करते हुए एकात्मक व संघात्मक शासन प्रणाली में अंतर को स्पष्ट करें।

इकाई 9: ब्रिटिश संविधान-I: संविधान की मूलभूत विशेषताएं, ब्रिटिश संसद

9.0 प्रस्तावना

9.1 उद्देश्य

9.2 ब्रिटिश संविधान की विशेषताएं

9.3 ब्रिटिश संविधान के श्रोत

9.4 आधुनिक विश्व व्यवस्था को ब्रिटेन की देन

9.5 ब्रिटिश पार्लियामेंट का उद्भव एवं विकास

9.6 हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स का गठन, शक्तियां

9.6.1 गठन

9.6.2 लार्ड सभा की शक्तियां

9.7 कॉमन सभा

9.8 स्पीकर की शक्तियां

9.9 सारांश

9.10 शब्दावली

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9.13 सहायक /उपयोगी पाठ्य सामग्री

9.14 निबंधात्मक प्रश्न

9.0 प्रस्तावना

आज जिस देश को इंग्लैण्ड के नाम से जाना जाता है। उसका पूरा नाम ग्रेट ब्रिटेन है जिसमें वेल्स, आयरलैण्ड,स्काटलैण्ड भी समाहित है। ब्रिटेन का संविधान एक विकसित संविधान है। इसका जन्म एक समिति के द्वारा कुछ समय में नहीं हुआ है वरन यह लगभग चौदह सौ वर्षों के विकास के बाद वर्तमान स्वरूप को प्राप्त कर सका है। बुडरो विल्सन का यह कथन यहां प्रासगिंक हो जाता है जिसमें वह कहते है- '' इंग्लैण्ड के संवैधानिक इतिहास की यह विशेषता है कि राजनीतिक संगठनों का निरन्तर विकास होता रहा है और उसकी यह निरन्तरता प्राचीन काल से आज तक जारी है।''

इंग्लैण्ड के संविधान का विकास क्रमशः हुआ है जिसमें तत्कालीन हालात, जन जागरूकता, की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। विकास की दृष्टि से इस यात्रा को छः भागों में बांटा जा सकता है। जिसमें लगभग चौहद सौ वर्षों से अधिक का समय लगा है। ब्रिटेन का संविधान दुनिया का सबसे प्राचीन अलिखित संविधान है। ब्रिटेन में तत्कालीन हालात ऐसे हो गये की राजसत्ता कमजोर होती गई और जनता एवं उनका समूह मजबूत होता गया। धीरे-2 यही समूह मन्त्रिमण्डल एवं पार्लियामेंट के वर्तमान स्वरूप को प्राप्त हो गया। इंग्लैण्ड को संसदीय शासन की जननी कहा जाता है। दुनिया के अन्य देशों में संसदीय शासन का प्रसार यहीं से हुआ है। यहाँ पर व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका के बीच घनिष्ठ संबंध पाया जाता है तथा कार्यपालिका व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होती है। बहुमत प्राप्त दल का नेता ही प्रधानमंत्री बनता है तथा अपनी कैबिनेट का निर्माण करता है। जब तक सत्तारूढ़ दल के पास बहुमत होता है वह सत्ता में रहता है। बहुमत समाप्त होते ही प्रधानमंत्री को पद छोड़ना पड़ता है। यह दुनिया का सबसे जबावदेह शासन है। इसमें सरकार के ऊपर दोहरा नियन्त्रण रहता है। ब्रिटेन के सम्पूर्ण शासन व्यवस्था को चलाने में वहां के नागरिकों की जागरूकता है। वे परपरांवादी है। अतः अलिखित संविधान होते हुए भी रूढ़ियों,परम्पराओं के आधार सम्पूर्ण शासन व्यवस्था आगे बढ़ रही है। ब्रिटेन की शासन व्यवस्था एवं वहां का संविधान अतुलनीय है। ऐसा कोई अन्य उदाहरण हमें कहीं और नहीं मिलता है।

9.1 उद्देश्य

1. ब्रिटिश संविधान की प्रमुख विशेषताओं का अध्ययन करेंगें।

2. ब्रिटिश संविधान के प्रमुख स्त्रोत की जानकारी प्राप्त करेंगें।

3. आधुनिक शासन व्यवस्थाओं को ब्रिटेन की देन का पता लगायेंगें।

5. हाउस आफ कामन्स और हाउस आफ लार्डस के गठन एवं शक्तियों को जानेंगें।

6. ब्रिटेन में पार्लियामेण्ट का उद्भव एवं विकास जानना।

9.2 ब्रिटिश संविधान की प्रमुख विशेषतायें

प्रथम ब्रिटेन का अतीत गौरवपूर्ण रहा है। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद विश्व राजनीति की प्रथम शक्ति के रूप में उभरा। राजनीति शास्त्र के प्रत्येक विद्यार्थी के लिये ब्रिटेन की संवैधानिक व्यवस्था का अध्ययन आवश्यक है। यह ऐसा देश है जिसने विश्व राजनैतिक व्यवस्था को बहुत कुछ दिया है। इसे संसदीय शासन की जननी कहा जाता है। यहां से ही

दुनियाँके अन्य देशों में संसदीय व्यवस्था का सूत्रपात हुआ। नागरिक अधिकार ,स्वतंत्रता, विशेषाधिकारों का अंत का सूत्रपात यही से होता दिखाई पड़ता है। ब्रिटेन के संविधान में कुछ तत्व है जिसके कारण इसका अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है। इसकी प्रमुख विशेषता निम्न है-

1.प्राचीनतम संविधान:- यह विश्व का प्राचीनतम संविधान है। विश्व के किसी भी संविधान का इतना लम्बा इतिहास नहीं रहा है। यह विश्व में अपनी तरह का पहला संविधान था जो 1400 वर्षों से अधिक समय में अपने वर्तमान स्वरूप को प्राप्त कर सका। इस संविधान का महत्व इस बात से और बढ़ जाता है कि इसने न केवल प्रजातन्त्र का सूत्रपात किया वरन सम्पूर्ण विश्व व्यवस्था को भी प्रभावित किया।

2.वास्तविक लोकतंत्र का जनक:- ब्रिटेन के संविधान के द्वारा सर्वप्रथम लोकतन्त्र का अंकुरण हुआ। इसे आधुनिक विश्व को प्रथम लोकतान्त्रिक संविधान कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। निरंकुश राजतन्त्र से सक्षम लोकतन्त्र की यात्रा उतार-चढ़ाव भरी रही। यह सत्य है कि ब्रिटेन से पहले यूनान में लोकतन्त्र प्रचलित था परन्तु उस व्यवस्था और ब्रिटेन से पहले यूनान में लोकतन्त्र प्रचलित था परन्तु उस व्यवस्था और ब्रिटेन एवं आज के विशाल राज्यों के लोकतन्त्र में बड़ा अन्तर है। विशाल राज्यों में अप्रत्यक्ष लोकतन्त्र को अपनाने का पहला सफल प्रयास ब्रिटेन में ही हुआ। विश्व के अन्य देशों ने लोकतन्त्र को यही से ग्रहण किया। मुनरो के शब्दों में -'' अठारवी एवं उन्नीसवीं शताब्दियों में सम्य संसार के एक बहुत बड़े भाग का लोकतान्त्रिक अधिकाशतः अंग्रेज भाषा-भाषी जातियों के नेतृत्व में हुआ।''

3.एकमात्र अलिखित संविधान:- यह आधुनिक समय में और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि यह दुनियाँका एकमात्र अलिखित संविधान है। ब्रिटेन के मौलिक सिद्धान्त लिपिक न होने के बावजूद यहां न तो अराजकता है और न ही निरकुशता। यहां पर पूर्णतः नागरिक स्वतन्त्रता की बहाली है। इसका मुख्य कारण यहा के नागरिकों की जागरूकता, परम्परावादी होना हैं। वे कर्तव्यपरायण नागरिक है और स्वनुशासन पर भरोसा रखते हैं। कतिपय यही कारण है सभी सिद्धान्तों का लिखित उल्लेख न होने के बावजूद वहां पर सम्पूर्ण व्यवस्था दिखाई पड़ रही है।

4.विकसित संविधान:- ब्रिटिश संविधान लम्बे विकास यात्रा का परिणाम है। इसे किसी संविधान सभा ने तैयार नहीं किया है। यहां लम्बे विकास यात्रा का फल है। इसके विकास में सैकड़ों वर्षों का समय लगा। समय,हालात, निरंकुश राजतन्त्र की चुनौतियों से होता हुआ अपने वर्तमान स्वरूप को प्राप्त हुआ है। यहां पर किसी प्रकार की क्रान्ति,रक्तपात हुए बिना ही शांति पूर्ण परिवर्तन से राजतन्त्र का स्थान लोकतन्त्र ने लिया।

5.स्वतन्त्रता का प्रतीक:- ब्रिटिश संविधान की यह विशेषता है कि इसमें मानव स्वतन्त्रता पर अत्याधिक बल है। यद्यपि उनके संविधान में किसी प्रकार अधिकारों की घोषणा नहीं है वरन आधुनिक विश्व में किसी भी देश के नागरिक से कम स्वतन्त्रता का उपयोग वे नहीं करते है। वे प्रारम्भ से ही निरकुंश राजतन्त्र के विरूद्ध मानव स्वतन्त्रता के लिये संघर्ष कर रहे थें और उसमें उन्हें सफलता मिली कतिपय यही कारण है कि वह अपने सामान्य जीवन प्रशासन एवं अन्य कार्यों में नागरिक स्वतन्त्रता को सबसे ऊपर रखते है।

6.आधुनिक शासन व्यवस्था पर प्रभाव:- यह संविधान सबसे प्राचीन एवं प्रभावशाली है। इसने इंग्लैण्ड ही नहीं सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित किया। संसदीय शासन का जो सूत्रपात यहां से हुआ वह दुनियाँके कोने-2 तक फैला। आज शासन प्रणाली के रूप में संसदीय शासन प्रणाली सर्वाधिक लोकप्रिय हैं दुनियाँमें सौ से अधिक देशों ने शासन

प्रणाली के रूप में ब्रिटेन की संसदीय प्रणाली को अपनाया है। आज दुनियाँका शायद ही कोई देश हो जो कहीं न कहीं से ब्रिटेन की शासन व्यवस्था ,नागरिकों के अनुशासन, नागरिक स्वतन्त्रता से प्रभावित न हो। मुनरो के शब्दों में- ''ब्रिटिश संविधान संविधान का जनक है, ब्रिटिश संसद संसदों की जननी हैं। अन्य देशों के विधानमण्डल को कोई भी संज्ञा दी जाय उसका उद्गम स्थ्ल एक ही है।''

7.लचीला संविधानः- ब्रिटेन का संविधान एक लचीला संविधान है। यहाँ पर संसद सामान्य बहुमत से यहां के संविधान में कोई भी परिवर्तन कर सकती है। एन्सन के शब्दों में-'' हमारी पार्लियामेण्ट जंगली चिड़ियों एवं मछली की रक्षा के लिये कानून बना सकती हैं या लाखों लोगों को राजनीतिक शक्ति प्रदान कर सकती है।''

सैद्धान्तिक दृष्टि से कानून लचीला है परन्तु व्यवहार में नागरिकों की रूढ़िवादिता,परम्पराओं ने संविधान ने परिवर्तन का कार्य जटिल बना दिया है। अब वहां यह परम्परा बन गई है कि संविधान में बड़ा परिवर्तन तब तक न किया जाय जब तक आम चुनाव में उस पर जनमत न ले लिया जाय। 1911 में लार्ड सभा की शक्तियों में कटौती 1910 के चुनाव में जनता की राय जानने के बाद की गई थी।

8.सिद्धान्त एवं व्यवहार का अन्तरः-ब्रिटेन के संविधान की यह विशेषता है कि वहां सिद्धान्त एवं व्यवहार में व्यापक अन्तर पाया जाता है। उसके सिद्धान्त एवं व्यवहार के अन्तर को हाम इस प्रकार देख सकते है-

1.सैद्धान्ति रूप से वहां आज भी राजतन्त्र है परन्तु व्यवहार में वास्तविक लोकतन्त्र है।

2.सिद्धान्त में संसद कैबिनेट पर नियन्त्रण रखती है परन्तु व्यवहार में कैबिनट ही संसद को नियन्त्रित करती है।

3.सिद्धान्त में व्यवस्थापिका,कार्यपालिका अलग उद्देश्य के लिये है परन्तु व्यवहार में कार्यपालिका का जन्म व्यवस्थपिका से हुआ है और वे घनिष्टता से जुड़ी हुई है।

9.संसद की सर्वोच्चताः- ब्रिटेन में संसदीय सर्वोच्चता है। वहां संसद का स्थान सबसे ऊपर है। वह एकमात्र कानून निर्मात्री संस्था है। वह साधारण बहुमत से ही किसी कानून को परिवर्तित कर सकती है। उसके द्वारा निर्मित कानून को कहीं भी चुनौती नहीं दी जा सकती। वहां पर भारत एवं अमेरिका की तरह न्यायिक पुर्नवलोकन की व्यवस्था नहीं है। यही कारण है कि डी लोम्ब लिखते हैः- ''संसद स्त्री को पुरूष और पुरूष को स्त्री बनाने के अतिरिक्त सब कुछ कर सकती है।''

संसद की सर्वोच्च स्थिति को व्यवहार में लोकमत, परम्पराओं से मर्यादित होना होता है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय कानून भी उसे मर्यादित करता है।

10.एकात्मक शासनः- ब्रिटेन में विशालता एवं विविधता का अभाव है यही कारण है कि वहां पर एकात्मक शासन को अपनाया गया है। शासन की समस्त शक्ति केन्द्रीय सरकार को प्राप्त है। प्रशासन की सुविधा के लिये प्रशासनिक इकाइयों का गठन किया गया है परन्तु उन्हें शक्तियां केन्द्रीय सरकार से ही प्राप्त है। प्रशासनिक इकाईयां संविधान से शक्तियां नहीं प्राप्त करती है।

11.विधि का शासनः- यह इंग्लैण्ड के संविधान की प्रमुख विशेषता है कि जिसका आशय है कि शासन व्यक्ति की इच्छा से नहीं वरन कानून से चलता है। ब्रिटेन में सभी लोग एक ही कानून, न्यायालय के अधीन है। उनके पद,प्रमाण

से वह कानून से मुक्त नहीं है। यह व्यवस्था फ्रांस से अलग है जहां सरकारी कर्मचारियों के लिये प्रशासकीय कानूनों का उल्लेख मिलता है।

12.नागरिक स्वतन्त्रता पर बल:- ब्रिटेन में नागरिक स्वतंत्रता पर अतयाधिक बल है। यद्यपि वहां पर अधिकारों के पत्र का अभाव है परन्तु नागरिक किसी भी देश की तुलना में अधिक स्वतन्त्र है। उन्हें संसदीय अधिनियमों से कुछ बंदी प्रत्यक्षीकरण, शस्त्रधारण करने का अधिकार, अमानुषिक दण्ड से बचने का अधिकार प्रदान किये गये है।

13.प्रजातंत्र एवं राजतंत्र का समन्वय:- ब्रिटेन में संविधान का विकास हुआ। निरंकुश राजतंत्र से संसदीय लोकतंत्र की स्थापना की गई। इनके बावजूद भी वहाँ पर राजतंत्र का अस्तित्व आज भी बना हुआ है। आज भी राज्य का सर्वोच्च पदाधिकारी राजा है जो वंशानुगत रूप से पद धारण करता है। इसके साथ ही लार्ड सभा में आज भी वंशानुगत पियरो की एवं कुलीन वर्ग के प्रतिनिधित्व की वंशानुगत व्यवस्था है।

इसके पीछे मूल में वहां के लोगों का परम्परागत होना ही है। वे प्राचीन व्यवस्था को समाप्त करने के पक्ष में नहीं है वरन वे उसको सीमित कर वास्तविक लोकतन्त्र के पक्ष में है।

14.द्वि दलीय व्यवस्था:- ब्रिटेन में व्यवहार में द्विदलीय व्यवस्था है।यद्यपि संविधान के द्वारा दलों के अस्तित्व पर रोक नहीं है परन्तु वहां पर दो दलों की व्यवस्था लम्बे समय से चली आ रही है। प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति तक वहां पर उदार दल एवं अनुदार दल प्रमुख थे प्रथम विश्व युद्ध के बाद अनुदार दल एवं मजदूर दल राजनीतिक परिदृश्य पर छा गये। व्यवहार में द्वि दलीय व्यवस्था के कारण वहां संसदीय लोकतन्त्र सफलता पूर्वक आगे बढ़ रहा है। वहां पर भारत,फ्रांस की तरह मत विभाजन के कारण स्पष्ठ बहुमत के आभाव में अस्थिर सरकारों का अस्तित्व नहीं हो पा रहा है।

9.3 ब्रिटिश संविधान के स्त्रोत

यद्यपि ब्रिटेन के संविधान का विकास हुआ है। परन्तु इसके विकास में अनेक तत्वों का योगदान था। लम्बे विकास के क्रम में ऐतिहासिक प्रलेख, न्यायिक निर्णय, संसदीय अधिनियम, परम्पराओं, संविधान की टीकायें प्रमुख रूप से थी जिसने संविधान का वर्तमान स्वरूप पाने में मदद की। यही कारण है लम्बे विकास यात्रा में ब्रिटेन का संविधान इस स्वरूप को प्राप्त कर सका है। ब्रिटेन के संविधान के प्रमुख स्त्रोत इस प्रकार है-

1.महान अधिकार पत्र:- यद्यपि ब्रिटेन का संविधान लम्बे विकास का परिणाम है परन्तु इतिहास में कुछ घटनाओं ने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से संविधान को प्रभावित किया। इसमें समय-समय पर आये अधिकार-पत्रों ने अग्रणी भूमिका अदा की। इसमें सम्राट जॉन द्वारा सामंतों के समक्ष झुकते हुये 1215 का अधिकर पत्र '' मैग्नाकार्टा'',1688 की गौरवपूर्ण क्रान्ति के द्वारा शासन पर जनप्रभुता स्थापित हुई, 1689 के अधिकार पत्र से पार्लियामेण्ट की वैधानिकता को स्वीकार किया। विलियम पिट के शब्दों में-'' मैग्नाकार्टा,पिटीशन आफ राइटस,बिल आफ राइट्स ब्रिटिश संविधान की बाइबिल है।''

2. संसदीय अधिनियम:- यद्यपि ब्रिटिश संविधान अलिखित है परन्तु इसके वर्तमान अस्तित्व में आने में समय-समय आगे अधिनियमों की महत्वपूर्ण भूमिका हैं। संसदीय अधिनियम वर्तमान जरूरतों को पूरा करने के लिये बनाये गये कानून है। ब्रिटेन के अनेक संसदीय अधिनियमों जैसे- बंदी प्रत्यक्षीकरण 1679,व्यवस्था अधिनियम

1701,स्काटलैण्ड मिलन अधिनियम 1737,1832,1867,1884 के सुधार अधिनियम, 1911,1949 के संसदीय सुधार अधिनियम,1918 का जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, वेस्ट मिनिस्टर अधिनियम 1931 आदि ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

3. न्यायिक निर्णय:- न्यायिक निर्णयों का संविधान विकास में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ब्रिटेन में यद्यपि भारत एवं अमेरिका की तरह ''न्यायिक पुर्नवलोकन''की शक्ति नहीं है परन्तु समय-समय पर वहां के न्यायालयों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। उदाहरण के लिये सामरसैट के अभियोग में ब्रिटेन में दासता का अंत किया गया, हांवल मामले में न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता की सुरक्षा की गारण्टी दी गई, वुशेल मामले से ज्यूरियो को और अधिक स्वतन्त्रता एवं अधिकार दिये गये। डायसी के शब्दों में- ''ब्रिटिश संविधान कानून का परिणाम नहीं वरन व्यक्तियों द्वारा अपने अधिकारों की रक्षा के लिये लाये गये अभियोगों का परिणाम है।''

4. सामान्य विधि:- सामान्य विधि के अन्तर्गत वे विधियां आती है जिनका विकास रीति-रिवाज एवं परम्परा से हुआ है न कि सम्राट एवं अधिनियमों से हुआ है। ये वे विधियां है जो परम्परा से स्थापित हुई है और न्यायालय द्वारा स्वीकार की जा चुकी है। ब्रिटिश नागरिकों को प्राप्त मूल अधिकारों एवं स्वतंन्त्रतायें इन सामान्य विधियों की देन है। मुनरो के शब्दों में- '' सामान्य विधि संसदीय अधिनियमों की भांति न्यायिक निर्णयों के साथ निरन्तर प्रगति करता है। समा्रट के विशेषाधिकार,संसद की सर्वोच्चता,फौजदारी अभियोगों में जूरी, ब्रिटिश जनता की अभिव्यक्ति एवं भाषण की स्वतन्त्रता संबंधी अधिकार सामान्य कानूनों पर ही आधारित है।''

5.प्रथायें एवं परम्परायें- ब्रिटेन में परम्परायें एवं प्रथायें संविधान का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्त्रोत है। वहां की सम्पूर्ण संसदीय व्यवस्था परम्पराओं एवं प्रथाओं पर आधारित है। उदाहरण के लिये अंग्रेजी न जानने के कारण सम्राट जार्ज ने मन्त्रिमण्डल की अध्यक्षता से इंकार कर दिया तभी से वहां पर यह परम्परा स्थपित हो गयी कि राजा मन्त्रिमण्डल की अध्यक्षता नहीं करेगा। इसी प्रकार बहुमत होने तक ही प्रधानमंत्री अपने पद पर रहेगा, निम्न सदन ने विश्वास खोने के साथ उसे पद छोड़ना पड़ेगा। इसी प्रकार अनेक परम्परायें स्थापित हो गई है जो संसदीय व्यवस्था को गति दे रही है।

6.संविधान की टीकायें- संविधान पर लिखी गई टीकायें भी संविधान का महत्वपूर्ण स्त्रोत समझी जाती है। यह देखा गया है कि संविधान संबंधी प्रश्न उठता है तब संसद,न्यायालय इन टीकाओं का ही सहारा लेते है। इस संबंध में डायसी का ग्रन्थ '' ला आफ कान्स्टीटयूशन 1885, वेजहाट का ''इंग्लिश कान्स्टीटयूशन'' सर अर्किन की पुस्तक ''संसदीय कार्यपद्धति एवं चलन'' एलसन की पुस्तक ''ला एण्ड कस्टम आफ दी कान्स्टीटयूशन'' मारीशन की ''सरकार और संसद'' आदि प्रमुख है। इस संबंध में पूर्व समा्रट, प्रधानमन्त्रियों के लेख, टिप्पणी, पत्राचार भी महत्वपूर्ण हो जाते है। एटली की पुस्तक ,जार्ज के संस्मरण आदि प्रमुख है।

7.ब्रिटिश शासन व्यवस्था में विवेक एवं संयोग तत्व:- ब्रिटिश संविधान का निर्माण विश्व के आधुनिक संविधानों की तरह निश्चित समय में किसी सभा या समिति की तरह नहीं किया गया है। इसका स्वतः क्रमिक विकास हुआ है जिसमें सैकड़ों वर्ष का समय लगा है। ब्रिटिश संविधान के संबंध में लिटेन स्टे"जी कहता है-'' यह संयोग एवं विवेक का शिशु है''

ब्रिटेन में संसदीय शासन, द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका, कैबिनेट व्यवस्था पूर्णतः संयोग का ही ही परिणाम है। 1295 में तत्कालीन सम्राट के द्वारा तीन अलग-अलग वर्ग सामन्त, पादरी, नगर के प्रतिनिधियों को उनकी राय जानने के

लिये आमन्त्रित किया। इससे समाज के तीन वर्गों का प्रतिनिधित्व हो रहा था परन्तु आगे जाकर संयोग से सामन्त एवं धर्माधिकारी जिनके हित एक से थे, वे एक साथ हो गये ओर नगर प्रतिनिधि एक साथ आगे जाकर यही पार्लियामेण्ट के दो सदन लार्ड सभा एवं कामन सभा कहलाये। ठीक इसी प्रकार ब्रिटेन में कैबिनेट व्यवस्था का प्रारम्भ भी संयोग से हुआ है। 1714 में हैनोवर शासकों के अंग्रेजी न जानने एवं ब्रिटिश शासन में रूचि न होने के कारण उन्होंने मन्त्रिमण्डल की बैठकों में आना बंद कर दिया अतः कैबिनेट की अध्यक्षता की एक नई परम्परा विकसित हो गई और कैबिनेअ के वरिष्ठ सदस्य ने अध्यक्षता की जो परंपरा प्रारम्भ की वह आजतक कायम है। तत्कालीन समय में राबर्ट वालपोल जो पहले प्रधानमंत्री थे ने उच्च सदन के अविश्वास प्रस्ताव पर पद नहीं छोड़ा परन्तु निम्न सदन में बहुमत खोने पर उन्होंने स्वयं सहित मन्त्रिमण्डल का त्याग पत्र दे दिया था। यही से संसदीय शासन में मन्त्रिमण्डल उत्तरदायित्व (सामूहिक उत्तरदायित्व) के सिद्धान्त का जन्म हुआ।

इसी के साथ ब्रिटेन के संविधान में अनेक ऐसी व्यवस्था स्थापित की गई जो सोच समझकर विवेक का परिणाम थी। लोक सदन का लोकतान्त्रिणकरण ,लोक सदन (कामन सभा) की तुलना में उच्च सदन (लार्ड सभा) की शक्तियों को सीमित करना इसी का परिणाम है। 1832, 1867,1884 के सुधार अधिनियमों के द्वारा मताधिकार को व्यापक किया गया और निम्न सदन का लोकतान्त्रिककरण किया गया। इसी प्रकार 1911 एवं 1949 के अधिनियमों के द्वारा गतिरोध उत्पन्न होने पर लार्ड सभा की शक्तियों को सीमित किया गया और वित्त विधेयक को निम्न सदन में पहले प्रस्तुत करने एवं निम्न सदन के प्रति उत्तरदायित्व का सिद्वान्त स्थापित किया गया। इस प्रकार ब्रिटेन के संविधान का निर्माण विवेक एवं संयोग दोनों का परिणाम है।

9.4 आधुनिक विश्व व्यवस्था को ब्रिटेन की देन

ब्रिटेन का संविधान सबसे प्राचीन संविधान है। इसका सैकड़ों वर्षों में विकास हुआ। इसके विकास में जन चेतना, तत्कालीन हालात जिम्मेदार थे। ब्रिटेन ने प्राचीन राजनीतिक व्यवस्था से न केवल आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था को अपनाया वरन दुनिया के समक्ष एक आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था को माडल प्रस्तुत किया। ब्रिटेन की आधुनिक व्यवस्था को देन हम इस प्रकार स्पष्ट कर सकते है।

1.संसदीय शासनः- ब्रिटेन को संसदीय शासन की जननी कहा जाता है। वही पर न केवल संसदीय शासन का जन्म हुआ वरन दुनियाँके अनेक देशों तक इसका फैलाव हुआ। आज दुनियाँमें सर्वाधिक प्रसारित शासन प्रणाली के रूप में संसदीय शासन प्रणाली है। यह दुनियाँकी सर्वाधिक उत्तरदायी शासन प्रणाली है। यह ब्रिटेन की दुनियाँको सर्वाधिक महत्वपूर्ण देन है।

2.उत्तरदायी शासनः- संसदीय शासन दुनियाँकी सबसे उत्तरदायी (जवाबदेह) शासन होता है। इसमें सरकारों पर कठोर नियंत्रण होता है । उन्हें दो स्तरों पर जबाव देना पड़ता है पहला नियन्त्रण जनता का होता है जब उन्हें मतदाताओं को जबाव देना पड़ता है तथा दूसरा नियन्त्रण संसद के अन्दर जबाव देना पड़ता है। निम्न सदन के विश्वासपर्यन्त ही सरकार का जीवन रहता है। इस प्रकार उत्तरदायी शासन का सूत्रपात ब्रिटेन की महत्वपूर्ण देन है।

3.विधि का शासनः- आधुनिक शासन व्यवस्था का यह प्रमुख लक्षण है। आधुनिक समय में यह स्वीकार किया जाता है कि शासन कानून के अनुसार चलना चाहिए न कि व्यक्ति के अनुसार। सभी लोग समान रूप से कानून के

अधीन है सभी पर कानून समान रूप से लागू होता है। यह आधुनिक सिद्धान्त पहले ब्रिटेन में देखा गया और वही से दुनियाँमें आया।

4.प्रतिनिधियात्मक शासन:- आज नगर राज्यों का दौर समाप्त हो चुका है। अब विशाल राज्यों का अस्तित्व है। अतः आज के प्रजातन्त्र में यूनान नगर राज्यों के प्रत्यक्ष प्रजातंत्र संभव नहीं है। ब्रिटेन में संसद के लिये नगर प्रतिनिधियों का चयन ही प्रतिनिधियात्मक शासन का सूत्रपात था। वही से आमजन के प्रतिनिधित्व के लिये प्रतिनिधियों की व्यवस्था की गई और पूरी दुनियाँमें आज प्रतिनिधिआत्मक लोकतन्त्र आगे बढ रहा है।

5.द्विसदनात्मक व्यवस्थपिका:- ब्रिटेन में द्विसदनात्मक व्यवस्थपिका जन्म एक संयोग था। वास्तविक रूप से वहां पर तीन वर्ग सामंत, पादरी एवं नगरप्रतिनिधि आये थे। समय के साथ पहले दो वर्ग (सामंत,पादरी) जिनके हित एक से थे वे एक साथ बैठने लगे और दूसरा वर्ग (नगर प्रतिनिधि) एक साथ बैठने लगे यही से पार्लियामेण्ट के दो सदन बन गये। एक हाउस आफ लार्डस जो पादरी, सामंतो का प्रतिनिधित्व एवं हाउस आफ कामन सामान्य लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाला सदन अस्तित्व में आया। दुनियाँके लगभग सभी लोकतान्त्रिक देशों में आज द्विसदनात्मक व्यवस्थपिका दिखाई पड़ रही है, यह ब्रिटेन की बहुमूल्य देन है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. मैग्नाकार्टा इंग्लैण्ड की जनता के हित में था। सत्य/असत्य
2. ब्रिटेन का संविधान.....हैं। लिखित / अलिखित
3. ब्रिटेन के संविधान को संसदीय शासन की जननी कहा जाता है। सत्य/असत्य
4. संसदात्मक शासन दुनिया का सबसे .....शासन है। जबावदेह/गैर जबावदेह
5. रार्बट वाल्पोल को ब्रिटेन का पहला .....कहा जाता है। स्पीकर/प्रधानमंत्री

9.5 ब्रिटिश पार्लियामेण्ट का उद्भव विकास

पार्लियामेण्ट शब्द का विकास फ्रेंच शब्द ''पार्ली'' से हुआ है जिसका शब्दिक अर्थ होता है- ''विचार विमर्श करना'' इस प्रकार से पार्लियामेण्ट एक विचार विमर्श करने वाली संस्था है जहां पर विभिन्न प्रतिनिधि देश समाज के हित में विचार विमर्श करते है। नार्मन काल में सम्राट विलियम ने ''विटनेजमोट'' को समाप्त कर दिया। इसी समय राजा को परामर्श के लिये दो संस्थाओं का उदय हुआ उसमें से एक ''मैग्नम कासीलियम'' थी। यह एक वृहत संस्था थी इसके सत्र अल्पकालीक होते थे ये वर्ष में तीन से चार बार संगठित होती थी। इसमें पहले सामन्त, सरदार और पादरी बुलाये जाते थे परन्तु बाद में सामान्य लोगों की आवश्यकता महसूस की गई। प्लैण्टैगैनेट काल में 1203 में राजा जान ने आंतरिक एवं बाह्य कठिनाईयों का सामना करने के लिए अधिक कर लगाने की आवश्यकता अनुभव

की। राजा ने मैग्नम कासीलियम के प्रत्येक काउन्टी में चार-चार प्रतिनिधि बुलाये जिससे जनता को विश्वास में लिया जा सके। बाद में यह वहां परम्परा के रूप में स्थापित हो गई। 1254 में हेनरी तृतीय ने भी ऐसी सभा बुलायी और आम लोगों को भी प्रत्येक काउन्टी से आमन्त्रित किया। प्रस्तावित करों को लेकर राजा एवं मैग्नम कासीलियम के बीच सहमति नहीं बन पाई और राजा एवं सांमतों के बीच संघर्ष प्रारम्भ हो गया। इस संघर्ष में सामंतों की विजय हुई और साइमन माटफोर्ड उनके नेता के रूप में सामने आया। उसने 1262 में पार्लियामेण्ट की बैठक बुलाई उसमें सांमतों,सरदारों के अतिरिक्त 61 नगरों के दो प्रतिनिधि जन सामान्य को भी आमन्त्रित किया। यह सामान्य वर्ग के प्रतिनिधित्व का सूत्रपात था। यही कारण है कि माण्टफोर्ड को कामन सभा का जनक कहा गया। 1295 में एडवर्ड प्रथम ने पार्लियामेण्ट का अधिवेशन बुलाया जिसमें उच्चवर्ग के अतिरिक्त सामान्य वर्ग के 172 प्रतिनिधियों को आमन्त्रित किया। इसे ''मार्डन पार्लियामेण्ट'' भी कहा गया। यह पहली बार था कि सामान्य वर्ग को इतनी बड़ी संख्या में प्रतिनिधित्व मिला। अधिवेशनों में तीन वर्ग के लोग भाग लेते थे। सामन्त वर्ग,पादरी वर्ग, सामान्य वर्ग। ये तीनों अलग-अलग भाग लेते थे। कुछ वर्षों तक ब्रिटेन की पार्लियामेण्ट त्रिसदनात्मक थी। बाद में सांमत एवं पादरी जिनके वर्गीय हित एक से थे, वे एक साथ बैठकों में भाग लेने लगे जबकि सामान्य वर्ग अलग बैठकों में भाग लेता था। इस प्रकार से संसद की एक साथ दो बैठकों होने लगी। बड़े पादरियों और सामन्तों का सदन (लार्ड सभा) तथा छोटे पादरियों ,सरदारों,सामन्तों और सामान्य व्यक्तियों का सदन कामन सभा कहलायी। प्रारम्भ में पार्लियामेण्ट अशक्त,प्रभावहीन एवं वाचक की भूमिका में थी परन्तु धीरे-धीरे यह प्रभावी हुई। 1688 में रक्तहीन क्रान्ति के पश्चात संसद की शक्तियां बढ़ती चली गई और शासक की शक्तियां घटती चली गईं प्रारम्भ में दोनों सदनों में लार्ड सभा अधिक शक्तिशाली एवं प्रभावी थी परन्तु 1911 और 1949 के अधिनियमों के द्वारा स्थिति बदल गई। अब कामन सभा सशक्त एवं लार्ड सभा निर्बल सदन हो गई है।

9.6 हाउस आफ लार्डस का गठन, शक्तियां

ब्रिटेन को द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका का उद्गम स्थल कहा जाता है। ब्रिटेन में सबसे पहले द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका अपनाई गयी हैं। लार्ड सभा विश्व की सबसे प्राचीन एवं विशाल सभा है। अपने प्रारम्भिक वर्षों में लार्ड सभा अत्याधिक प्रभावी सदन थी। बाद के वर्षों में लोकतान्त्रिक मूल्यों के कारण लार्ड सभा की शक्तियों का ह्रास हुआ। आज लार्ड सभा अपने अतीत की छाया मात्र बन कर रह गई है। इसे लोकतन्त्रीय व्यवस्था में कुलीन तंत्र का धब्बा भी माना जाता है क्योंकि इसमें आज भी प्रतिनिधित्व के लिये वंशानुगत व्यवस्था को अपनाया जाता है। आधुनिक समय में लार्ड सभा वंशानुगत रूप से संगठित एक मात्र सदन है। आज लार्ड सभा न केवल द्वितीय वरन द्वितीय मतव्य के सदन के रूप में स्थपित हो चुका है।

9.6.1 गठनः-

लार्ड सभा के सदस्य संख्या सदैव समान न रहकर सदैव बदलती रहती है। 1848 में इसके सदस्यों की संख्या 844,1952 में 842 ,1956 में 820 थी। 1968 में इसकी सदस्य संख्या 1062 के ऊपर हो गई थी। वर्तमान समय में सदस्य संख्या 1200 से ऊपर है। 1994 में सदस्य संख्या 1206 हो गई थी। यह स्थाई सदन है इसे कभी भंग नहीं किया जा सकता है। लार्ड सभा में पीयर्स ही बैठ सकते है। ब्रिटेन में इसका आशय धनिक,कुलीन वर्ग। ब्रिटेन में राजा ही सदस्यता प्रदान करता है परन्तु वास्तव में आज राजा प्रधानमंत्री के नियन्त्रण में कार्य करता है। अतः यह नियुक्ति प्रधानमंत्री के परामर्श पर ही होता है। सामान्यतः साहित्य,कला,युद्ध,कानून,राजनीति के क्षेत्र के अग्रणी व्यक्तियों को

सदस्यता प्रदान की जाती है। प्रधानमंत्री उन लोगों को भी सदस्यता दिलवाने में मदद करते है जो पार्टी के आर्थिक मदद दे रहे हो या उनसे राजनैतिक हित साध रहे थे। पियरेज भी पाँच स्तर की होती है- डयूक्स,मार्कुइस,अलर्ज,वाईकांउट तथा बेरेज आदि । कानूनी लार्ड और धार्मिक लार्ड को छोड़कर सभी वंशानुगत होते है। पिता की मृत्यु के बाद ज्येष्ठ पुत्र पियर कहा बन जाता और शेष साधारण नागरिक ही रहते। लार्ड सभा के सदस्य छःप्रकार के होते है यह है-1- राजवंश के राजकुमार 2-यूनाइटेड किगंडम के पीयर 3- स्काटलैण्ड के पियर 4- अध्यात्मिक पियर 5- विधि लार्ड 6- आजीवन पीयर। राजा के ज्येष्ठ पुत्र को प्रिंस आफ वेल्स या डयूक आफ कारनावाल कहते है। दूसरे पुत्र को डयूक आफ यार्क कहते है। इस तरह सदन की इनकी सदस्यता राजवंश के सदस्य के नाते नहीं वरन डयूक होने के नाते मिलती है। सन् 1994 तक वंशानुगत पीयर की संख्या 777 थी जिनमें से 758 वे थे जिनके पूर्वज पियर थें। केवल 19 लार्ड पहली बार आनुवंशिक पीयर बने। इनके अतिरिक्त 382 आजीवन पीयर जिनमें 61 महिलाएं थी। विधि लार्डस की संख्या 21 तथा धार्मिक पीयर की संख्या 26 थी।

9.6.2 लार्ड सभा की शक्तियां-

अपने प्रारम्भिक काल में लार्ड सभा एक शक्तिशाली सदन था। 1911 के संसदीय अधिनियम के द्वारा लार्ड सभा की शक्तियों में भारी कटौती की गई। रेम्जोम्योर के शब्दों में- '' लार्ड सभा पर अंकुश लगाकर उसे शक्तिहीन कर दिया गया उसके सदस्य अपने दुर्भाग्य को रो रहे है।'' 1949 के अधिनियम के द्वारा इसकी शक्तियों को और भी सीमित कर दिया गया। 1911 के संशोधन से पहले यह कामन सभा की तरह ही नहीं वरन उससे अधिक शक्तिशाली सदन थी। लार्ड सभा की प्रमुख शक्तियां इस प्रकार है-

विधायी शक्तियाँ- 1911 से पहले विधि निर्माण के क्षेत्र में दोनों की शक्तियां समान थी। 1832 में कामन सभा से पारित विधेयक तीन बार अस्वीकार किया अंततः 1832 में सुधार अधिनियम पास हो गया। इसके अतिरिक्त 1869 तथा 1884 के सुधार अधिनियम भी लार्ड सभा के विरोध के बावजूद पारित हो गये। 1909 में लार्ड सभा ने लायड जार्ज मन्त्रिमण्डल का बजट ही अस्वीकार कर दिया। इससे कामन सभा एवं सरकार अत्याधिक अपमानित महसूस करने लगी अंततः 1911 के सुधार अधिनियम पास कराकर लार्ड सभा की वित्तीय शक्तियां छीन ली गई । 1945 के सुधार अधिनियम के पहले तक सामान्य विधेयक के संबंध में यह व्यवस्था है कि वह किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है। कामन सभा से पारित होने के बाद विधेयक लार्ड सभा में आता है यदि लार्ड सभा उसे अस्वीकृत कर दे तो विधेयक पास नहीं माना जाता। यदि कामन सभा पुनः उसे पास कर दे और लार्ड सभा पुनः अस्वीकार कर दे तब भी वह पूर्ण नहीं होता है। तीसरी बार भी यदि कामन सभा उसे पास कर दे तो यह विधेयक सीधे राजा के पास स्वीकृति के लिये जायेगा। यदि पहली स्वीकृति एवं तीसरी स्वीकृति के बीच दो वर्ष की अवधि पूरी हो चुकी है तो यह बिना लार्ड सभा की अनुमति के पूर्ण मान लिया जायेगा। दूसरे शब्दों में कहे तो लार्ड सभा किसी विधेयक को दो वर्ष तक रोक सकती है। 1945 में मजदूर दल की सरकार को लार्ड सभा की दो वर्ष तक विधेयक को रोके रहने की शक्ति दलीय हित के विरूद्ध लगी। उन्होंने 1949 का सुधार अधिनियम पारित करके इस अवधि को 1 वर्ष कर दिया।

वित्तीय विधेयकः- वित्त विधेयक के संबंध में लार्ड सभा की स्थिति कामन सभा की तुलना में कमजोर है। वित्त विधेयक केवल कामन सभा में प्रस्तुत किये जा सकते है। यह न तो लार्ड सभा में पहले प्रस्तावित किये जा सकते है न ही लार्ड सभा लम्बे समय तक अपने पास रोके रह सकती है। वित्त विधेयक लार्ड सभा केवल एक माह तक रोक सकती है। वह केवल सुझाव दे सकती है परन्तु मानने के लिये कामन सभा बाध्य नहीं है।

कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ- ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल में कुछ सदस्य लार्ड सभा से लिये जाते है तथा लार्ड सभा का अध्यक्ष लार्ड चासंलर भी ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल का सदस्य होता है। कामन सभा की भांति लार्ड सभा मन्त्रिमण्डल के सदस्यों से प्रश्न पूछ कर प्रशासनिक मामलों की सूचनायें प्राप्त कर सकती है। लार्ड सभा के सदस्य अपने-अपने क्षेत्रों के विशेषज्ञ, अनुभवी लोग होते है, वे विधेयकों पर व्यापक चर्चा करते है। वे सरकार के विरूद्ध अवश्विास प्रस्ताव लाकर सरकार को पदच्युत नहीं कर सकते।

न्यायिक शक्तियाँ- लार्ड सभा को विधायी के साथ महत्वपूर्ण न्यायिक शक्तियां प्राप्त है। लार्ड सभा ब्रिटेन की अपील की उच्चतम न्यायालय के रूप में कार्य करती है। लार्ड सभा जब न्यायिक कार्य करती है तब उसके सभा सदस्य कार्यवाही में भाग नहीं लेते वरन 9 कानूनी लार्ड तथा अन्य न्यायिक विशेषज्ञ लार्ड चासंलर की अध्यक्षता में कार्य करते है। लार्ड सभा का निर्णय अंतिम होता है। संसद विधि बना कर ही उसे बदल सकती है।

9.7 कामन सभा

ब्रिटेन में कामन सभा एक निम्न सदन है जो जन आकांक्षाओं की पूर्ति करते है। यह विश्व का सबसे प्राचीन प्रतिनिधि सदन है। प्रारम्भ में इसे शक्तियां प्राप्त नहीं थी परन्तु समय गुजरने के साथ इसकी शक्तियां बढ़ती गईं न्यूमैन के विचार है- '' संसद की प्रभुता कामन सभा में निवास करती है।''

गठनः- कामन सभा की सदस्य संख्या 1955 में 630 थीं 1983 में किये गये संशोधन के परिणाम स्वरूप सदस्य संख्या बढ़कर 650 हो गई। इसमें इंग्लैण्ड से 531, वेल्स से 36,स्काटलैण्ड से 71, उत्तरी आयरलैण्ड से 12 सदस्य थे। सभी सदस्य पृथक निर्वाचन क्षेत्रों से व्यस्क मताधिकार के आधार पर चुने जाते है। इंग्लैण्ड में मताधिकार की आयु 18 वर्ष निर्धारित है। 21 वर्ष से अधिक को नागरिक चुनाव लड़ सकता है। नामाकंन पत्र पर निर्वाचन क्षेत्र के 10 मतदाताओं को प्रस्तावक होना होता है तथा 150 पौण्ड बतौर जमानत जमा करने होते है।

कामन सभा की अवधिः- 1715 के अधिनियम के द्वारा कामन सभा की अवधि 7 वर्ष थी परन्तु 1911 के अधिनियम से अवधि घटाकर 5 वर्ष कर दी गई । विशेष परिस्थिति में इसका कार्यकाल प्रधानमंत्री की सलाह पर सम्राट के द्वारा घटाया या बढ़ाया जा सकता है। 1910 में प्रथम विश्वयुद्ध के कारण कामन सभा 1910 से 1918 तक काम करती रही। 1935 में निर्वाचित सदन विश्वयुद्ध के कारण 10 वर्ष तक कार्य करता रहा।

निर्वाचन प्रणालीः- ब्रिटेन में समस्त देश को एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र में बांट दिया जाता है। निर्वाचन क्षेत्रों का निर्धारण जनसंख्या के आधार पर किया जाता है। सामान्यतः 50 से 70 हजार पर एक प्रतिनिधि का चुनाव किया जाता है। निर्वाचन क्षेत्रों में परिवर्तन स्थाई आयोग करते है।

गणपूर्तिः- सदन की कार्यवाही आरम्भ करने के लिये कम से कम 40 सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य है। सामान्यतः यह संख्या पूरी रहती है।

कामन सभा के पदाधिकारीः- कामन सभा का मुख्य पदाधिकारी स्पीकर होता है। स्पीकर का निर्वाचन कामन सभा अपने सदस्यों में से करती है। स्पीकर का निर्वाचन निर्विरोध होता हैं।

कामन सभा की शक्तियाँ- कामन सभा ब्रिटेन का लोकप्रिय सदन है जो जनता के द्वारा व्यस्क मताधिकार के द्वारा चुना जाता है। यह दुनियाँका सर्वाधिक शक्तिशाली निम्न सदन है। इसकी प्रमुख शक्तियां इस प्रकार हैः-

विधायी शक्तियाँ - संसदीय प्रभुता होने के कारण ब्रिटिश संसद किसी भी कानून का निर्माण कर सकती हैं,रद्द कर सकती हैं,संशोधित भी कर सकती है। 1911 के पूर्व दोनों सदनों को समान विधायी शक्तियां प्राप्त थी परन्तु 1911 एवं 1949 के संशोधनों के बाद कामन सभा की शक्तियों में विस्तार हुआ है। अब कामन सभा से पास विधेयक को लार्ड सभा अधिकतम एक वर्ष तक रोक सकती है। अतः कानून बनाने के मामले में उसकी शक्ति महत्वपूर्ण है।

वित्तीय शक्ति:- वित्तीय मामलों में कामन सभा को महत्वपूर्ण शक्तियां प्राप्त है। विधेयक की प्रकृति पर विवाद होने की दशा में अंतिम फैसला स्पीकर करता है। वित्त विधेयक कामन सभा में ही प्रस्तुत किया जा सकता है। कामन सभा से पास होने के बाद वह लार्ड सभा में आता है। लार्ड सभा उस पर एक माह तक विचार कर सकती है। एक माह बाद वह उस रूप में पास मान लिया जायेगा जिस रूप में कामन सभा ने पास किया है। इस प्रकार वित्तीय मामलों में लार्ड सभा की स्थिति निर्बल एवं कामन सभा की स्थिति सबल है।

कार्यपालिका शक्तियां- इंग्लैण्ड में संसदीय शासन होने के कारण कार्यपालिका संबंधी सभी शक्तियां कामन सभा के पास है। कामन सभा से ही सरकार का गठन होता है और सरकार कामन सभा के प्रति उत्तरदायी रहती है। कामन सभा सरकार के मन्त्रियों से प्रश्न पूछ सकती है। जबाव से सन्तुष्ट न होने पर काम रोको प्रस्ताव, निन्दा प्रस्ताव पारित कर सकती है। कामन सभा के पास सबसे बड़े अस्त्र के रूप में अविश्वास प्रस्ताव होता हैं वह उसके माध्यम से सरकार को पदच्युत भी कर सकती है।

नीति निर्धारण करना:- प्रशासन की घरेलू एवं विदेश नीति का निर्धारण कामन सभा के द्वारा किया जाता है। वह राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों का संचालन करती है। वह समय-समय पर उसकी सूचना संसद को भी देती है।

कामन सभा विश्व का सर्वाधिक प्राचीन निम्न सदन है। वित्तीय मामलों में इसे महत्वपूर्ण शक्तियां प्राप्त है। यह बहुत शक्तिशाली सदन है। बेजहाट के शब्दों में- '' यह सदैव अपनी इच्छानुसार निर्वाचन या निर्णय करने की स्थिति में है। यह किसी भी समय मन्त्रिमण्डल को सत्तारूढ़ एवं पदच्युत कर सकती है।''

9.8 स्पीकर की शक्तियां

स्पीकर का ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था में बहुत महत्व है। उसका पद सम्मान एवं शक्ति का प्रतीक है। स्पीकर के अधिकार में कुछ का आधार प्रथायें है और कुछ का संविध आज्ञायें और स्थायी आदेश है। स्पीकर की कुछ प्रमुख शक्तियां इस प्रकार है-

कामन सभा की अध्यक्षता करना:- स्पीकर कामन सभा की सभी बैठकों की अध्यक्षता करता है। जब तक वह सदन में स्थान ग्रहण नहीं कर लेता उसकी कार्यवाही प्रारम्भ नहीं होती। बिना स्पीकर के सदन का अधिवेशन नहीं हो सकता। स्पीकर की अनुपस्थिति मे डिप्टी स्पीकर अध्यक्षता करता है।

वाद-विवाद का संचालन करना- सदन के वाद-विवाद का संचालन स्पीकर करता है। वह प्रत्येक सदस्य को बोलने की अनुमति देता है। संबंधित मंत्री के बोलने के बाद वह विरोधी दल के मुख्य वक्ता को बोलने की अनुमति देता है।

अनुशासन बनाये रखना:- सदन में व्यवस्था एवं अनुशासन बनाये रखने का दायित्व स्पीकर का है। सदन में भाषा व्यवहार में संयमित रखने की जिम्मेदारी अध्यक्ष की है। वह सदस्यों से नियमानुसार कार्यवाही चलाने में सहयोग लेता है। अनुशासन भंग होने की दशा में वह अनुशासनात्मक कार्यवाही भी करता है। आवश्यकता पड़ने पर वह अनुशासन भंग करने वाले व्यक्ति को सदन से निष्कासित भी कर सकता है।

नियमों की व्याख्या:- ब्रिटिश संविधान अलिखित होने के कारण वह सदन की कार्यवाही संबंधी नियम भी अलिखित है। समय-समय पर उनकी व्याख्या तथा स्पष्टीकरण की आवश्यकता महसूस की जाती है। यह कार्य स्पीकर करता है। उसका निर्णय अंतिम होता है।

धन विधेयकों का निर्धारण:-कोई विधेयक धन विधेयक है या नहीं, इसका अंतिम फैसला स्पीकर करता है। एक बार उसका फैसला आ जाय तो वह अंतिम होता है।

निर्णायक मत देने का अधिकार:- किसी विषय पर मतदान में समान मत पड़ जाये तो स्पीकर को निर्णायक मत देने का अधिकार है।

सदन के विशेषाधिकारों का रक्षक:- वह सदन के विशेषाधिकारों का रक्षक होता है यदि किसी मामले में सदस्यों के विशेषाधिकारों का हनन होता है तो वह उसकी रक्षा के लिये कार्यवाही करता है।

इस प्रकार से हम कह सकते है कि स्पीकर का पद संसदीय लोकतन्त्र में बहुत महत्वपूर्ण है। वह सम्पूर्ण संसदीय व्यवस्था को चलाने अनुशासन बनाये रखने का कार्य करता है। वह न केवल सदन की बैठकों का निर्बाध संचालन कराता है वरन वह सदस्यों के विशेषाधिकारों को भी सुनिश्चित करवाता है।

अभ्यास प्रश्न 2

1.ब्रिटेन की संसद पार्लियामेण्ट सभी पार्लियामेण्ट की जननी हैं। सत्य/असत्य

2.ब्रिटेन में संसदीय शासन का विकास हुआ है। सत्य/असत्य

3.ब्रिटेन में बहुदलीय व्यवस्था होते हुए भी वास्तविक रूप से द्विदलीय व्यवस्था है। सत्य /असत्य

4.लार्ड सभा एक .....सदन है।

5.कामन सभा का चुनाव प्रत्येक .....वर्ष के बाद है।

6.ब्रिटेन के शासन में .....का बड़ा योगदान है।

9.9 सारांश

ब्रिटेन का संविधान एक विकसित संविधान है। जिसका विकास सैकड़ों वर्षों में हुआ है। यही कारण है कि ब्रिटेन के संविधान को दुनियाँका सबसे प्राचीन एवं अलिखित संविधान कहा जाता है। ब्रिटेन का संविधान दुनियाँके अन्य संविधानों से अलग है क्योकि इसका निर्माण किसी सभा या समिति ने नहीं किया है। यह क्रमिक विकास का परिणाम है जिसमें सैकड़ों वर्षों का समय लगा।

इन चौदह सौ वर्षों में ब्रिटेन में संविधान का विकास हुआ। इसमें ऐतिहासिक प्रलेख, रीतिरिवाजों, परम्पराओं, न्यायिक निर्णय, संवैधानिक,टीकाओं संसदीय अधिनियमों आदि ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। आज ब्रिटेन का संविधान आधुनिकता एवं परम्परा का मिश्रण है। यह संविधान विकसित है। यह दुनियाँका एकमात्र अलिखित संविधान है। यह संसद की सर्वोच्चता एवं विधि के शासन को स्वीकार करता है। दुनियाँकी आधुनिक शासन व्यवस्थाओं को विधि का शासन, संसदीय शासन,प्रतिनिधिआत्मक लोकतन्त्र ,द्विसदनात्मक व्यवस्थपिका तथा उत्तरदायी शासन आदि ब्रिटेन की अनमोल देन है।

इस प्रकार से हम पाते है कि ब्रिटेन में संसदीय शसान का विकास लम्बी अवधि में हुआ। इसके विकास में 1400 वर्षों से अधिक का समय लगा। ब्रिटेन में संसदीय शासन के विकास मे तत्कालीन हालात एवं परिस्थितियां जिम्मेदार थी। समय गुजरने के साथ राजा कमजोर हुए और जन चेतना,स्वतन्त्रता की भावना, समानता की भावना बलवती होती गई। यही कारण है कि जन आकांक्षा के अनुरूप एक नई शासन व्यवस्था अस्तित्व में आई जिसमें जनसहभागिता,जवाबदेही,समानता मुख्य रूप से थे। इसके ब्रिटेन के लोगों के परम्परावादी एवं रूढ़िवादी होने के परिणाम स्वरूप वहां परम्परा के प्रतीक के रूप में वंशानुगत राजतंत्र, लार्ड सभा के गठन की व्यवस्था आदि की गई। दूसरे शब्दों में कहे तो ब्रिटेन का शासन परम्परा एवं आधुनिकता का अद्भुत मिश्रण है। ब्रिटेन का संसदीय शासन दुनियाँके लिये अनूठी सौगात हैं ब्रिटेन में हुआ संसदीय शासन विकास वहां नहीं रूका वरन आज दुनियाँमें 100 से अधिक देशों में इसका फैलाव हो चुका है।

9.10 शब्दावली

निर्वाचक मण्डलः- प्रत्येक निर्वाचन के लिए कुछ सदस्य निश्चित होते है जो निर्वाचन का कार्य करते है, इन्हें निर्वाचक मण्डल कहते है।

प्रतिनिधि शासनः- बड़े राज्यों के उदय के साथ यह अस्तित्व में आया। ब्रिटेन में निर्वाचक क्षेत्रों से प्रतिनिधि संसद के लिये चुने जाते है। आज वास्तव में प्रतिनिधियो के माध्यम से लोकतन्त्र को क्रियान्वित किया जा रहा है।

सामूहिक उत्तरदायित्वः- प्रधानमंत्री सहित सभी मन्त्रिमण्डल के सदस्य निम्न सदन के प्रति जवाबदेह होते है। निम्न सदन के विश्वास पर्यन्त ही सरकार अस्तित्व मे रहती है।

विशेषाधिकारः- किसी पद को धारण करने की साथ प्राप्त होने वाले अधिकार विशेषाधिकार कहलाते है।

धन विधेयकः- जिन विधेयकों में कर, व्यय,आय संबंधी प्रस्ताव होते है। धन विधेयक कहलाते है।

आम चुनावः- प्रत्येक देश में एक निश्चित समय बाद होने वाले पूरे देश के चुनाव को जिससे विधायिका का गठन होता है, आमचुनाव कहलाते है।

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न उत्तर 1: 1.सत्य 2. अलिखित 3.सत्य 4.जवाबदेह 5.प्रधानमंत्री

अभ्यास प्रश्न उत्तर 2: 1.सत्य 2. सत्य 3. सत्य 4. स्थाई 5. पाँच 6. परम्पराओं,रूढ़ियों

9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डायसी ए0बी0,इन्ट्रोडक्शन टू स्टडी आफ ला आफ कास्टीटयूशन,मैकमिलन लंदन 1915

2. खन्ना वी0एन0,आधुनिक सरकारें,साहित्य भवन,आगरा 2002

3. नारायण इकबाल,विश्व के प्रमुख संविधान,1969 ,आर0के0प्रिंटर्स नई दिल्ली

4. जेनिगंस आईवर ,ब्रिटिश कास्टीटयूशन ,हिन्दी कार्ययन्वयन निदेशालय नई दिल्ली।

5. पार्थ सारथी जी0, आधुनिक संविधान 1991,मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ

9.13 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. बेटसन जेक्स, कास्टीटयूसनल रिफार्म इन यूनाइटेड किंगडम प्रेक्टिस एण्ड प्रिसंपल,हार्ट पब्लिकेशन लंदन 1998

2. कोलिन्स टर्नीव,ब्रिटिश गर्वनमेण्ट एण्ड कान्स्टीटयूसन,केब्रिज यूनीवसर्टी प्रेस,लंदन।

3. जेनकिंस डेविड, फ्राम अन रिटन टू रिटन, ट्रासफार्मशन टू ब्रिटिश कामन ला कान्स्टीटयूसन, 2003।

9.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. ब्रिटेन के संविधान की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

2. ब्रिटेन के संविधान के प्रमुख स्त्रोतों का उल्लेख कीजिए।

3. लार्ड सभा के गठन एवं शक्तियों पर प्रकाश डालिये।

4. कामन सभा के गठन एवं शक्तियों पर प्रकाश डालिये

इकाई 10 ब्रिटिश संविधान –II: कार्यपालिका, न्यायपालिका, दल प्रणाली

10.0 प्रस्तावना

10.1 उद्देश्य

10.2 ब्रिटेन में क्राउन की शक्तियाँएवं महत्व

10.3 ब्रिटेन में मन्त्रिमण्डल का उदय, शक्तियां

10.3.1 मन्त्रिमंडलात्मक व्यवस्था की विशेषताएँ

10.3.2 मन्त्रिमंडल के कार्य

10.4 ब्रिटेन में प्रधानमंत्री

10.4.1 प्रधानमंत्री की नियुक्ति

10.4.2 प्रधानमंत्री के कार्य एवं शक्तियाँ

10.5 ब्रिटेन में न्यायपालिका का उद्भव एवं विकास

10.5.1 न्यायपालिका की विशेषताएं

10.6 ब्रिटिश राजनीतिक दलों का उदय

10.7 ब्रिटिश दलीय व्यवस्था की विशेषताएं

10.8 सारांश

10.9 शब्दावली

10.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

10.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

10.12 सहायक /उपयोगी पाठ्य सामग्री

10.13 निबधात्मक प्रश्न

10.0 प्रस्तावना

कार्यपालिका को सामान्यतः सरकार समझा जाता है। कार्यपालिका सरकार के तीन प्रमुख अंगों में से एक है। आधुनिक समय में कार्यपालिका निरन्तर मजबूत हुई है। उसके प्रभाव, शक्तियों का निरन्तर विस्तार हुआ है। आज के समय में ब्रिटेन ही नहीं पूरी दुनियाँमें कार्यपालिका प्रभावी हुई है। इसके पीछे मुख्य रूप से लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा आधुनिक जटिल शासन व्यवस्था मुख्य रूप से जिम्मेदार है। कार्यपालिका ही जनता के सम्पर्क में रहती है। वह न केवल प्रशासन का संचालन करती है वरन सामान्य विधायन में भी उसकी भूमिका रहती है। आज के समय में तो न्यायपालिका के क्षेत्र में भी उसका दखल देखा जा सकता है। आधुनिक समय में सत्ता के केन्द्र बिन्दु के रूप में कार्यपालिका का उदय हुआ है। कार्यपालिका में वे व्यक्ति शामिल होते है जो प्रशासन का संचालन करते है। आधुनिक कार्यपालिका का वर्गीकरण संसदात्मक, अध्यक्षात्मक या बहुल कार्यपालिका के रूप में किया जाता है। यदि बहुदलीय ससंदीय व्यवस्था एवं द्विदलीय ससंदीय व्यवस्था का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाए। ब्रिटेन में ससंदीय शासन व्यवस्था में कार्यपालिका के दो प्रधान होते है, एक नाममात्र के प्रधान के रूप में क्राउन तथा दूसरा वास्तविक प्रधान के रूप में प्रधानमंत्री एवं उसका मन्त्रिमण्डल होता है। क्राउन की शक्तियों,उसके प्रभाव में धीरे-2 कमी हुई और प्रधानमंत्री अपने मन्त्रिमण्डल सहित निरन्तर प्रभावी होता गया। आज ब्रिटेन में कार्यपालिका की सम्पूर्ण शक्तियाँप्रधानमंत्री और उसके मन्त्रिमण्डल में निहित है। वह शासन का केन्द्र बिन्दु है।

आधुनिक समय सरकार का तीसरा महत्वपूर्ण अंग न्यायपालिका हैं यह बहुत महत्वपूर्ण अंग है। इसका मुख्य दायित्व संविधान के अनुसार शासन का संचालन सुनिश्चित करवाना है। यह सरकार का ऐसा अंग है जो आधुनिक समय में विधायिका एवं कार्यपालिका पर प्रभावी नियन्त्रण लगाती है और संविधान के अनुसार शासन का संचालन सुनिश्चित करवाती है। लार्ड ब्राइस का यह कथन प्रासंगिक लगता है-''किसी शासन की उत्तमता की जांच करने की सर्वश्रेष्ठ कसौटी उनकी न्याय व्यवस्था की कार्यक्षमता है।''

नागरिक की स्वतन्त्रता एवं अधिकारों की सुरक्षा का प्रमुख दायित्व न्यायपालिका पर ही है। प्राचीन व्यवस्था के विरूद्ध आज के समय में सरकार के आवश्यक अंग के रूप मे न्यायपालिका का विकास हुआ है साथ भारत,अमेरिका जैसे देशों में न्यायपालिका ने विधायिका एवं कार्यपालिका के ऊपर ''न्यायिक पुर्नवलोकन''के द्वारा प्रभावी अंकुश लगाया है। ब्रिटेन में ''विधि के शासन'' स्वीकार किया गया है जिसका अर्थ है कानून से ऊपर कोई नहीं , सभी कानून के सामने समान है और सामान्य न्यायालय में न्याय पाने के लिये बाध्य है।'' ब्रिटेन में न्यायपालिका प्रधानमंत्री से लेकर सामान्य व्यक्ति विधि से मर्यादित है।

10.1 उद्देश्य

1. इस इकाई में हम ब्रिटेन में कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के उदय एवं विकास का अध्ययन करेगें।

2.ब्रिटेन की न्यायपालिका की प्रमुख विशेषताओं का अध्ययन करेंगें।

3.ब्रिटेन के कार्यपालिका के वास्तविक प्रधान (प्रधानमंत्री) के उद्भव एवं विकास का अध्ययन करेंगें।

4. इस इकाई में हम ब्रिटेन मे राजनीतिक दलों के उदय एवं विकास का अध्ययन करेंगें।

5. ब्रिटेन की दलीय प्रणाली की विशेषताओं का अध्ययन करेंगें।

10.2 ब्रिटेन में क्राउन की शक्तियाँ एवं महत्व

ब्रिटेन में संसदीय शासन व्यवस्था है संसदीय शासन व्यवस्था की यह विशेषता है कि इसमें कार्यपालिका के दो सदन होते है, औपचारिक प्रधान और वास्तविक प्रधान। देश के शासन की वास्तविक बागडोर वास्तविक प्रधान के हाथ में होती है। इसके विपरीत राज्य का अध्यक्ष नाममात्र की शक्तियों का स्वामी होता है। प्राचीन कालीन शक्तिशाली राजा अपनी वास्तविक शक्तियों को खो चुका है। आज राजतंत्र का लोकतान्त्रिककरण हो चुका है।

क्राउन की शक्तियां

वर्तमान समय में क्राउन अनेक शक्तियों का उपभोग करता है। उनका विवरण इस प्रकार है-

1. कार्यपालिका शक्तियाँ- क्राउन का मुख्य संबंध कार्यपालिका से है वह कार्यपालिका का प्रधान है। इस रूप में उसके कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं शक्तियाँव्यापक है। उसकी कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँइस प्रकार हैः-

1.क्राउन प्रधानमंत्री एवं अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति करता है।

2.राज्य के सभी सर्वोच्च पदाधिकारी क्राउन के द्वारा नियुक्ति किये जाते है।

3.ब्रिटेन के अन्य देशों के साथ संबंध संचालन उसी के नाम पर किये जाते है।

4.वह राजदूतों एवं अन्य दूतों की नियुक्ति करता है।

5.युद्ध एवं संधि (समझौते) की घोषणा उसी के नाम से की जाती है।

6.क्राउन क्षमादान या दण्ड को कम करने की शक्तियाँभी रखता है।

7.क्राउन राष्ट्रीय कोष, का नियन्त्रण एवं संचालन करता है। बजट उसी के नाम से प्रस्तुत किया जाता है।

8.मन्त्रिमण्डल सामूहिक रूप से जो कार्य करते है वे सभी क्राउन के नाम से किये जाते है।

इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि क्राउन के पास महत्वपूर्ण कार्यपालिका शक्तियाँहै।

2.व्यवस्थापिका संबंधी शक्तियाँ

व्यवस्थापिका संबंधी शक्तियाँका उपभोग भी क्राउन करता है। ब्रिटेन में कानून निर्माण संबंधी शक्तियाँ''राजा सहित संसद'' में निवास करती है। क्राउन की व्यवस्थापिका संबंधी शक्तियाँइस प्रकार है-

1.संसद के उच्च सदन (लार्ड सभा) में पीयर बनाने का अधिकार क्राउन को है। निम्न सदन (कामन सभा) के चुनाव की तिथि की घोषणा भी उसी के द्वारा की जाती है।

2.क्राउन दोनों सदनों का अधिवेशन बुलवाता है, स्थागित करता है। लार्ड सभा एक स्थाई सदन है परन्तु वह निम्न सदन को विघटित कर सकता है।

3.कोई विधेयक तब तक कानून नहीं बन सकता जब तक क्राउन उस पर हस्ताक्षर न कर दे।

4.क्राउन को अध्यादेश जारी करने का अधिकार हैं।

3.न्याय संबंधी शक्तियाँ

सम्राट को न्याय का स्त्रोत कहा जाता है। ब्रिटेन में सभी न्यायालय सम्राट के न्यायालय कहलाते है। सम्राट की न्यायधीशों की नियुक्ति करता है। संसद के निर्देश पर वह न्यायाधीशों को पद से भी हटा सकता है। वह किसी मामले में क्षमादान या दण्ड को कम कर सकता है। उपनिवेशों की अंतिम अपील भी वह सुनता है।

4. धार्मिक क्षेत्र में शक्तियाँ

सम्राट को धार्मिक क्षेत्र में भी कुछ अधिकार प्राप्त है। इंग्लैण्ड के एंग्लिकन चर्च का वह प्रमुख है। वह चर्च के समस्त पदाधिकारियों आर्कविशप, विशप, डीन,कैनन आदि की नियुक्ति करता है। वह केण्टबरी और यार्क के धार्मिक सम्मेलन बुलाता है। वहां से पारित नियमों के लिये नेशनल असेबली नामक संस्था अस्तित्व में आयी। इस सभा के पारित नियमों पर अंतिम स्वीकृति सम्राट देता है। धार्मिक क्षेत्र में उसके कार्यों के कारण उसे धर्म रक्षक भी कहा जाता है।

सम्मान का स्त्रोतः- ब्रिटेन में सम्राट अनेक प्रकार की उपाधियां प्रदान करता है। इन उपाधियों में प्रमुख रूप से ड्यूक, वैरन,अर्ल,नाइट,लार्ड आदि प्रमुख है।

10.3 ब्रिटेन में मन्त्रिमण्डल का उदय,शक्तियां

आज के समय में ब्रिटेन की संसदीय व्यवस्था को कुछ विद्वान मन्त्रिमण्डल शासन व्यवस्था भी कहते है। आज ब्रिटेन में मन्त्रिमण्डल अत्यन्त शक्तिशाली एवं प्रभावी है। इस मन्त्रिमण्डल के अंकुर नार्मन एंजिवेन काल में राजा को परामर्श देने के लिये बनी संस्था ''कयूरिया रेजिस'' में पाये जाते है। इसी से आकार बढ़ने पर '' प्रिवी परिषद'' और आकार कम करने पर ''कवाल'' अस्तित्व में आयी। प्रारम्भ में यह संसद के प्रति उत्तरदायी न होकर राजा के प्रति उत्तरदायी थी। सम्राट विलियम तृतीय ने 1695 में ह्विग पार्टी से मन्त्रिमण्डल बनाया। उसी समय से यह परम्परा बन गई कि बहुमत प्राप्त दल से मन्त्रिमण्डल का निर्माण किया जाए। 1742 में राबर्ट वालपोल ने कामन सभा में विश्वास खाने के बाद त्यागपत्र दे दिया। उसी समय से सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का उदय हुआ।

मन्त्रिपरिषद एवं मन्त्रि मण्डल में अन्तरः- मन्त्रि परिषद एक वृहत संस्था है जबकि मन्त्रि मण्डल एक छोटी संस्था है। मन्त्रिमण्डल के सभी सदस्य मन्त्रि परिषद के सदस्य होते है परन्तु मन्त्रि परिषद के सभी मन्त्रि मण्डल के सदस्य नहीं हो सकते। दोनों में अन्तर इस प्रकार हैः-

1.आकार में अन्तरः-मन्त्रिमण्डल एक छोटी संस्था है जिसमें कैबिनेट स्तर के मंत्री शामिल होते हैं जबकि मन्त्रिपरिषद एक बड़ी संस्था है जिसमें राज्यस्तरीय, उपमंत्री भी शमिल होते है।

2.पद संबंधी अंतर:- मन्त्रि मण्डल के कुछ सदस्य विशेष विभागों के अध्यक्ष भी होते है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रभावशाली लोग जैसे - लार्ड, प्रिवी, सील, लार्ड चांसलर आदि।

3.वेतन में अंतर:- विभिन्न स्तर के मन्त्रियों में अंतर होता है। कैबिनेट स्तर के मंत्रियों का वेतन अन्य मन्त्रिपरिषद में शमिल मंत्रियों की तुलना में जयादा होता है।

4.कार्य एवं शक्तियों में अन्तर:- मन्त्रिमण्डल के सदस्य अपने विभागों के अध्यक्ष होते है और मन्त्रिपरिषद के सदस्य उनके आधीन सहायक के रूप में काम करते है।

10.3.1 मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था की विशेषतायें

दुनियाँको मन्त्रिमण्डलात्मक शासन ब्रिटेन की देन है। अन्य देशों में इस व्यवस्था को इंग्लैण्ड से ही ग्रहण किया गया है। ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलात्मक शासन की प्रमुख विशेषता इस प्रकार है:-

1.**व्यवस्थापिका कार्यपालिका में घनिष्ठ संबंध:**-इस व्यवस्था में कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका में घनिष्ठ संबंध पाया जाता है। सभी मन्त्रि सामान्यतः संसद से लिये जाते है। यह व्यवस्था अमेरिका की शक्ति पृथक्ककरण के सिद्धान्त के विपरीत दिखायी पड़ती है। लास्की के शब्दों में -'' ब्रिटिश कैबिनेट पार्लियामेण्ट से पृथक नहीं वरन उसका एक भाग है। यह वास्तव में कार्यपालिका को व्यवस्थापिका से जोड़ने वाला साधन है।''

इस शासन प्रणाली में व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका दोनों का जीवन एक दूसरे पर निर्भर करता है। जहां व्यवस्थापिका अविश्वास प्रस्ताव पारितकर कार्यपालिका (सरकार) का अस्तित्व समाप्त कर सकती हैं वही कैबिनेट की सिफारिश पर निम्न सदन का विघटन भी किया जा सकता है।

2.**मन्त्रिमण्डल का सामूहिक उत्तरदायित्व:**- सामूहिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त आधुनिक समय में ब्रिटेन की प्रमुख देन है। इसका अर्थ है कि मंत्री अपने विभाग के लिये व्यक्तिगत रूप से तथा अन्य विभागों के लिये सामूहिक रूप से जिम्मेदार होते है। इसमें यदि किसी एक मंत्री के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित हो गया तो सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र देना पड़ता है। मन्त्रिमण्डल में लिया गया निर्णय होने के बाद वह सबका निर्णय होता है। उसके प्रति सभी सदस्य जबावदेह होते है।

लार्ड मार्ले के शब्दों में -'' सब एक साथ तैरते है और एक साथ डूबते है।'' सामूहिक उत्तरदायित्व का बचाव केवल त्यागपत्र के द्वारा हो सकता है। 1914 में लार्ड मार्ले एवं वर्न्स ने एस्क्विथ मन्त्रिमण्डल से अपना त्यागपत्र दे दिया क्योंकि वे मन्त्रिमण्डल की युद्ध की घोषणा के निर्णय से खुश नहीं थे।

3.**व्यक्तिगत उत्तरदायित्व:**- सामूहिक के साथ मन्त्रियों का व्यक्तिगत उत्तरदायित्व भी होता है। मन्त्रियों के कार्य,आचरण का उत्तरदायित्व व्यक्तिगत भी होता है। यदि किसी मंत्री के कार्य एवं आचरण से प्रधानमंत्री संतुष्ट नहीं है तो वह उसका त्यागपत्र मांग सकता है। 1936 में बजट लीक हो जाने पर जे0एच0टामस को, एटली मंत्रिमण्डल में डाल्टन को त्यागपत्र देना पड़ा।।

4.गोपनीयता:-मंत्रिमण्डल शासन की एक प्रमुख विशेषता गोपनीयता है। मन्त्रिगण मन्त्रिमण्डल की बैठकों के निग्रयों, को गोपनीय रखने के लिये बाध्य होते है। 1917 में लायड जार्ज ने इसी उद्देश्य से मन्त्रिमण्डल सचिवालय की स्थापना की। 1920 के राजकीय गुप्तता अधिनियम से वे गोपनीयता के लिये बाध्य है।

5.**राजनीतिक सजातीयता**:- सामूहिक उत्तरदायित्व एवं गोपनीयता का सिद्धान्त केवल इस आधार पर क्रियान्वित हो पाता है कि मन्त्रिमण्डल एक दलीय होता है। मिलेजुले मन्त्रिमण्डल सामान्यतः वहां नहीं दिखायी पड़ते है। वह युद्ध काल में ही संभव है। यह राजनीतिक सजातीतयता या दलीय लक्षण मन्त्रिमण्डल को सिद्धान्तों और कार्यों की एकता प्रदान करता है।

6.**प्रधानमंत्री का नेतृत्व**:- इस शासन व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता है कि इसमें प्रधानमंत्री का नेतृत्व पाया जाता है। वह बहुमत प्राप्त दल का नेता होता है। वह मन्त्रियों की नियुक्ति करता, विभागों का बंटवारा करता, कार्यों का निरीक्षण करता और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें पदच्युत भी करता है।

10.3.2 मन्त्रिमण्डल के कार्य

मन्त्रिमण्डल के कार्य परम्परा पर आधारित है। वैधानिक रूप से मन्त्रिमण्डल सम्राट की परामर्शदायी समिति है परन्तु व्यवहार में यह ही समस्म शक्तियों का उपभोग करती है। मैरियट के शब्दों में -'' यह ऐसा केन्द्र बिन्दु है जिसके चारों ओर समस्त राजनीतिक यन्त्र घूमता है।'' हाल्डेन समिति की रिपोर्ट में मन्त्रिमण्डल को ''सम्पूर्ण शासन तन्त्र का मुख्य आधार बताया गया है।'' मन्त्रिमण्डल के प्रमुख कार्य इस प्रकार है-

कार्यपालिका संबंधी कार्यः- मन्त्रिमण्डल ब्रिटेन की वास्तविक कार्यपालिका है। उसके कार्यपालिका संबंधी प्रमुख कार्य इस प्रकार है-

राष्ट्रीय नीति निर्धारित करना:- इसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य राष्ट्रीय नीति निर्धारित करना है। यह देश के अन्दर एवं देश के बाहर ,सभी के लिए नीतियों को संचालित करता है।

कार्यपालिका पर नियन्त्रण:- मन्त्रिमण्डल कार्यपालिका संबंधी सर्वोच्च संस्था है। वह सम्पूर्ण प्रशासन पर नियन्त्रण रखती है। सभी मंत्री अपने-अपने विभागों के अध्यक्ष होते है। वे अपने विभागों पर नियन्त्रण रखते हुए नीतियों को क्रियान्वित करते है।

समन्वयकारी कार्य:- कई विभागों में बंटे होने के कारण उसमें समन्वय की आवश्यकता होती है। मंत्रिमण्डल सभी विभागों में समन्वय स्थापित करता है। इस कार्य हेतु कई समितियों का निर्माण भी किया जाता है।

व्यवस्थापिका संबंधी कार्य:- मन्त्रिमण्डल व्यवस्थापिका संबंधी कार्यों को करता हैं। संसदीय शासन में व्यवस्थापिका कार्यपालिका परस्पर जुड़े रहते हैं अतः कार्यपालिका के सदस्य विधायिका का सत्र बुलाने, सत्रावसन करना, सत्र स्थापित करना,संसद को भंग करने संबंधी सभी कार्य क्राउन मन्त्रिमण्डल की सिफारिश पर करती है। संसद में वही कानून बनते है जिसे मन्त्रिमण्डल चाहता हैं। संसद के सत्र के प्रारम्भ में पढ़ा जाने वाला भाषण मन्त्रिमण्डल के द्वारा तैयार सरकार के लक्ष्यों की रूप रेखा होता है। यही कारण है कि कार्टर, रैनी हर्ज ने इसे ''छोटी व्यवस्थापिका'' कहा है।''

वित्तीय कार्यः- देश की सम्पूर्ण आय-व्यय का लेखा-जोखा मन्त्रिमण्डल के द्वारा तैयार किया जाता है। वह बजट तैयार करता है, सदन में रखता है उसे पारित करता है। मन्त्रिमण्डल की सहमति के बिना किसी भी कर या अनुदान की मांग में कोई कटौती नहीं की जा सकती है।

न्यायिक कार्यः- मन्त्रिमण्डल को न्यायिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण शक्तियाँप्राप्त है। मन्त्रिमण्डल की सिफारिश पर न्यायाधीशों की नियुक्ति होती है, जिन व्यक्तियों को क्षमादान मिलता है उसकी सिफारिश मन्त्रिमण्डल ही करती हैं ब्रिटेन में सर्वोच्च न्यायिक शक्ति ''प्रिवी परिषद'' में निहित है और उसका अध्यक्ष मन्त्रिमण्डल का सदस्य होता है।

विदेश नीति का संचालनः-विदेश नीति का निर्धारण एवं संचालन मन्त्रिमण्डल के द्वारा किया जाता है। वह विदेशों में राजदूतों की नियुक्त करता हैं। वह ही अन्य देशों के साथ संधि समझौते को आगे बढ़ाते है।

सैनिक कार्यः- वास्तविक रूप से सैनिक शक्तियाँभी मन्त्रिमण्डल के पास है। क्राउन सेना का सर्वोच्च पदाधिकारी तो अवश्य है परन्तु वह समस्त निर्णय मन्त्रिमण्डल के परामर्श पर लेता है। युद्ध एवं शान्ती की घोषणा क्राउन मन्त्रिमण्डल के परामर्श पर करता है। युद्ध का संचालन एवं सेना का नवीनीकरण का कार्य मन्त्रिमण्डलीय परामर्श से होता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि मन्त्रिमण्डल की शक्तियों का अत्याधिक विस्तार हुआ है। शासन का सम्पूर्ण व्यवस्था उसी के चारों ओर घूमती है। वह कार्यपालिका संबंधी शक्तियों को ही नहीं वरन विधायी ,न्यायिक वित्तीय शक्तियों का प्रयोग करता है। मन्त्रिमण्डल की उनपरोक्त शक्तियों को देखते हुए कुछ आलोचक कहते है कि इस व्यवस्था में मन्त्रिमण्डल तानाशाही स्थापित हो सकती है। मन्त्रिमण्डल अपनी मनमानी करती है। उसके ऊपर किसी प्रकार का कोई नियन्त्रण नहीं रहता है। यह बात पूर्णतः सही नहीं लगती। यद्यपि संसदीय शासन में मंत्रीमण्डल शक्तिशाली होता है परन्तु वह निरंकुश नहीं हो सकता। उसके ऊपर अनेक तरह के नियन्त्रण होते है उसमें से प्रमुख इस प्रकार हैः-

1. विरोधी दल
2. जनमत
3. संसदीय सहनशीलता
4. संसदीय परम्परायें

संसदीय शासन में विरोधी दल की भूमिका अत्याधिक महत्वपूर्ण होती है। वह सत्तारूढ़ दल पर कड़ा अंकुश रखता है और जनमत को अपने पक्ष में करने का प्रयास करता है। सत्तारूढ़ दल कभी भी ऐसा कार्य नहीं करता कि जनमत उसके विरूद्ध जाए। अतः जनमत संसदीय परम्परायें स्वतः मन्त्रिमण्डल पर प्रभावी अंकुश रखती है।

10.4 ब्रिटेन में प्रधानमंत्री

ब्रिटेन में मन्त्रिमण्डल वास्तविक कार्यपालिका है और प्रधानमंत्री उसका प्रधान होता हैं यही कारण है कि प्रधानमंत्री को संसदीय शासन का केन्द्रबिन्दु माना जाता है। यही कारण है कि कुछ विद्वान इसे प्रधानमंत्रीय शासन व्यवस्था भी कहते है। प्रधानमंत्री का पद 1721 में अस्तित्व में आया। जब ''राबर्ट वालपोल'' ने सत्ता संभाली। ब्रिटेन के इतिहास में प्रधानमंत्री का लिखित उल्लेख 1878 में आया जब लार्ड वीकन्सफील्ड ने वर्लिन संधि पर हस्ताक्षर के साथ अपने आपको '' हर मैजेस्टी'' का प्रथम लार्ड तथा इंग्लैण्ड का प्रधानमंत्री लिखा। 1937 में ''मिनिस्टर आफ

क्राउन'' एक्ट के द्वारा प्रधानमंत्री को 10000 पौण्ड वार्षिक वेतन एवं 2000 पौण्ड पेंशन निर्धारित किया गया। 1964 में यह वेतन 14000 पौण्ड वार्षिक कर दिया गया।

10.4.1 प्रधानमंत्री की नियुक्ति

ब्रिटेन की परम्परा में प्रधानमंत्री की नियुक्ति क्राउन करता है। कामन सभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता को वह प्रधानमंत्री नियुक्त करता है। ब्रिटेन में व्यवहारिक रूप से द्विदलीय व्यवस्था होने के कारण वहां स्थिति स्पष्ट रहती है।बहुमत प्राप्त दल एवं उसके नेता की स्थिति अपने आप स्पष्ट रहती है। अतः उन्हें सरकार बनाने के लिए आमन्त्रित करने में कठिनाई होती हैं। भारत तथा अन्य देश जहां पर बहुदलीय व्यवस्था है प्रायः स्पष्ट बहुमत का अभाव देखा जाता है अतः ऐसे में राष्ट्रपति को स्वविवेक का इस्तेमाल करके प्रधानमंत्री की नियुक्ति करनी पड़ती है। ब्रिटेन में तीन अवस्थाओं में स्वविवेक की शक्ति का इस्तेमाल करना पड़ता हैः-

1.जब किसी दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो।

2.प्रधानमंत्री की अचानक मृत्यु या त्यागपत्र से पद रिक्त हो गया हो।

3.जब मिश्रित सरकार बनाना आवश्यक हो जाए।

उसके साथ ब्रिटेन में अब यह परम्परा बन गई है कि प्रधानमंत्री निम्न सदन (कामन सभा) से चुना जाता है। 1902 में लार्ड सेलिसबरी के बाद सभी प्रधानमंत्री कामन सभा से चुने जाते है।

10.4.2 प्रधानमंत्री के कार्य एवं शक्तियां

ब्रिटेन की शासन व्यवस्था में प्रधानमंत्री की स्थिति बेहद महत्वपूर्ण है। जैनिग्स ने ठीक लिखा है कि -'' वह ब्रिटिश संविधान की आधार शिला है'' उसके पास व्यापक शक्तियाँहै। वह सरकार के निर्माण, विभागों के बंटवारें और संचालन के केन्द्र बिन्दु में है। उसकी प्रमुख शक्तियाँइस प्रकार है-

मन्त्रिमण्डल का निर्माणः- प्रधानमंत्री के परामर्श पर राजा के द्वारा मन्त्रियों की नियुक्ति की जाती है। वास्तव में एक बार प्रधानमंत्री नियुक्त होने के बाद प्रधानमंत्री स्वंय अपना मन्त्रिमण्डल बनाता है। वह अपने मन्त्रिमण्डल में सभी वर्गों,क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करवाता है। वह आवश्यकता पड़ने पर दल के बाहर के व्यक्ति को भी स्थान दे सकता है। 1903 में लार्ड मिलन्नर को ,1924 में लार्ड चेम्सफोर्ड को उनकी सेवाओं का लाभ लेने के लिये मंत्री बनाया गया। 1966 में चुनाव में पराजित होने के बाद गार्डन वाकर को विदेश मंत्रालय में लिया गया। उपरोक्त घटनायें प्रधानमंत्री की मन्त्रिमण्डल बनाने में स्वविवेक की शक्ति का प्रमाण हैं।

मन्त्रिमण्डल का कार्य संचालनः- प्रधानमंत्री न केवल मन्त्रिमण्डल का निर्माण करता है वरन उसकी समस्त कार्यवाही का संचालन भी करता है। वह बैठकों की अध्यक्षता करता है और बैठक का एजेण्डा भी तय करता है। बैठकों में स्वतन्त्र रूप से विचार विमर्श होता है परन्तु विवाद की स्थिति में बहुमत से फैसला होता है।

मन्त्रिमण्डल का अन्तः- मन्त्रियों की पदच्युति का अंतिम फैसला प्रधानमंत्री का ही होता है। वह जब चाहता है अपनी कैबिनेट से किसी भी मंत्री को हटाने की सिफारिश सम्राट से कर सकता है। उसकी सिफारिश पर संबंधित मंत्री को पद से हटना ही होता है। यदि प्रधानमंत्री स्वयं ही पद छोड़ दे तो उसके साथ सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल को जाना होता हैं

लास्की के शब्दों में -'' वह अपने मन्त्रिमण्डल में जब चाहे जैसा परिवर्तन कर सकता है।'' वह मन्त्रिमण्डल का केन्द्र बिन्दु है। वह उसके निर्माण, उसके जीवन और अन्त में केन्द्रीय स्थिति रखता है।''

शासन पर नियन्त्रण:- देश का सम्पूर्ण शासन सम्राट के नाम से होता है परन्तु व्यवहार में सभी अधिकारों का प्रयोग प्रधानमंत्री करता है। वह शासन पर नियन्त्रण रखते हुये समस्त विभागों में समन्वय स्थापित करता है। समस्त राजकीय पदों पर नियुक्ति प्रधानमंत्री की सलाह पर सम्राट द्वारा की जाती है। समस्त विशप,राजदूत, न्यायधीश, विभागीय प्रमुख, गर्वनर, आयोगों के अध्यक्षों आदि की नियुक्ति प्रधानमंत्री की सलाह पर की जाती है।

परराष्ट्र संबंधों का संचालन:- यह प्रधानमंत्री का महत्वपूर्ण कार्य है। वह दूसरे देशों के साथ संबंध संचालन के केन्द्र बिन्दु में रहता है। दूसरे देशों के साथ किये गये संधि, समझौतों पर विदेश मंत्री के नहीं वरन ब्रिटेन के प्रधानमंत्री के हस्ताक्षर होते है। अन्य देशों उच्चायुक्तों, राजदूतों की नियुक्ति प्रधानमंत्री की सलाह पर की जाती है। वह स्वयं राष्ट्रहित के सवंर्धन के लिये दूसरें देशों की यात्रा करता है। आवश्यकता पड़ने पर वह दूसरे देशों में विशेष दूतों को भी भेजता है।

लोकसदन का नेतृत्व:- लोकसदन के बहुमत प्राप्त दल के नेता को प्रधानमंत्री का पद प्राप्त होता है। प्रधानमंत्री अपने मंत्रियों के साथ संसद में सम्पूर्ण व्यवस्थापन कार्य संचालन करता है। वह संसद का पथ प्रदर्शन करता है। देश के बजट निर्माण में भी उसकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। दलीय सचेतकों के माध्यम से वह दल के सदस्यों को आवश्यक आदेश देता है। सदन के नेता के रूप में उसकी महत्वपूर्ण शक्ति लोकसदन को विघटित करने की है।

मन्त्रिमण्डल एवं सम्राट के बीच की कड़ी प्रधानमंत्री सम्राट का मुख्य परामर्श कर्ता होता हैं वह मन्त्रिमण्डल एवं सम्राट के बीच की कड़ी होता है। मन्त्रिमण्डल के सभी महत्वपूर्ण फैसलों की जानकारी वह स्वयं सम्राट को देता है। सम्राट के परामर्श को वह मन्त्रिमण्डल को पहुंचाता है।

प्रधानमंत्री की स्थिति:- ब्रिटिश प्रधानमंत्री का पद प्रतिष्ठा एवं महत्व से पूर्ण है। इसके साथ ही पद को धारण करने वाले व्यक्तित्व का प्रभाव भी पद पर पड़ता है। उसकी विशेष स्थिति के कारण लोवेल ने कहा-''वह मन्त्रिमण्डल रूपी मेहराब की आधारशिला है।'' मैरियट के शब्दों में -'' वह देश का राजनीतिक शासक है।'' परम्परागत रूप से प्रधानमंत्री को '' समकक्षों में प्रथम '' माना जाता है। मार्ले का यह कथन आधुनिक समय में परिवर्तित हो चुका हैं अब वह ''मन्त्रिमण्डल का अधिपति'' है। रम्जेम्योर ने लिखा है- प्रधानमंत्री को समकक्षों में प्रथम कहना भ्रम मूलक है। वह मन्त्रिमण्डल का अधिपति है , वह उसे जीवन देता है, उसका संहार करता है, वह बहुमत दल का नेतृत्व करता है, वह पदाधिकारियों की नियुक्ति करता है, लोकसदन का नेतृत्व करता है।''

आज आम निर्वाचन में मतदान संभावित प्रधानमंत्री के व्यक्तित्व को देखते हुए होता है। वह आज के समय में और मजबूत हुआ है। आज उसकी स्थिति नक्षत्रों के बीच सूर्य की तरह होती है। रेम्जेम्योर एवं कुछ विद्वान यह मानते है कि प्रधानमंत्री अधिनायक बन सकता है। वह निरकुंश हो शासन संचालन कर सकता है। वास्तव में तानाशाह के रूप में कल्पना करना निराधार है। कई बार वह अपनी इच्छा का मन्त्रिमण्डल की बैठकों में समर्थन प्राप्त नहीं कर पाता।उसके द्वारा मनमानी किये जाने पर उसे पदच्युत किया जा सकता है। बहुमत प्राप्त दल अपना नया नेता चुन सकता है। प्रधानमंत्री के ऊपर कुछ नियन्त्रण रहते है जो इस प्रकार है:-

1. जनमत का अंकुश

2. दलीय अनुशासन का अंकुश

3. विपक्ष का अंकुश

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि ब्रिटेन में प्रधानमंत्री के पास महत्वपूर्ण शक्तियाँही नहीं वरन व्यापक प्रभाव है। ब्रिटेन की शासन व्यवस्था में उसकी केन्द्रीय भूमिका है। उसी के चारों शासन चलता है। वह धुरी के समान है। वह मन्त्रिमण्डल का गठन,विभागों के बंटवारें, विभागों के मध्य तालमेल, मन्त्रियों की पदच्युत , मन्त्रिमण्डल के विघटन तथा निम्न सदन के विघटन की सिफारिश करने आदि में केन्द्रीय भूमिका में रहता है। इन सबके बावजूद वह निरंकुश नहीं है। उसको निम्न सदन में जबाव देना पड़ता है। यदि निम्न सदन उसके जबाव से सन्तुष्ट न हो तो वह अविश्वास प्रस्ताव पास कर सरकार का जीवन ही समाप्त कर सकती है। इसके आलाव प्रधानमंत्री एवं उसका मन्त्रिमण्डल जनमत को सदैव बनाये रखना चाहते है अतः वह कोई ऐसा कार्य नहीं करते जो जनमत को उनके विरूद्ध कर दे। प्रधानमंत्री का पद संसदीय शासन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है परन्तु वह जनमत एवं निम्न सदन के विश्वास से मर्यादित है।

अभ्यास प्रश्न 1 :

1.ब्रिटेन में किस प्रकार की शासन प्रणाली पायी जाती हैं। संसदीय /अध्यक्षात्मक

2.ब्रिटिश प्रधानमंत्री की नियुक्ति कौन करता है। राजा रानी/संसद

3.ब्रिटेन का पहला प्रधानमंत्री .....था।

4.ब्रिटेन में मन्त्रिमण्डल सामूहिक रूप से .....के प्रति उत्तरदायी होता है

5.मन्त्रिपरिषद के सदस्यों को पद और गोपनीयता की शपथ.....दिलाता है।

6.मन्त्रिपरिषद से त्यागपत्र देने के लिए त्यागपत्र राजा को संबोधित करके दिया जाता है। सत्य /असत्य

10.5 ब्रिटेन में न्यायपालिका का उद्भव एवं विकास

आधुनिक समय में सरकार के तीन अंगों को स्वीकार किया जाता है। व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका के अतिरिक्त न्यायपालिका की आवश्यकता होती है। न्यायपालिका नागरिक अधिकारों की रक्षा करती है। यह विधायिका द्वारा निर्मित कानूनों की व्याख्या करती है। कानून भंग करने वालों को दण्ड देती हैं लार्ड व्राइस के शब्दों में -'' किसी भी शासन की उत्तमता जांचने के लिये सर्वश्रेष्ठ कसौटी उसकी न्याय व्यवस्था है।'' गार्नर के शब्दों में -'' बिना विधायी अंगों के समाज की कल्पना की जा सकती है किन्तु बिना न्यायिक अंगों के एक सम्भ समाज की कल्पना नहीं की जा सकती।''

10.5.1 न्यायपालिका की विशेषतायें

ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं-

1.न्यायिक स्वतन्त्रता:- ब्रिटेन में न्यायपालिका स्वतन्त्र है। 1701 के '' सेटेलमेण्ट एक्ट'' में यह व्यवस्था की गई है कि ब्रिटेन में न्यायधीश अपने पद पर सदाचार पर्यन्त रहेगें। वहां पर न्यायधीशों को नौकरी की सुरक्षा प्राप्त है। वे

निष्पक्ष होकर निर्णय देते है। उनकी नियुक्ति सम्राट के द्वारा होती है । उनको संसद के प्रस्ताव पर ही सम्राट द्वारा हटाया जा सकता है।

2.विधि का शासनः- इंग्लैण्ड में विधि का शासन पाया जाता है जिसका अर्थ है कि इंग्लैण्ड में कोई भी व्यक्ति विधि से ऊपर नहीं है। विधि की दृष्टि से सभी व्यक्ति समान है। सभी व्यक्तियां के लिये समान दण्ड व्यवस्था है। किसी भी व्यक्ति को तब तक दण्ड नहीं दिया जा सकता जब तक यह सिद्ध न हो जाए कि उसने विधि का उल्लघंन किया है।

3.जूरी प्रणालीः- ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता वहां की जूरी व्यवस्था है। यह व्यवस्था सर्वप्रथम ब्रिटिश व्यवस्था में 12 वीं सदी में दिखायी पड़ी। इसमें 12 सदस्य होते है। वे सुनवाई के बाद न्यायधीशों के समक्ष अपने विचार रखते है। न्यायधीश सामान्यतः जूरी के परामर्श का बहुत अधिक सम्मान करते है। जूरी यदि अभियुक्त के पक्ष में निर्णय देती है तो पुलिस निगरानी की अपील नहीं कर सकती। जूरी प्रणाली के कारण न्याय में दया का सम्मिश्रण हो जाता हैं ब्रिटेन में जूरी के सदस्य निष्पक्षता, निर्भीकता, अनुभव के लिये जाने जाते है।

4.निःशुल्क कानूनी सहायताः- ब्रिटिश न्यायव्यवस्था की एक अन्य विशेषता निःशुल्क कानूनी सहायता की व्यवस्था है। कानूनी सहायता एवं परामर्श अधिनियम 1949 कानूनी सहायता अधिनियम 1949 में यह व्यवस्था है कि आर्थिक रूप से निर्बल व्यक्तियों को वेल्स तथा इंग्लैण्ड के उच्च न्यायालयों और अपीलीय न्यायालयों तथा स्काटलैण्ड के सेंशन न्यायालयों तथा शेरिफ न्यायालयों के समक्ष आने वाले दीवानी मामलों में सरकार की ओर से निःशुल्क कानूनी सहायता दी जाती है।

5.न्यायिक पुर्नवलोकन का अभावः- इंग्लैण्ड में संसदीय सम्प्रभुता का सिद्धान्त काम करता है। वहां संसद सर्वोच्च है अतः संसद के कानून को अवैध घोषित करने का अधिकार किसी को नहीं है। अमेरिका तथा भारत में न्यायिक पुर्नवलोकन का अधिकार है। यहां पर सर्वोच्च न्यायालय संसद द्वारा बनायी गई विधि की संवैधानिकता की जांच कर सकती है।

6.नागरिक स्वंतन्त्रता की रक्षकः- ब्रिटिश न्यायालय नागरिक स्वतन्त्रता और अधिकारों का रक्षक है। ब्रिटेन में लिखित संविधान ने होने तथा मौलिक अधिकारों के अभाव के बावजूद नागरिकों को पर्याप्त स्वतन्त्रता प्राप्त है। वहाँ पर न्यायालय बंदी प्रत्याक्षीकरण, परमादेश, उत्प्रेषण, प्रतिषेध, रिट जारी करके नागरिक स्वतन्त्रता की रक्षा करते है।

7.विकेन्द्रित न्याय व्यवस्थाः- ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता वहां की सर्किट न्यायव्यवस्था है। ये न्यायालय मुकदमों की सुनवाई एक स्थान पर करने के बजाय दूसरे स्थान पर जाकर करते है। काउण्टी न्यायलयों को दीवानी मामलों में व्यापक अधिकार प्राप्त है, लगभग 60 सर्किटों में विभक्त है। फौजदारी मामलों की सुनवाई '' एसाइज न्यायालयों'' द्वारा की जाती है। ये न्यायालय तीन चार अपने क्षेत्र में अलग-अलग मुकदमें सुनते है।

8.सम्पूर्ण कानूनी संहिता का अभावः- इंग्लैण्ड में अधिकांश कानून अलिखित है। जो सामान्य कानूनों पर आधारित है। इस संबंध में न्यायाधीशों के निर्णय महत्वपूर्ण है। इस समय ब्रिटेन की न्याय व्यवस्था का आधार 3000 संसद अधिनियम, हजारों अधीनस्थ अधिनियम, तीन लाख मुकदमों के निर्णय हैं।

10.दीवानी व फौजदारी न्यायालयों में भेदः- ब्रिटेन में दोनों मामलों में भेद है। दीवानी, फौजदारी कानूनों में तथा उनकी प्रक्रिया में भेद किया जाता है। दीवानी कानूनों का संबंध समाज के सदस्यों उनके अधिकारों, कर्तव्यों एवं

दायित्वों के विवाद से होता है। फौजदारी कानूनों का संबंध सम्पूर्ण समाज एवं राजय के विरूद्ध किये गये अपराधों से होता है। इसके अर्न्तगत अभियोग का संचालन राज्य की ओर से किया जाता है। जूरी का प्रयोग सामान्यतः फौजदारी मामलों में किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न 2 :

1.ब्रिटेन की न्याय व्यवस्था स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष रूप से कार्य करती है। सत्य/असत्य

2.ब्रिटेन में कानून अधिकांशतः संहितावद्ध है। सत्य /असत्य

3.ब्रिटेन में दीवानी फौजदारी कानूनों में अन्तर नहीं है। सत्य/असत्य

4.ब्रिटेन में दीवानी स्तर का सबसे निचला न्यायालय .....है।

5.ब्रिटेन का सर्वोच्च न्यायालय.....है।

10.6 ब्रिटिश राजनीतिक दलों का उदय

- ब्रिटेन में राजनीतिक दलों का इतिहास स्टुअर्ट काल से आरम्भ होता है। चार्ल्स प्रथम के शासनकाल में संसद की सर्वोच्चता के लिये संघर्ष हुआ। जनता दो भागों में विभक्त हो गई। एक वर्ग राजा के साथ हो गया जिसे 'कैवेलिर्यस' कहा गया। यह वर्ग राजा समर्थक तथा वह राजा की शक्तियों में किसी प्रकार की कमी किये जाने का विरोधी था। दूसरा वर्ग जो संसद को ज्यादा शक्तियां दिये जानें का समर्थक था वह 'राउण्डहेडेड' कहलाया क्योंकि इस वर्ग ने अपने पहचान को स्थापित करने के लिये अपने सिर से बालों को साफ करा लिया था। आधुनिक रूप से ब्रिटेन में 18 वीं शताब्दी तक कोई दल प्रणाली नहीं थी। यह एक गुट प्रणाली थी। इनमें एक गुट सत्ताधारी वर्ग के समर्थन में था तथा दूसरा उसका विरोधी था। 1679 में बहिष्कार बिल के द्वारा जेम्स द्वितीय को गद्दी पर बैठने से रोकने का प्रयास किया गया। जो इस बिल के पक्ष में थे वे 'पीटिशनर्स' कहलाये जिन्होंने इससे घृणा की वे 'एवोवरर्सस' कहलाये। विलियम द्वितीय के समय में यह क्रमशः ह्विग एवं टोरी कहलाये। ह्विग राजा के अधिकारों के नियन्त्रण के पक्ष में थे अतः उन्होंने 'राउण्डहेडेड' परम्पराओं का समर्थन किया। टोरी इसके उलट 'कैविलियर्स' की तरह टोरी राजा की शक्तियों, सुविधाओं को बनाये रखना चाहते थे।

1832 में सुधारों के प्रारम्भ के साथ ह्विग एवं टोरी दल के नामों में भी परिवर्तन हो गया। अब ये नये नामों से क्रमशः उदार दल एवं अनुदार दल के नाम से जाने जाने लगें उदार दल के समर्थक ब्रिटेन के समाज में हो रहे परिवर्तन एवं उनके अनुरूप नये कानून की माँग ,नये स्वतन्त्रताआं,मताधिकार की माँग का समर्थन कर रहे थे। दूसरे शब्दों में कहे तो ये उदार अल राउन्डहेडेड एवं ह्विग की परम्परा के थें ये समय के साथ नये नागरिक अधिकारों के प्रति सजग थे और उनकी माँग कर रहे थे। इसके ठीक विपरीत ब्रिटेन में एक दूसरा वर्ग था जो परिवर्तन सुधारों, नये अधिकारों, का विरोध कर रहा था। यह वर्ग पुरानी व्यवस्था को बनाये रखना चाहता था। ये राजा के विशेषधिकारों,भत्तों,चर्च के अधिकारों, लार्ड सभा की शक्तियों,साम्राज्यवाद का समर्थन किया। ये पुरानी परम्पराओं,रूढ़ियों,आदर्शों को बनाकर रखना चाहते थे। यही कारण था कि इन्हें अनुदार दल(कंजरेटिव) कहा गया।

1886 में ब्रिटेन में एक बड़ा परिवर्तन आया। तत्कालीन प्रधानमंत्री'ग्लेडस्टोन' ने आयरलैण्ड के लिये एक अलग संसद की स्थापना के उद्देश्य के लिये विधेयक प्रस्तुत किया तो उदार दल में फूट पड़ गई। इस दल के 100 से अधिक सदस्यों ने इस बिल का विरोध किया। इन अलग हुए समूह ने अपना अलग दल बनाया जिन्हें 'यूनियनिस्ट' कहा गया। यह दल कभी उदार दल तो कभी अनुदार दल को समर्थन देता रहा। 1886 से 1905 तक ब्रिटेन की राजनीति में अनुदार दल का प्रभुत्व रहा। 1868 में शहरी मजदूरों एवं 1885 में ग्रामीण मजदूरों को मताधिकार प्राप्त हो जाने से ब्रिटेन राजनीतिक व्यवस्था पर दूरगामी परिणाम हुए। इसी समय श्रमिक संघों का विकास भी तेजी से हो रहा था। इसी समय समाजवादी आंदोलन भी चला जिसके परिणाम स्वरूप सामाजिक लोकतन्त्रीय संघ, 1883 में 'फेबियन समाज' की स्थापना हुई। 1899 में श्रमिक संघों ने मजदूर सदस्यों को संसद का चुनाव जितवाने के उद्देश्य से एक विशेष सम्मेलन बुलाया। उदारदल ने मजदूरों के हित में ठोस कार्य नहीं किया था। वे मजूदरों का समर्थन देने को भी तैयार नहीं थे अतः उदार दल में फूट पड़ गई। एक नये श्रमिक दल का विकास हुआ। लाउड जार्ज ने ऐस्विक्थ को निकाल कर बाहर कर दिया। 1924 आते-2 श्रमिक दल ने उदार दल से सत्ता हथिया ली। ब्रिटेन की जनता अब यह महसूस करने लगी थी कि नीतियों को प्रभावित करने के लिये यह आवश्यक है कि या तो अनुदार दल को वोट दिया जाय या मजदूर दल को। 1929-31 में यह दल पुनः सत्ता में आ गया।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि ब्रिटेन में राजनीतिक दलों का विकास हुआ है। इसमें सैकड़ों वर्ष का समय लगा है इसके पीछे तत्कालीन हालात, परिस्थितियां जिम्मेदार थी। कतिपय यही कारण है राउण्डहेडेड, कैविलियर्स समूह से होता हुआ आगे जाकर यह ह्विग एवं टोरी और आगे जाकर लिबरल एवं कंजरेटिव तथा बीसवीं सदी में लेबर एवं कंजरेटिव में परिवर्तित हो गया।

10.7 ब्रिटिश दलीय व्यवस्था की विशेषतायें

लोकतंत्र के सफल संचालन के लिये राजनीतिक दल अनिवार्य है। यह जनमत का निर्माण कराने में सहायक होते है। यह राजनीतिक व्यवस्था में जन सहभागिता बढ़ाने, राजनीतिक चेतना वृद्धि करने में सहायक होते है। यह चुनाव प्रक्रिया को सम्पन्न कराने, चुनाव उपरांत विपक्ष में रहते हुए सरकार पर नियंत्रण रखने का महत्वपूर्ण दायित्वों का निर्वहन करते है। ब्रिटेन में संसदीय शासन है जिसमें सिद्धान्तः,व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका में घनिष्ठ संबंध पाया जाता है। व्यवस्थापिका कार्यपालिका एक दूसरे से ऐसी जुड़ी होती है दोनों का जीवन परस्पर एक दूसरे पर निर्भर होता है। कार्यपालिका व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होती है। उपरोक्त सभी गतिविधियों में ब्रिटिश राजनीतिक दलों की महती भूमिका है। ब्रिटेन कें संविधान में द्विदलीय पद्धति का उल्लेख नहीं मिलता है। परन्तु ब्रिटेन के राजनीतिक दलों के इतिहास को देखने के बाद यह सिद्ध हो जाता है कि वहां दो दलों का प्रभुत्व सदैव से रहा है। वर्तमान समय में वहां पर लेबर पार्टी एवं अनुदार दल प्रभावी है। ब्रिटिश दलीय व्यवस्था की प्रमुख विशेषतायें निम्न हैः-

1.द्वि दलीय पद्धतिः-ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था की यह विशेषता है कि इसमें समान रूप से शक्तिशाली दो दलों का अस्तित्व सदैव से रहा है। जहां तक ब्रिटिश संविधान का प्रश्न है वहां पर कठोर रूप से दो दलीय व्यवस्था स्थापित नहीं है। वहाँ के लम्बे सवैंधानिक इतिहास में समान रूप से मजबूत दो दलों को अस्तित्व मिलता है। वहां पर अन्य दलों का अस्तित्व भी है परन्तु जन चेतना के कारण दो ही दल मजबूत स्थिति को प्राप्त कर पाते है। यही कारण है कि यहाँ पर द्वि दलीय प्रणाली कहा जाता है।

सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में राजा एवं राजसत्ता के समर्थक 'कैवेलियर्स' तथा संसद एवं धार्मिक सहिष्णुता के समर्थक 'राउण्डहेडेड' कहलाये। आगे जाकर यह समूह ह्विग एवं टोरी के रूप में सामने आये। 1832 में सुधार अधिनियम पारित होने के बाद में उदार दल एवं अनुदार दल कहलाये। बींसवी सदी में मजदूर दल के उदय के साथ लगा मानो ब्रिटेन में द्वि दलीय व्यवस्था के स्थान पर त्रि दलीय व्यवस्था स्थापित हो जायेगी। ब्रिटेन की जनता की जागरूकता, परम्परावादी रूख होने के कारण यह आंशका निर्मूल साबित हुई और मजदूर दल की शक्ति बढ़ने के साथ उदार दल की शक्ति सीमित होती चली गई और फिर दो ही दलों का प्रभुत्व बना रहा। आज भी वहां पर मजदूर दल एवं अनुदार दल सक्रिय एवं प्रभावी दिखायी पड़ रहे है।

ब्रिटेन में द्वि दलीय पद्धति होने का प्रमुख कारण ब्रिटेन के लोग व्यवहारिक एवं परम्परावादी है, वे राजनीतिक रूप से परिपक्व हैं वे दो दलीय व्यवस्था में यकीन रखते है। इसके साथ वहां भाषा, राष्ट्रीयता एवं धर्म के प्रश्न वैसे नहीं दिखाई पड़ते जैसे फ्रांस एवं इटली में है। यही कारण है कि वहां पर बहुदलीय व्यवस्था स्थापित है। इसके अलावा कामन सभा का आकार,बैठने की व्यवस्था इस प्रकार है कि वहां दो समूह ही आमने सामने बैठ सकते है। लोकसदन की कार्यवाही इस प्रकार की है कि बहुमत प्राप्त दल नीतियों को क्रियान्वित करवाता है और अल्पमत वाला दल सजग विपक्ष की भूमिका अदा करता है।

ब्रिटेन में द्विदलीय पद्धति के कारण:- ब्रिटेन में द्विदलीय पद्धति विकसित होने के प्रमुख कारण निम्न है:-

1.संसदीय निर्वाचन क्षेत्र एक सदस्यीय होता है, ज्यादा मत पाने वाला व्यक्ति विजयी होता है, चुनाव में दो प्रमुख दलों में संघर्ष होता है।

2.कामन सभा की बैठने की व्यवस्था भी इसके लिए उत्तरदायी है। वहां पर सत्तापक्ष एवं विरोधी दल के सदस्य आमने-सामने बैठते है। अतः अपना दल त्याग कर नया समूह बनाने की संभावना कम हो जाती है।

3.व्यवहार में संसदीय प्रजातन्त्र की सफलता दो दलों पर हो निर्भर करती है। इसी के माध्यम से स्थाई सरकारें अस्तित्व में आती है।

2.केन्द्रीकरण:- ब्रिटेन में दलीय व्यवस्था में केन्द्रीकरण पाया जाता हैं दल का संगठन पिरामिड की तरह होता है। नीचे स्थापित लोग अपने ऊपर स्थापित लोगों की आज्ञाओं का पालन करते हैं। वे उनके प्रति उत्तरदायी होते है। आदेश सदैव ऊपर से नीचे की ओर आते है। दलीय संगठन के शीर्ष पर बैठा व्यक्ति सम्पूर्ण दल को अनुशसित एवं जबावदेह बनाये रखता है। ब्रिटेन में नीचे से ऊपर तक समस्त एकता के सूत्र में बंधे होते है।

3.सक्रियता:- इग्लैण्ड में राजनीतिक दल चुनाव के समय ही सक्रिय नहीं रहते। वे चुनाव के बाद भी रणनीति बनाने, योजना बनाने तथा जनमत को अपने पक्ष में करने के लिए सक्रिय रहते है। वे जनता से सम्पर्क बनाये रखने के लिए सभायें करने, शोधकार्य करने, में सदैव लगे रहते है। फाइनर ने ठीक लिखा है- ''अग्रेंज राजनीतिक दल आम निर्वाचनों के बीच सो नहीं जाते, वे जनता को शिक्षा देने का काम निरन्तर करते है।''

4.अनुशासन:- ब्रिटेन में कठोर दलीय अनुशासन पाया जाता है। सम्पूर्ण दल अनुशासन एवं एकता के सूत्र में बंधा होता है। इसके ठीक विपरीत अमेरिकी अध्यक्षात्मक व्यवस्था में सरकार निम्न सदन के प्रति उत्तरदायी नहीं होती। अतः कई बार दल के सदस्य पार्टी के विरूद्ध मतदान कर देते है। उनके इस कृत्य से सरकार के भविष्य पर कोई प्रभाव

नहीं पड़ता है। जबकि संसदीय शासन में सरकार का भविष्य निम्न सदन में होने वाले मतदान से तय होता है अतः सभी दलों के '' सचेतकों'' के माध्यम से कठोर अनुशासन बना कर रखा जाता है जिससे दलीय लाइन के विरूद्ध कोई सदस्य मतदान न कर सके। यदि कोई सदस्य ऐसा करता हुआ पाया जाता है तो उसके विरूद्ध निलम्बन,निष्कासन जैसी गंभीर कार्यवाही की जाती है।

5.मध्य मार्ग एवं समझौता:- इंग्लैण्ड की परम्परा में राजनीतिक दल मध्यमार्गीय एवं समझौतावादी है । अनुदार दल जहां पूर्णतः अनुदार नहीं है वहीं मजदूर दल पूर्णतः कट्टर समाजवादी नहीं है। ब्रिटेन में कई अवसर आये है जब राष्ट्रीय हित में राजनीतिक दलों ने अपने समर्थकों के हितों का त्याग किया है। दोनों ही दल मध्यमार्ग का अनुसरण करते हुए आगे बढ़ते है। दोनों ही दल मध्यम वर्ग को आकर्षित करते है। न्यूमैन की यह टिप्पणी सही लगती है- '' अनुदार दल को भी श्रमिक के हितों का ध्यान रखना पड़ता हैं तथा श्रमिक दल भी उद्योगपतियों को नहीं भूल सकता है।''

6.नेता की सर्वोच्च स्थिति:-सभी देशों की राजनीतिक व्यवस्था में दलीय नेता का अपना महत्व होता है। ब्रिटेन में इनका महत्व और भी ज्यादा है। 19 वीं शताब्दी के बाद से ब्रिटेन में चुनाव नेतृत्व को आधार बना कर लड़े गये। यही कारण है कि चुनाव के बाद चुना हुआ दल एवं दल में भी उसके नेता का कद,महत्व बहुत बढ़ जाता है। सभी राजनीतिक दल चुनाव से पहले नेता की घोषणा कर देते है साथ ही यदि उन्हें लगता है किसी नेता की घोषणा से चुनाव में विजय मुश्किल हो सकती है तो वह नेतृत्व को भी बदल सकते है। नवम्बर 1990 में अनुदार दल ने ऐसा ही किया थां इस प्रकर से कहा जा सकता है कि ब्रिटेन में राजनीतिक दल की स्थिति अत्याधिक मजबूत होती है और चुनाव में विजयी होने के बाद से वह और भी मजबूत हो जाता है।

7.संसद सदस्यों पर नियन्त्रण:- ब्रिटेन में राजनीतिक दल अत्याधिक शक्तिशाली होते है। वे चुनाव उपरान्त अपने दल के विजयी सदस्यों पर कठोर नियन्त्रण रखते है। सभी संसद सदस्यों को दलीय अनुशासन मानना होता है साथ दलीय लाइन के आधार पर बोलना होता है। संसदीय शासन में संसद सदस्यों पर दलीय अनुशासन कड़ा होता है।

8.वर्ग प्रकृति का अंत एवं सामंजस्य:- ब्रिटेन में राजनीतिक दलों में वर्ग के आधार पर अन्तर पाया जाता है। अनुदार दल के हित उच्चवर्ग से तथा मजदूर दल के हित श्रमिक वर्ग से जुड़े है। परन्तु किसी एक वर्ग के सहयोग से यह सरकार नहीं बना सकते। अतः यह जनमत बनाने के लिये मध्यम मार्ग निकालते हुये अपने सिद्धान्तों में समझौता करते है। ये परस्पर विरोधी हित समूहों को अपने पक्ष में करने का उपक्रम निरन्तर करते रहते है। ब्रिटेन में अनुदार दल ने प्रगतिशील नीतियां अपनाई। इसी प्रकार 1992 से 97 के मध्य मजदूर दल ने भी अपनी नीतियों में बड़े परिवर्तन किये। इन वर्षों में मजदूर दल ने समाजवाद समाजवादी अर्थव्यवस्था को अपनाने की घोषणा को छोड़कर उदारीकरण के दौर में मुक्त अर्थव्यवस्था को अपनाया। यह महत्वपूर्ण परिवर्तन सैद्वान्तिक रूप से मजदूर दल एवं अनुदार दल का अंतर लगभग समाप्त हो जाता है।

9.लूट प्रथा का अभाव:- अमेरिकी शासन व्यवस्था का यह दोष है कि नये राष्ट्रपति के आते ही पुराने कर्मचारी अधिकारियों को हटाकर नये कर्मचारी एवं अधिकारी नियुक्त किये जाते है। इस व्यवस्था ''लूट व्यवस्था'' कहते है। ब्रिटेन की संसदीय व्यवस्था में यह व्यवस्था नहीं है। सरकार के परिवर्तन के साथ अधिकारियों का परिवर्तन नहीं होता क्योंकि वे स्थाई रूप से नियुक्त होते है। ब्रिटेन की यह व्यवस्था अमेरिकी परम्परा से बेहतर है।

अभ्यास प्रश्न 3:

1. ब्रिटेन में व्यवहारिक रूप से द्विदलीय व्यवस्था है। सत्य/असत्य
2. ब्रिटेन में उदार दल का बदला रूप ही मजदूर दल के रूप में सामने आया। सत्य/असत्य
3. ब्रिटेन में बहुमत प्राप्त दल का नेता .....नियुक्त होता है।
4. ब्रिटेन में विधायिका एवं कार्यपालिका में .....संबंध पाया जाता है।
5. हाल के वर्षों में ब्रिटेन मजदूर दल एवं.....दल मुख्य राजनीतिक दल है।

10.8 सारांश

ब्रिटेन में दलीय व्यवस्था का उदय सैकड़ों वर्षों में हुआ है। ब्रिटेन तत्कालीन राजनैतिक हालात, इसके लिये जिम्मेदार थे। राजसत्ता का कमजोर होना और आम जन की सक्रियता,जागरूकता ही समूह निर्माण का कारण बनी। राजसत्ता से मोहभंग होना, नागरिक अधिकारों, स्वतन्त्रता का सपना ही लोगों को एक जुट कर तत्कालीन राजतन्त्रात्मक व्यवस्था के विरूद्ध संसद को मजबूत कर रहा था। यही कारण है तत्कालीन हालात में राजतन्त्र के विरूद्ध जो समूह अस्तित्व में आया वह ''राउन्डहेडेड'' कहलाया और राजसत्ता के समर्थक '' कैवैलियर्स'' कहलाये। आगे जाकर विशेषधाधिकारों का विरोध, नागरिक स्वतन्त्रता,समता के समर्थक समूह को ह्विग दल कहा गया और पुरानी व्यवस्था के समर्थक टोरी कहलाये। समय के साथ ''ह्विग'' दल के लोग उदारदल एवं टोरी दल के सदस्य अनुदार दल के रूप में अस्तित्व में आये। बीसवीं सदी की ओद्योगिक क्रान्ति ने ब्रिटिश राजनीतिक व्यवस्था पर भी असर डाला और बढ़ा मजदूर वर्ग अपने हितों को लेकर सजग हुआ। उनके अपने वर्गीय हित थे, उनका बड़ा वोट बैंक था अतः उदार दल में फूट पड़ गई और मजदूर हितों की पूर्ति के लिये मजदूर दल अस्तित्व में आया। आज ब्रिटेन में अनेक दल होते हुए भी मुख्य रूप से मजदूर दल और अनुदार दल प्रभावी है।

10.9 शब्दावली

1.राउण्डहेडेड- ऐसा समूह जो राजतन्त्रात्मक व्यवस्था के विशेषाधिकारों का विरोध कर रहे थे तथा नये संवैधानिक व्यवस्था, नागरिक अधिकारों की माँग कर रहे थें, राउण्डहेडेड कहलाये।

2.कैविलियर्सः- ऐसा समूह जो राजतन्त्रतात्मक व्यवस्था केा बनाये रखने के पक्षधर थे कैविलियर्स कहलाये जिसका शब्दिक अर्थ घुड़सवार सेना होता है।

3.उदारीकरणः- 20 वीं शताब्दी में अस्तित्व में आया यह शब्द इस बात का प्रतीक है कि बाजार पर राज्य का नियन्त्रण नहीं होगा। बाजार मुक्त एवं नागरिक स्वतन्त्रता पूर्ण होगी।

10.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न उत्तर 1: 1. संसदीय 2. राजा अथवा रानी 3. रोबर्ट वालपोल 4. निम्न सदन 5. राजा अथवा रानी 6. सत्य

अभ्यास प्रश्न उत्तर 2 : 1- सत्य 2. असत्य 3. . असत्य 4. काउण्टी न्यायालय 5. - लार्ड सभा

अभ्यास प्रश्न उत्तर 3 : 1. सत्य 2.सत्य 3.प्रधानमंत्री 4. घनिष्ठ संबंध 5. अनुदार दल

10.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1.जेनिग्स आइवर, ब्रिटिश संविधान, 1987,हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

2.नारायण इकबाल, विश्व के प्रमुख संविधान, 1969, आर0 के0 प्रिंटर्स,दिल्ली

3.पार्थसारथी जी0, आद्युनिक संविधान,1991 , मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ

4.जैन पुखराज, विश्व के प्रमुख संविधान,2000 साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।

5.गेना सी0बी0, तुलात्मक राजनीतिक एवं राजनीतिक संस्थायें, विकास पब्लिशिंग हाउस दिल्ली।

6.सिंहाल एस0बी0, आधुनिक सरकारों के सिद्धान्त एवं व्यवहार, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा।

10.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य समाग्री

बाल आर0 एलन, मार्डन पालिटिक्स एण्ड गर्वनमें ट, मैकमिलन पब्लिकेशन 1985 कपूर ए0सी0

10.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1.ब्रिटिश दल पद्धति की उद्भव को स्पष्ट कीजिये।

2.ब्रिटिश राजनीतिक व्यवस्था में दल की भूमिका की व्यवस्था कीजिये।

3. ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के गठन तथा उसकी शक्तियों पर प्रकाश डालिये।

4. ब्रिटिश न्यायपालिका की प्रमुख विशेषता बताइये।

इकाई 11: संयुक्त राज्य अमेरिका-I संविधान की मूलभूत विशेषताऐं, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

ईकाई की संरचना

11.0 प्रस्तावना

11.1 उद्देश्य

11.2 अमेरिका का संविधान

11.3 अमेरीकी संविधान के स्रोत

11.4 संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान की विशेषतायें

11.5 सारांश

11.6 शब्दावली

11.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

11.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11.9 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

11.10 निबंधात्मक प्रश्न

11.0 प्रस्तावना:

अमेरिका का संविधान सन 1887 की फिलेडेल्फिया कान्फ्रेंस द्वारा निर्मित संविधान है। यह संविधान अपने पीछे 150 वर्षों का अतीत अपने साथ रखता है तथा कई चरणों में इसका विकास हुआ है। अमेरिका की खोज के पश्चात बड़ी संख्या में यहाँ यूरोप से लोगों का पलायन हुआ। प्रारंभ में अधिकांश लोग इंग्लैण्ड से आकर बसे, पर बाद में जर्मनी, आयरलैण्ड, स्काटलैंड स्विट्जरलैण्ड , फ्रांस, पुर्तगाल, स्पेन आदि से भी विविध कारणों से असंख्य लोग अमेरिका गए और उसके विविध प्रदेशों में बस गए। जो लोग इंगलैण्ड से आये, वे स्वभावतः अपनी भाषा के साथ-साथ अपनी संस्कृति, अपनी परम्परा तथा स्वतन्त्रता, स्वशासन तथा जीवन सम्बन्धी विविध प्रकार के विचार लाए। यूरोप के देशों से आये हुए लोग भी उनके साथ घुले मिले तथा सब प्रकार के लोगों से घुलने मिलने से एक नये प्रकार की संस्कृति का उदय हुआ, जिसमें इंगलैण्ड व यूरोप दोनों की संस्कृतियों का सम्मिश्रण हुआ था। एक सुव्यवस्थित देश से आये हुए लोग होने के कारण अधिकांश लोग व्यवस्थाप्रिय थे, अतः सभी ने यह आवश्यक समझा कि उपनिवेशों की स्थापना के लिए इंगलैण्ड की मातृ सरकार से विधिवत आज्ञा प्राप्त किया जाय। इंग्लैण्ड के राजा ने तत्सम्बन्धी आज्ञा को प्रपत्रों के रूप में विविध प्रकार के व्यक्तियों को व संस्थाओं को प्रदान किया। ये प्रपत्र कभी व्यापारिक कम्पनियों को, विशेष व्यक्तियों को तथा कभी अन्य उपनिवेश स्थापना करने वालों को दिए गए। परिणामस्वरूप अमेरिका में उपनिवेशों की स्थापना का दौर चला और 1776 तक अमेरिका में अलग-अलग 13 ऐसे उपनिवेशों की स्थापना हो गई, जो अपने आन्तरिक मामलों में स्वशासित होते हुए भी इंगलैण्ड के आधिपत्य में थे। इंगलैंड व फ्रांस के सात वर्षीय युद्ध के पश्चात इंगलैंण्ड सरकार का यह प्रयत्न की अधीनस्थ उपनिवेश लड़ाई का खर्चा वहन करें, इंग्लैंड व उपनिवेशों के बीच झगड़े की वजह बनी। इसका परिणाम यह हुआ की जितनी अधिक कठोरता इंग्लैंड की ओर से बरती गई, उतनी ही अधिक इंग्लैंड के उपनिवेश उन से दूर होते गए। प्रान्तों ने जार्ज वाशिंगटन के नेतृत्व में अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़ी और इंग्लैंड को पराजित कर दिया। स्वतंत्रता के घोषणापत्र में यह स्पष्ट किया गया कि किसी भी व्यक्ति को अपने सुख एवं साधन को हासिल करने का अधिकार है एवं इसे किसी भी कृत्रिम व्यवस्था द्वारा लिया नहीं जा सकता है।

11.1 उद्देश्य:-

1. इस ईकाई में हम अमेरिका के संविधान की मूलभूत विशेषताएं जान सकेंगे।

2. हम अमेरिका की अध्यक्षीय एवं संघीय व्यवस्था का स्वरूप जान सकेंगे।

3. अमेरिकी संविधान के विकास के मुख्य आधारों का आकलन कर सकेंगे।

4. अमेरिकी संविधान के स्रोतों का अध्ययन कर सकेंगे।

11.2 अमेरिका का संविधान

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त ही उपनिवेशों के मध्य पारस्परिक मतभेद तथा तनाव उत्पन्न हुए। इसके पश्चात आपसी मतभेदों के निवारण के लिए 17 नवम्बर, 1777 को परिसंघ की स्थापना का प्रस्ताव पास किया। इस प्रस्ताव के आधार पर मार्च 1781 में परिसंघ की स्थापना हो गई। परिसंघ प्रारम्भ से ही बहुत निर्बल था और परिसंघ के स्थान पर

नवीन संविधान के निर्माण की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। परिसंघ के आधार पर इंगलैण्ड के विरूद्ध युद्ध जीत लिया गया, किन्तु प्रारम्भ से ही परिसंघ की व्यवस्था और उसके विधान की त्रुटियाँ नितान्त स्पष्ट हो गई थीं। अतः विधान पर दुबारा विचार करने के लिए 25 मई, 1787 को फिलाडल्फिया में एक सभा प्रारम्भ हुई। इस सभा में 13 राज्यों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सभा में भाग लेने वाले प्रमुख लोगों में जेम्स मेडीसन, बैंजामिन फ्रेंकलिन, हैमिल्टन, डाडी मेसन, जेम्स विल्सन, जॉन डिकिन्सन एवं रार्बट मॉरिस थे। इस सभा की अध्यक्षता जार्ज वाशिंगटन ने की। अधिवेशन के दौरान प्रमुखतः दो प्रकार के विचार उत्पन्न हुए। प्रथम संघवाद के समर्थक और दूसरे संघवाद के विरोधी। अन्त में संघवादी पक्ष की विजय हुई और परिसंघ के स्थान पर नवीन संघ राज्य की स्थापना के प्रारूप तैयार किए जाने लगे। दस दिन की बहस के बाद ''महान समझौता'' सम्पन्न हुआ। इस समझौते के अन्तर्गत केन्द्र में व्यवस्थापिका के दो संदनों की व्यवस्था की गई। आपस में आमसहमति बनी कि निम्न सदन (प्रतिनिधि सभा) में जनसंख्या के आधार पर राज्यों के प्रतिनिधि चुने जायेंगे। लेकिन दूसरे सदन (सीनेट) में छोटे बड़े सभी राज्यों को समान प्रतिनिधित्व प्रदान किया जायेगा। सम्मेलन में मान्टेस्क्यू का शक्ति विभाजन का सिद्धान्त काफी लोकप्रिय साबित हुआ। 26 जुलाई 1787 तक संविधान के प्रमुख सिद्धान्तों पर सहमति हो गई और 26 प्रस्तावों के रूप में भावी संविधान को स्वीकार कर लिया गया। सम्मेलन में स्वीकृत प्रस्तावों को विधान का रूप देने के लिये 8 सितम्बर 1787 को मौरिस की अध्यक्षता में एक समिति बैठाई गई जिसने 15 सितम्बर तक संविधान का प्रारूप तैयार कर दिया।

फिलेडेल्फिया सम्मेलन एक सम्प्रभु संविधान सभा नहीं थी और इसके निर्णय तभी प्रभावशाली होते, जबकि दो तिहाई राज्यों, अर्थात 13 में से 9 राज्यों द्वारा उसे स्वीकार किया जाता। लेकिन आपसी मतभेद उभर कर आने लगे। कुछ लोगों का मत था की प्रारूप में अधिकार पत्र की व्यवस्था नहीं की गई है। बहस के पश्चात यह स्वीकार कर लिया गया की नवीन सरकार की स्थापना के पश्चात अधिकार पत्र की व्यवस्था कर दी जायेगी। यह निश्चित किया गया कि संविधान के अनुसार निर्वाचन होकर नई सरकार 3 मार्च 1789 से कार्य प्रारम्भ कर देगी। इस प्रकार विश्व के प्रथम निर्मित और लिखित संविधान का उदय हुआ। अमेरिका की वर्तमान शासन व्यवस्था का संचालन 1787 में निर्मित और 1789 में लागू इस संविधान के आधार पर ही किया जा रहा है। यद्यपि अंततः इसमें 27 संसोधन किए जा चुके है।

11.3 अमरीकी संविधान के स्त्रोत

(1) फिलाडल्फिया सम्मेलन द्वारा निर्मित संविधान का मूल ढाँचा वही है जिसे 1787 में फिलेडल्फिया सम्मेलन में तैयार किया गया था।

(2) न्यायिक व्याख्याऐं - न्यायिक व्याख्याओं ने अमरीकी संविधान के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सर्वोच्च न्यायलय ने संविधान को महत्वपूर्ण दिशाएँ प्रदान करने का कार्य किया है। ''निहित शक्तियों का सिद्धान्त'' जिसने संघीय कांग्रेस को इतना शक्तिशाली बनाया, सर्वोच्च न्यायलय की ही देन है। सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी व्याख्या के आधार पर ही ''संविदा की पवित्रता के सिद्धान्त'' का प्रतिपादन किया। सर्वोच्च न्यायलय ने ही लगभग 100 निर्णयों में वाणिज्य से सम्बन्धित धारा की व्याख्या की और सर्वोच्च न्यायलय द्वारा की गई जलीय यातायात और एक से अधिक राज्यों में काम करने वाले सामान्य औद्योगिक प्रतिष्ठान भी कांग्रेस के विधायी क्षेत्राधिकार में आ गये हैं।

(3) परम्पराएँ- परम्पराओं के अन्तर्गत राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति ने केवल अलग-अलग राज्यों से वरन देश के अलग अलग क्षेत्रों से होगा। यद्यपि अमेरिका में परम्पराओं की की भूमिका इंगलैण्ड की अपेक्षा काफी कम है।

11.4 संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान की विशेषतायें

संघात्मक शासन प्रणाली, शक्ति पृथक्करण- तथा निरोध और सन्तुलन के सिद्धान्त व न्यायिक सर्वोच्चता के आदर्शों से ओत-प्रोत संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान विश्व के अनेक देशों के लिए प्रेरणा का स्रोत रहा है। सभी अमेरिकावासी इस संविधान को अपने राष्ट्र की गौरव-गरिमा का प्रतीक मानते है। हॉगवुड के शब्दों में ''यह संविधान हमारी समकालीन संस्कृति का प्रथम आश्चर्य है।'' यथार्थ में यह शासन के एक लिखित सूत्र की अपेक्षा कुछ अधिक है। जेम्स बेक के अनुसार, ''यह एक महान भावना है, एक उत्कृष्ट एवं उदार घोषणा है तथा वास्तव में, शासन की नैतिकता की विजय है। यह राज्य के समुचित कार्यक्षेत्र को राज्य को समर्पित करती है, किन्तु जनता के मूल अधिकारों को सुरक्षित रखकर यह ईश्वर के विषयों को ईश्वर के पास ही रहने देती है।'' अमरीकी सावधिान में कुछ अन्तर्भूत विशेषताएँ हैं-

(1) जनता का अपना संविधान - इस संविधान की महत्वपूर्ण विशेषता है कि इसने लोकप्रिय सम्प्रभुता के सिद्धान्त को स्वीकार किया है। संघठन की धाराओं में इस सिद्धान्त का अभाव था क्योंकि सम्प्रभुता राज्यों में निहित भी और कांग्रेस की शक्तियाँ बहुत सीमित थी। इस त्रुटि को समाप्त करने के उद्देश्य से नवीन संविधान की प्रस्तावना में यह उद्घोषणा की गयी कि 'हम संयुक्त राज्य अमेरिका के लोग, एक पूर्ण संघ के निर्माण के लिए, न्याय की स्थापना के लिए, आन्तरिक शान्ति की व्यवस्था के लिए, आत्मरक्षा के लिए, सार्वजनिक कल्याण की वृद्धि के लिए तथा अपने को और अपनी सन्तान को स्वतन्त्रता के लाभ प्राप्त कराने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका के इस संविधान का निर्माण करते है। अतः स्पष्ट है कि भारतीय संविधान के समान ही अमरीकी संविधान का निर्माण भी अमरीकी जनता ने किया है और संविधान देश का सर्वेच्च विधान है। यह संविधान जनता की प्रभुता के सिद्धान्त पर आधारित है इसके अन्तर्गत संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रतिनिधि गणतन्त्र की स्थापना हुई है। अमेरिका का संविधान स्वतन्त्रता का, आत्मनिर्णय का प्रतीक है। डी टॉकविले के शब्दों में ''अमेरिका के राजनीतिक जगत में लोग इस प्रकार राज्य करते है जैसे कि विधाता सृष्टि में''। जेम्स मैडिसन के अनुसार ''अमरीकी शासन व्यवस्था उस श्रेष्ठ दृढ़ इच्छा पर आधारित है जो स्वतन्त्रता के प्रत्येक आराधक को उत्तेजित करती है कि वे सब हमारे राजनीतिक प्रयोगों को मानव-मात्र के स्वशासन की योग्यता पर आधारित करें।''

(2) लिखित एवं निर्मित संविधान - 1787 में फिलाडेल्फिया सम्मेलन द्वारा निर्मित अमेरिका का वर्तमान संविधान विश्व का सर्वाधिक पुरातन लिखित संविधान है। ब्रिटिश संविधान की भाँति यह अलिखित एवं विकसित न होकर भारतीय संविधान की भाँति एक निश्चित समय की कृति है। अमरीकी संविधान का उस ढंग से क्रमिक विकास नहीं हुआ जिस ढंग से ब्रिटिश संविधान का हुआ है। इसकी अधिकांश धाराएं लिपिबद्ध है, यद्यपि कुछ ऐसी परम्पराएं भी विकसित हो गयी है जो लिखित नहीं है और राज्य जीवन को विनियमित करती है। ब्राइस का कथन है कि अमेरिका का संविधान ''विश्व के लिखित संविधानों में सर्वोच्च है''।

(3) संविधान की सर्वोपरिता - संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान देश का सर्वोपरि और शासन पद्धति का आधारभूत कानून है। धारा 6 में स्पष्ट लिखा है कि यह संविधान और इसके अनुसार बनाये गये संयुक्त राज्य के समस्त

कानून तथा संयुक्त राज्य की और से की गयी या की जाने वाली समस्त सन्धियाँ इस देश के सर्वोपरि कानून होगें। जबकि ब्रिटेन के संसद की सर्वोपरिता है और वह कैसा भी कानून बना सकती है, संयुक्त राज्य अमेरिका में संविधान सर्वोपरि है। इसका तात्पर्य है कि वहाँ संघ और राज्यों की कार्यपालिकाएँ तथा विधायिकाएँ कोई भी ऐसा कार्य नहीं कर सकती जो संविधान का अतक्रिमण करे। संविधान की सर्वोपरिता न्यायिक पुनरावलोकन द्वारा सुरक्षित की गयी है। वास्तव में अमरीकी संविधान को राष्ट्रीय, राज्य तथ स्थानीय सरकारों के सभी अंगों पर सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इसकी धाराएँ सभी के लिए मान्य है चाहें वह देश की सर्वोच्च कार्यपालिका हो या साधारण नागरिक और यदि कोई संस्था अथवा सरकार संविधान का उल्लंघन करती है। तो सर्वोच्च न्यायलय उसके कार्य को अवैघ घोषित कर सकती है।

(4) संक्षिप्तता का मूर्त रूप - अमरीकी संविधान विश्व के सभी लिखित संविधानों में सबसे संक्षिप्त है। इसमें केवल 7 अनुच्छेद है जबकि आस्ट्रेलिया में 128 अनुच्छेद, कनाडा में 147 अनुच्छेद, दक्षिणी अफ्रीका के संविधान में 153 अनुच्छेद तथा भारत के संविधान में 395 अनुच्छेद तथा 12 अनुसूचियाँ है। मुनरों के अनुसार, संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान में केवल 4000 शब्द है, जो 10 या 12 पृष्ठों में है और जिन्हें केवल आधा घंटे में पढ़ा जा सकता है। संविधान के अत्यधिक संक्षिप्त रूप का कारण अमेरिका वासियों के स्वभाव में परिलक्षित होता है। वे भविष्य को भूतकालीन बन्धनों से बांधने के आकांक्षी नहीं है, अतः संविधान निर्माताओं ने संविधान में केवल कतिपय सिद्धान्तों का उल्लेख मात्र किया है और विस्तार की बातों को भावी पीढ़ियों द्वार समय पर परिस्थितयों के अनुरूप स्वयं विकसित करने के लिए मुक्त छोड़ दिया।

संविधान की संक्षिप्तता का एक मुख्य परिणाम यह है कि उसमें बहुत सी आवश्यक बातों के सन्दर्भ में कुछ भी नहीं कहा गया है। जैसे- बैंको के विनियमन, बजट निर्माण, श्रम, कृषि, शिक्षा, उद्योग संचालन आदि के विषय में कोई व्यवस्था नहीं की गयी है। इसी प्रकार संविधान इस विषय पर भी बिल्कुल मौन है कि प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष की शक्तियाँ क्या होगी अथवा दोनों सदनों के मध्य विवाद होने पर उसका निर्णय किस प्रकार किया जायेगा। अतः संविधान में बहुत से आवश्यक विषयों पर ध्यान ही नहीं दिया गया। संविधान के निर्माताओं का लक्ष्य संविधान को एक स्ट्रेट जैकेट के रूप में तैयार करना नहीं था, बल्कि वे केवल एक प्रस्थान बिन्दु की खोज में थे और इसलिए उन्होंने मात्र संविधान की रूपरेखा तैयार की इसके अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका के संघ में सम्मिलित इकाई राज्यों के अपने अलग संविधान है, इसलिए भी संघीय संविधान को अधिक विस्तृत बनाने की आवश्यकता न थी।

(5) कठोर संविधान - संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान कठोर संवैधानिक प्रक्रिया का उदाहरण है तथा इसमें संशोधन एक विशेष प्रक्रिया के द्वारा किया जाता है, जो सामान्य विधि-निर्माण की प्रक्रिया से अलग है। जबकि ब्रिटेन में संसद एक ही प्रक्रिया से सामान्य एवं सांविधानक कानूनों का निर्माण करती है, जिसके कारण ब्रिटिश संविधान लचीला या परिवर्तनीय है, जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका में संवैधानिक संशोधन की प्रक्रिया काफी जटिल है। संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव - (1) काग्रेस के दोनों सदनों के दो तिहाई सदस्यों द्वारा या (2) दो तिहाई राज्यों के विधान मण्डलों की मांग पर आयोजित विशेष सम्मेलन द्वारा प्रस्तावित किया जाता है। तत्पश्चात उसके अनुसमर्थन के लिए या तीन चौथाई राज्यों के विधानमण्डलों अथवा तीन-चौथाई राज्यों के विशेष सम्मेलन की स्वीकृति आवश्यक है। संशोधन की यह प्रक्रिया बहुत जटिल है, इसीलिए, संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान में अब तक केवल 27 संशोधन हुए है जिनमें 10 के लिए संविधान लागू होने के पूर्व ही समझौता हो चुका था।

संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान-निर्माताओं ने एक ऐसा संविधान बनाना चाहा जो युगों की आंधी और तूफानों को सह सके। लेकिन निश्चेतन संविधान बनाना नहीं चाहा। संविधान में ऐसी भाषा का प्रयोग किया गया है कि कांग्रेस राष्ट्रपति तथा सर्वोच्च न्यायलय उसकी व्याख्या करते हुए संविधान को समय के अनुरूप कर सके। मुनरों के शब्दों में, यह विरोधाभास लगता है, लेकिन यह सत्य है कि अमरीकी संविधान में अधिकांश संशोधन संवैधानिक उपबन्धों में कोई संशोधन किये बिना हुए है।

(6) संघात्मक संविधान - राजनीतिक प्रणाली के रूप में अमेरिका के संविधान की सर्वप्रमुख विशेषता उसका संघात्मक स्वरूप है, संविधान-निर्माताओं का उद्देश्य एक ऐसे संविधान का निर्माण करना था, जिसमें केन्द्र शक्तिशाली हो और इकाई राज्यों की भी स्वतन्त्रता बनी रहे। इसी उद्देश्य से संवर्गीय व्यवस्था को त्यागकर संघात्मक व्यवस्था को स्वीकार किया गया। इसमें संघात्मक शासन के तीनों ही आवश्यक लक्षणों संविधान की सर्वोपरिता, शक्तियों का स्पष्ट विभाजन तथा संघीय न्यायपालिका की सर्वोच्चता का अत्यधिक मात्रा में समावेश किया गया है। इस संविधान में संघ व राज्य सरकारों के बीच शक्तियों का स्पष्ट विभाजन संविधान के द्वारा किया गया है और दोनों ही प्रकार की सरकारें अपने अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र है।

(7) अध्यक्षात्मक अथवा राष्ट्रपतीय कार्यपालिका - इंग्लैण्ड भारत और फ्रांस में संसदात्मक कार्यपालिका की स्थापना की गयी है जबकि अमेरिका में अध्यक्षात्मक कार्यपालिका को स्वीकार किया गया है। इस प्रणाली में राज्याध्यक्ष नाममात्र का प्रधान न होकर वास्तविक शक्ति का उपभोक्ता होता है। अमेरिका में भी राष्ट्रपति कार्यपालिका का वास्तविक प्रधान है। संसद प्रणाली राष्ट्रपति में मन्त्रिमण्डल विधायिका के प्रति उत्तरदायी होता है परन्तु अमेरिका में राष्ट्रपति का मन्त्रिमण्डल उसी के द्वारा बनाया जाता है और राष्ट्रपति के प्रति ही अपना उत्तरदायित्व रखता है। इसी प्रकार, संसदीय प्रणाली कार्यपालिका और विधायिका के परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध पर आधारित होती है परन्तु अमेरिका की अध्यक्षात्मक प्रणाली के अन्तर्गत कार्यपालिका विधायिका से स्वतन्त्र रहकर कार्य करती है। राष्ट्रपति कांग्रेस के कार्यवाहियों में प्रत्यक्ष रूप से कोई भाग नहीं लेता और न ही उसके प्रति उत्तर दायी होता है।

(8) गणतन्त्रात्मक सरकार - अमरीकी सरकार गणतन्त्रात्मक है अर्थात वहाँ कोई पैतृक राजतन्त्र नहीं है। जबकि ब्रिटेन में राज्याध्यक्ष राजा कहलाता है और उसकी पदवी वंशानुगत होती है। संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति एक निश्चित अवधि के लिए जनता द्वारा निर्वाचित किया जाता है। संघ के साथ साथ राज्यों में भी गणतन्त्रात्मक शासन व्यवस्था स्थापित की गई। संविधान में स्पष्ट प्रावधान है कि संघ राज्यों में गणतन्त्रात्मक शासन-व्यवस्था की पूरी रक्षा करे। संयुक्त राज्य अमेरिका की इसी गणतन्त्रीय परम्परा का अनुसरण भारत, फ्रांस, इण्डोनेशिया, ईजिप्त ने भी किया है और वहाँ राज्य का अध्यक्ष निर्वाचित राष्ट्रपति होता है।

(9) शक्ति पृथक्करण और निरोध व संन्तुलन का सिद्धान्त - अमरीकी संविधान का आधारभूत सिद्धान्त शक्ति-पृथक्करण है। मानव स्वतन्त्रता में अगाध आस्था रखने वाले अमरीकी संविधान निर्माता माँन्टेस्क्यू के इस विचार से बहुत प्रभावित हुए कि सरकार के तीन अंगों की शक्तियाँ का एकीकरण अत्यन्ट घातक है अतः कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका को एक दूसरे से पृथक रहना चाहिए। संविधान की प्रथम तीन धाराओं द्वारा शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त को मान्यता प्रदान की गायी है। इन धाराओं में स्पष्ट उल्लेख है कि यहाँ प्रदत्त सभी विधायिनी शक्तियाँ कांग्रेस में निहित होगी, कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति में और न्यायिक शक्तियाँ एक सर्वोच्च न्यायलय तथा

कांग्रेस द्वार स्थापित निम्न न्यायलयों में होगी। इस प्रकार सरकार के तीनों अंग एक-दूसरे से यथासम्भव पृथक एवं स्वतन्त्र रहकर अपना कार्य करते है, परन्तु सरकार एक शारीरिक इकाई के समान है जिसके विभिन्न विभाग एक दूसरे पर निर्भर करते है, अतः व्यवहार में पूर्ण पृथक्करण सम्भव नहीं। इसी कारण निरोध व सन्तुलन के सिद्धान्त को भी स्वीकार किया गया।

निरोध और संन्तुलन के सिद्धान्त के द्वारा शासन के विभिन्न अंगों के बीच सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखने का प्रयास किया जाता है। उदाहरण के लिए, न्यायधीशों, उच्च पदाधिकारियों तथा राजदूतों आदि की नियुक्ति करने का काम राष्ट्रपति का है परन्तु वह इस शक्ति का प्रयोग सीनेट की सहमति से करता है। विधियों का निर्माण करना विधायिका का कार्य है परन्तु कांग्रेस द्वारा पारित कोई भी विधेयक तब तक कानून का रूप धारण नहीं कर सकता, जब तक कि उस पर राष्ट्रपति की स्वीकृति न मिल जाए। इसी प्रकार एक ओर तो न्यायपालिका को स्वतन्त्र बनाया गया है और दूसरी ओर राष्ट्रपति को न्यायधीशों की नियुक्ति करने, कांग्रेस को न्यायलयों के संगठन क्षेत्राधिकार इत्यादि के सम्बन्ध में विनिश्चित करने की शक्ति देकर न्यायिक शक्ति के दुरूपयोग को रोकने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार अमेरिका में पारस्परिक अवरोधों की एक सुगठित योजना के कारण तीनों विभागों की शक्ति एक-दूसरे के द्वारा नियन्त्रित रहती है।

(10) सीमित शासन का सिद्धान्त - व्यक्तिवाद में आस्था रखने वाले अमरीकी संविधान के आदि संस्थापक लॉक के इस सिद्धान्त में विश्वास रखते थे कि सरकार एक न्यास है और उसे समिति शक्यिाँ प्रदान की जानी चाहिए। मुनरों के शब्दों में संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान 'संवैधानिक सीमाओं के सिद्धान्त' पर आधारित है। जेम्स बेक के अनुसार 'संविधान निर्माता सरकार की शक्ति से अत्यन्त सशंक थे। उनका विश्वास था कि यह शक्ति जितनी अधिक होगी, उसके दुरूपयोग का उतना ही अधिक खतरा होगा।' उनका आर्दश था- मानव आत्मा का गौरव तथा मूल्य, मनुष्य-मनुष्य में स्वतन्त्र प्रतिस्पर्धा, श्रम का माहात्मय कर्म का अधिकार, राज्य अथवा वर्ग के अत्याचार से स्वतन्त्र शासन व्यवस्था-इसी लक्ष्य की परिपूर्ति हेतु शासन की सभी शाखाओं की शक्तियाँ सीमित रखी गयी है। इन सीमाओं का उद्देश्य व्यक्तियों की सम्पत्ति और नागरिक स्वतन्त्रताओं की सुरक्षा करना है, कुछ विषयों में व्यक्तियों की रक्षा संघीय शासन के विरूद्ध और कुछ में राज्य सरकारों के विरूद्ध तथा कुछ बातों में सभी प्रकार की सरकारों के विरूद्ध की गयी है। संयुक्त राज्य अमेरिका में शासन के किसी भी अंग की शक्तियाँ अप्रतिबन्धिरत नहीं है। अमरीकी शासन एक सीमित शासन है, इस पर जनता के अधिकारों की औचित्यपूर्ण सीमाएं है। सीमित शासन का सिद्धान्त अमरीकी संविधान की एक सर्वथा नूतन विशिष्टता है और इसमें मानव मूल्यों को नयी प्रतिष्ठा प्रदान की गयी है।

(11) न्यायिक सर्वोपरिता - संविधान के निर्माणकर्त्ता, जनता के मूल अधिकारों और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के संरक्षक के रूप में अमेरिका का सर्वोच्च न्यायलय वहाँ के संविधान की अनुपम विशेषता है। चार्ल्स बीयर्ड भी इसे संघात्मक शासन-प्रणाली की सर्वप्रमुख विशेषता मानता है। वस्तुतः जहाँ इग्लैण्ड में संसद की सर्वोपरिता है, वहाँ संयुक्त राज्य अमेरिका में न्यायपालिका की सर्वोपरिता स्थापित की गयी है। इसका तात्पर्य यह है कि सर्वोच्च न्यायलय संविधान का अतिक्रमण करने वाले कांग्रेस के कानूनों को अथवा राष्ट्रपति के निर्देशों को अवैध घोषित कर सकता है। इसी को न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार भी कहते हैं और इस शक्ति के माध्यम से सर्वोच्च न्यायलय संघ सरकार एवं राज्य सरकारों को अपने-अपने क्षेत्रों तक परिसीमित रखता है तथा संविधान की सर्वोपरिता को बनाए रखता है। 1803 में चीफ जस्टिस मार्शल ने 'मारबारी बनाम मैडसिन' नामक मुकदमें में न्यायिक सर्वोपरिता के सिद्धान्त का

प्रतिपादन करते हुए स्पष्टतः कहा था कि सब प्रकार के कानूनों की संवैधानिकता की जाँच करने का एकमात्र अधिकार सर्वोच्च न्यायलय को प्राप्त है। इसी कारण जेम्स बेक ने सर्वोच्च न्यायलय को संविधान का 'सन्तुलन चक्र' कहकर पुकारा है।

(12) नागरिकों के मूल अधिकार - अमरीकी संविधान की एक प्रमुख विशेषता है व्यक्ति की स्वतन्त्रता की सुरक्षा, व्यक्ति की स्वतन्त्रता को अभिरक्षित रखने के लिए संविधान द्वारा नागरिकों को कुछ मूल अधिकार प्रदान किये गये है। जो कि सरकार की शक्तियों पर पर्याप्त अंकुश लगाते है। यह उल्लेखनीय है कि संविधान के मौलिक आलेख में नागरिकों के अधिकारों का उल्लेख नहीं किया गया था। इस महत्वपूर्ण अभाव की पूर्ति प्रथम दस संशोधनों के द्वारा करने का प्रयास किया गया जिन्हें सामूहिक रूप में नागरिकों के अधिकारों का अधिकार पत्र कहा जाता है। नागरिक अधिकारों को लिपि बद्ध रूप में प्रस्तुत करना संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान की शासन-कला को एक मुख्य देने हैं और इसी का अनुकरण भारत, जापान, सोवियत संघ आदि अनेक राज्यों ने किया है।

जस्टिस स्टोन के अनुसार, 'जनता के दृढ़ विश्वास की अपेक्षा संविधान अधिकार रूप से व्यक्त करता है कि जनतन्त्रीय पद्धति की किसी भी मूल्य पर रक्षा होनी चाहिए। यह विश्वास एवं अधिकार की एक अभिव्यक्ति है क्योंकि आध्यात्मिक एवं मानसिक स्वतन्त्रता की रक्षा होनी चाहिए जिसे शासन को स्वीकार करना होगा। धर्म के स्थापन तथा आचरण की स्वतंत्रता स्वेच्छानुसार किसी भी कारोबार को करने की स्वतंन्त्रता, कानून की दृष्टि में समकक्षता, भाषण तथा प्रेस की स्वतन्त्रता, शन्तिपूर्वक एकत्र होने तथा शिकायतों के निवारणार्थ सरकार से आवेदन करने की स्वतंत्रता, उचित कानूनी-प्रक्रिया का अनुसरण किये बिना किसी के जीवन अथवा सम्पत्ति का अपहरण न करना, बिना मुआवजा दिये राज्य द्वारा किसी की भी सम्पत्ति को हस्तगत न करना, बिना मुकदमा चलाये और न्यायालय द्वार दण्डित हुए हिरासत और जेल में न रखना इत्यादि ऐसे आधारभूत अधिकार है जिनका उल्लंधन सरकार नहीं कर सकती। आन्तरिक विद्रोह या बाह्य आक्रमण के अतिरिक्त अन्य किसी स्थिति में बन्दी प्रत्यक्षीकरण के लेख को स्थगित नहीं किया जा सकता और न ही कोई सरकार बिल ऑफ अटेण्डर पास कर सकती है जिससे किसी व्यक्ति को बिना मुकदमा चलाये फाँसी की सजा दी जा सके। इस प्रकार अमरीकी संविधान ने नागरिकों को अनेक महत्वपूर्ण मौलिक अधिकार प्रदान किये है।

(13) दोहरी नागरिकता - भारत के संविधान में इकहरी नागरिकता की व्यवस्था है, संयुक्त राज्य अमेरिका के संघात्मक सविधान में दोहरी नागरिकता है। वहाँ पर एक ओर तो वह संयुक्त राज्य अमेरिका का नागरिक होता है और दूसरी ओर अपने राज्य का, जिसमें में वह निवास करता है। उदाहरण के लिए न्यूयार्क में रहने वाला व्यक्ति न्यूयार्क का नागरिक होता है और संयुक्त राज्य अमेरिका का भी। 1857 में डेट स्कॉट नामक मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि प्रत्येक अमरीकी को दोहरी नागरिकता प्राप्त है क्योंकि संघ बनाने से पूर्व सभी राज्यों को नागरिकता प्रदान करने का अधिकार था और उन्होंने संघ को यह अधिकार नहीं दिया।

(14) आर्थिक व्यक्तिवाद - संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान की एक अन्यतम विशेषता यह है कि इसमें व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकार को एक पवित्र अधिकार के रूप में अंगीकार किया गया है। व्यक्तिवाद के प्रभाव के अन्तर्गत अमरीकी संविधान के निर्माताओं ने स्वतन्त्र आर्थिक नीति का प्रतिपादन किया। उत्पादन तथा वितरण के क्षेत्र में व्यक्ति की स्वतन्त्रता बनाये रखने की उचित प्रक्रिया के बिना किसी भी व्यक्ति को उसकी सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता। यदि सार्वजनिक हित के लिए सम्पत्ति को हस्तगत किया जाये तो उचित मुआवजा दिया जायेगा।

ब्रोगन का कथन है 'अमरीकी संविधान अमीरों की आवश्यकताओं को पूर्ण करता है तथा दरिद्रों की आवश्यकता पूर्ति में बाधा उपस्थित करता है।'

(15) कुछ महत्वपूर्ण बातों का अभाव - मुनरों का मत है कि सुंयक्त राज्य अमेरिका के संविधान की विशिष्टता इसमें दर्ज बातों के कारण ही नहीं वरन् इसलिए भी है कि इसमें कई महत्वपूर्ण बातें छोड़ दी गयी है। कुछ अत्यन्त साधारण बातों का तो इसमें उल्लेख है जैसे कि राष्ट्रपति नये पद की शपथ लेते समय किन-किन विशेष शब्दों का वर्णन करेगा परन्तु संविधान में बैंक, निगम, शिक्षा, लोक सेवा, राजनीतिक दल, बजट, कृषि, श्रम तथा उद्योग आदि के लिए कुछ भी नहीं कहा गया है। इसमें यह व्यवस्था है कि प्रतिनिधि सदन अपने अध्यक्ष का स्वयं चुनाव करेगा, परन्तु उसकी शक्तियाँ क्या होगी, इसका कहीं वर्णन नहीं है।

इस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान अनेक विशेषताओं का आगार है परन्तु यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि इन विशेषताओं में से एक भी बिल्कुल नयी नहीं है। लोकप्रिय सम्प्रभुता लॉक और पेन की देन है, शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त का उल्लेख मॉन्टेस्क्यू तथा बलैकस्टोन ही नहीं वरन पोलिवियस और अरस्तू के लेखों में भी पाया जाता है, न्यायिक सर्वोच्चता के सिद्धान्त का विकास इग्लैण्ड और अमेरिका के अनुभवों से संविधान निर्माण के पूर्व ही हो चुका था; सीमित सरकार का सिद्धान्त मैग्ना कार्टा के साथ आरम्भ हो चुका था। ब्राइस के शब्दों में ''संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान सब कुछ काँट-छाँट के बाद भी संसार के सभी संविधानों में श्रेष्ठ है। इसकी योजना अत्यन्त सुन्दर है। यह जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप है, यह सरल और संक्षिप्त है, इसकी भाषा सुस्पष्ट है और इसमें सिद्धान्तों की निश्चितता के साथ-साथ विस्तृत व्याख्या के लिए सुपरिवर्तनीयता है।' इसके अन्तर्गत कार्य करके अमरीकी राष्ट्र महान् और गौरवशाली बना है और इसलिए सभी अमेरिकावासी इसके प्रति श्रद्धा रखते हैं।

अभ्यास प्रश्न: -

1. 1787 में फिलेडेल्फिया सम्मेलन में अमरीकी संविधान को निर्मित किया गया। सत्य/असत्य
2. अमेरिकी संविधान का राजनैतिक स्वरूप संघात्मक है। सत्य/असत्य
3. संविधान की सर्वोच्चता की अवधारण छठे अनुच्छेद में की गई है।
4. नियन्त्रण एवं संतुलन के सिद्धान्त को अमेरिकी संविधान में अपनाया गया है। सत्य/असत्य
5. अमेरिकी संविधान में कुल 7 अनुच्छेद हैं।

11.5 सारांश

संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान विश्व का प्रथम लिखित संविधान है। संविधान में केवल 400 शब्द है। जो दस या बारह पृष्ठों में मुद्रित है और जिन्हें आधे घन्टे में पढ़ा जा सकता है। इसमें केवल सात अनुच्छेद हैं। संविधान के निर्माण कर्ताओं ने केवल मूल ढाँचे को तैयार किया, क्योंकि वे जानते थे कि भविष्य की आवश्यकताओं को विस्तृत रूप से इंगित करना उचित नहीं होगा। यही कारण है कि अमेरिका में संविधान के विभिन्न विषयों को लेकर काफी वाद विवाद होता रहा है। इन विवादों की वजह से न्यायपालिका वहाँ काफी शक्तिशाली भूमिका निभाती आई है। प्रमुख रूप से न्यायपालिका संविधान की धाराओं को परिभाषित करती है। एवं लोगों के अधिकारों की रक्षक भी रही है।

अगर हम अमेरिका के संविधान की विशेषताओं पर नजर डालें तो कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ हमारे सामने दिखाई देती है। प्रथम, यह लोकप्रिय सम्प्रभुता पर आधारित संविधान है, संविधान की सम्पूर्ण शक्ति का आधार अमेरिका के लोग है। अमेरिका का संविधान स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय का प्रतीक है। दूसरी विशेषता संविधान की सर्वोच्चता है, संयुक्त राज्य अमेरिका की सभी ईकाईयों चाहें वह राष्ट्र हो, या कांग्रेस, या सर्वोच्च न्यायलय, सभी संविधान के अधीन है। इस बात को संविधान के अनुच्छेद में कहा गया है। अमेरिकी संविधान में मौलिक अधिकारों को प्रमुखता दी गई है। संविधान में संशोधन की प्रक्रिया को जटिल बनाया गया है। जिससे अमेरिकी संविधान काफी कठोर दिखता है। मान्टेस्क्यू द्वारा प्रतिपादित नियंत्रण तथा संतुलन के सिद्धान्त को बखूबी अपनाया गया है, इससे, कार्यपालिका, न्यायपालिका, या कांग्रेस के निरंकुश होने की सम्भावना नितान्त नगण्य हो जाती है। संविधान के अन्तर्गत राज्यों और केन्द्र के मध्य बँटवारा स्पष्ट है जिसकी वजह से राजनीतिक प्रणाली संघीय है।

11.6 शब्दावली

1.मौलिक अधिकार: वे अधिकार जिसे किसी व्यक्ति से लिया नहीं जा सकता। उदाहरण के लिए जीवन का अधिकार, बोलने का अधिकार, एवं अपनी मर्जी से व्यवसाय करने का अधिकार,

2.परिसंघ: वह राजनीतिक संरचना जहाँ राज्य केन्द्र को सत्ता के अंश सौंपते हैं।

11.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(1) सत्य (2) सत्य (3) छठवें (4) सत्य (5) सात

11.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.नारायण, इकबाल; 'विश्व के प्रमुख संविधान' (1969), आर0 के प्रिंटर्स, दिल्ली

2.जैन, पुखराज; 'विश्व के प्रमुख संविधान' (1993), साहित्य भवन, आगरा

3.क्लूज, डेविड; 'दी पीपुल्स गाइड टू द यूनाइटेड स्टेटस, कन्सटीटयूशन (2007) एक्शन पब्लीशर्स, यू0 एस0 ए0

4.पार्थसारथी, जी0; 'आधुनिक संविधान', (1991), मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ

11.9 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.अखिल, रीड अमर; 'दी बिल आफ राइटस् क्रीयेशन एण्ड रीकन्सट्रक्शन' (2000), येल यूनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन

2.जस्टिस, लर्मिनगार्ग; 'दी यूनाइटेड स्टेट्स कान्सटीट्यूशन; 'वाट इट सेज, वाट इट मीन्स' (2005), आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

11.10 निबंधात्मक प्रश्न

1.अमेरिका के संविधान की प्रमुख विशेषताओं पर आलोचनात्मक टिप्पणी कीजिए।

2.अमरिकी संविधान के उदय एवं विकास पर टिप्पणी कीजिए?

3.अमेरिका के संविधान की संशोधन प्रक्रिया पर प्रकाश डालिए।

4.अमरिका के संविधान में नियन्त्रण एवं संतुलन के सिद्धान्त को किस प्रकार से अपनाया गया है। टिप्पणी कीजिए।

इकाई -12 संयुक्त राज्य अमेरिका - II : संघीय कार्य पालिका , विधायिका ,न्याय पालिका , दल प्रणाली

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 संयुक्त राज्य अमेरिका की संघीय कार्यपालिका

12.3.1 संघीय कार्य पालिका की कार्यप्रणाली

12.3.2 मुख्य कार्यपालक (राष्ट्रपति) की शक्तियां

12.3.3 राष्ट्रपति के कार्यकाल की सीमाएँ

12.4 अमेरिकी कांग्रेस (विधायिका) का परिचय : संघीय कानून तैयार करना

12.4.1 अमेरिकी सीनेट: एक दृष्टि

12.4.2 अमेरिकी प्रतिनिधि सभा : एक दृष्टि

12.5 संयुक्त राज्य अमेरिका का सर्वोच्च न्यायालय : संरचना और संचालन

12.5.1 न्यायिक प्रक्रिया और संवैधानिक सुरक्षा

12.6 अमेरिकी सीनेट में पार्टियों का विकास: एक सिंहावलोकन

12.7 सारांश

12.8 शब्दावली

12.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

12.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

12.11 सहायक उपयोगी सामग्री

12.12 निबंधात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

अमरीकी संविधान में एक संघीय राज्य की व्यवस्था की गई है जिसमें राष्ट्रीय अर्थात संघीय और राज्य सरकारों के बीच शक्तियों का विभाजन है । स्थानीय सरकार राज्य का विषय है । प्रत्येक राज्य ने इतिहास, अनुभव और परिस्थितियों के आधार पर स्थानीय सरकारों की अपनी प्रणाली स्थापित की है । अत: संयुक्त राज्य अमरीका में स्थानीय सरकार की इकाइयों के नाम, संगठन और कार्य एक राज्य से दूसरे राज्य में भिन्न हैं । या दूसरे शब्दों में, स्थानीय सरकार की अमरीकी प्रणाली की विशिष्टता समानता नहीं अपितु भिन्नता है । संयुक्त राज्य अमेरिका एक संघीय शासन व्यवस्था है जिसे हम संवैधानिक लोकतांत्रिक गणराज्य के स्वरुप में भी देख सकते हैं । इसमें अध्यक्ष (राज्य के प्रमुख और सरकार के मुखिया ,) कांग्रेस , और न्यायपालिका प्रमुख घटक के रूप में होते हैं

अमेरिका में अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली पायी जाती है जो मूलतः शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत पर टिकी हुई है। अमेरिका में प्रधान या प्रमुख कार्यपालक (राष्ट्रपति) राज्य का वास्तविक प्रमुख (अध्यक्ष) होता है । वस्तुतः अमेरिकी शासन प्रणाली में राष्ट्रपति राजनीतिक एवं अलंकारिक दोनों प्रकार की कार्यपालिका होता है। राष्ट्रपति का चुनाव प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से नागरिकों द्वारा 4 वर्ष की निश्चित अवधि के लिए किया जाता है। इसमें एक विशेष बात यह है कि यह विधायिका के प्रति उत्तरदायी नहीं होता। हालाँकि उसे महाभियोग की प्रक्रिया द्वारा हटाया जा सकता है फिर भी वह विधायिका से लगभग स्वतंत्र रूप से कार्य करता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान का अनुच्छेद III न्यायिक शाखा को संघीय सरकार की तीन अलग और विशिष्ट शाखाओं में से एक के रूप में स्थापित करता है। अन्य दो विधायी और कार्यकारी शाखाएँ हैं। संघीय अदालतों को अक्सर संविधान का संरक्षक कहा जाता है क्योंकि उनके फैसले संविधान द्वारा गारंटीकृत अधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा करते हैं। निष्पक्ष निर्णयों के माध्यम से, संघीय अदालतें विवादों को हल करने के लिए कानून की व्याख्या करती हैं और उसे लागू करती हैं। अदालतें कानून नहीं बनातीं; यह कांग्रेस की जिम्मेदारी है. न ही अदालतों के पास कानूनों को लागू करने की शक्ति है बल्कि यह राष्ट्रपति और कई कार्यकारी शाखा विभागों और एजेंसियों की जिम्मेदारी है।

संयुक्त राज्य अमेरिका की राजनीतिक व्यवस्था और अधिकांश अन्य विकसित पूंजीवादी देशों की राजनीतिक व्यवस्था के बीच प्रमुख अंतर हैं। इनमें विधायिका के ऊपरी सदन की बढ़ी हुई शक्ति, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा धारित शक्ति का व्यापक दायरा , विधायिका और कार्यपालिका के बीच शक्तियों का पृथक्करण और केवल दो मुख्य दलों का प्रभुत्व शामिल है। संयुक्त राज्य अमेरिका दुनिया के विकसित लोकतंत्रों में से एक है जहां तीसरे पक्ष का सबसे कम राजनीतिक प्रभाव है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में दो प्रमुख राष्ट्रीय राजनीतिक दल हैं, डेमोक्रेटिक पार्टी और रिपब्लिकन पार्टी । हालाँकि पार्टियाँ हर चार साल में राष्ट्रपति चुनाव संयुक्त राज्य अमेरिका में दो-दलीय प्रणाली का प्रभुत्व इसकी राजनीतिक संरचना की एक विशिष्ट विशेषता है। 1828 में स्थापित डेमोक्रेटिक पार्टी और 1854 में स्थापित रिपब्लिकन पार्टी ने लगातार राजनीतिक परिदृश्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव बनाए रखा है जबकि तीसरे पक्ष और स्वतंत्र उम्मीदवार कभी-कभी उभरते हैं, उन्हें राष्ट्रपति चुनावों में विजेता-सभी चुनावी प्रणाली और इलेक्टोरल कॉलेज के कारण प्रवेश में काफी

बाधाओं का सामना करना पड़ता है। जो लड़ती हैं और उनके पास राष्ट्रीय पार्टी संगठन होते हैं, चुनावों के बीच वे अक्सर राज्य और स्थानीय पार्टी संगठनों के ढीले गठबंधन से थोड़ा अधिक होते हैं।

12.2 उद्देश्य

1. इस अध्याय के माध्यम से हम संयुक्त राज्य अमेरिका की कार्यपालिका , विधायिका , न्यायपालिका की संरचना के बारें में जान सकेंगे।

2. इस अध्याय के माध्यम से हम कार्यपालिका , विधायिका एवं न्याय पालिका की कार्यप्रणालियों को समझ सकेंगे ।

3. इस अध्याय का अध्ययन करने के उपरांत हम अमेरिका की राजनीतिक दलों के बारें में जान सकेंगे ।

12.3 संयुक्त राज्य अमेरिका की संघीय कार्यपालिका

संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति कार्यकारी शाखा के भीतर केंद्रीय प्राधिकार रखते हैं। जो राज्य के प्रमुख और सरकार के प्रमुख दोनों के रूप में कार्य करते हैं। इसके अतिरिक्त, राष्ट्रपति सशस्त्र बलों के कमांडर-इन-चीफ के रूप में कार्य करता है। राष्ट्रपति की प्राथमिक जिम्मेदारियों में से एक कांग्रेस द्वारा पारित कानूनों को लागू करना है। इसे सुविधाजनक बनाने के लिए, राष्ट्रपति मंत्रिमंडल सहित संघीय एजेंसियों के प्रमुखों की नियुक्ति करता है।

कैबिनेट, स्वतंत्र संघीय एजेंसियों के साथ, मिशनों और जिम्मेदारियों की एक विस्तृत श्रृंखला को कवर करते हुए, संघीय कानूनों के दैनिक प्रवर्तन और प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसमें राष्ट्रीय रक्षा, पर्यावरण संरक्षण, सामाजिक सुरक्षा और वित्तीय विनियमन जैसे विविध क्षेत्र शामिल हैं। सशस्त्र बलों सहित कार्यकारी शाखा के संयुक्त कार्यबल में 4 मिलियन से अधिक अमेरिकी शामिल हैं।

12.3.1 संघीय कार्य पालिका की कार्यप्रणाली

संविधान के अनुच्छेद II के तहत, राष्ट्रपति को कानूनों के कार्यान्वयन और प्रवर्तन की जिम्मेदारी सौंपी गई है। कार्यकारी शाखा को पंद्रह कार्यकारी विभागों में संगठित किया गया है, प्रत्येक का नेतृत्व राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त एक कैबिनेट सदस्य द्वारा किया जाता है। इन विभागों के अलावा, राष्ट्रपति सीआईए और पर्यावरण संरक्षण एजेंसी जैसी अन्य कार्यकारी एजेंसियों की देखरेख करते हैं। राष्ट्रपति संघीय न्यायाधीशों, राजदूतों और अन्य कार्यालयों के साथ-साथ 50 से अधिक स्वतंत्र संघीय आयोगों, जैसे फेडरल रिजर्व बोर्ड और प्रतिभूति और विनिमय आयोग, के नेताओं की भी नियुक्ति करता है।

राष्ट्रपति की शक्तियों में कानून पर हस्ताक्षर करना या विधेयकों को वीटो करना शामिल है, जिसमें कांग्रेस के दोनों सदनों में दो-तिहाई वोट से वीटो को ओवरराइड (अवहेलना) करने की संभावना रहती है। राष्ट्रपति राजनयिक संबंधों का संचालन करता है, बातचीत करता है और संधियों पर हस्ताक्षर करता है (सीनेट द्वारा अनुसमर्थित) कानूनों को निर्देशित और स्पष्ट करने के लिए कार्यकारी आदेश जारी करता है, और संघीय अपराधों के लिए क्षमा और क्षमादान देने का अधिकार रखता है।

इन शक्तियों के अलावा, राष्ट्रपति समय-समय पर कांग्रेस को संघ की स्थिति के बारे में सूचित करने और आवश्यक उपायों की सिफारिश करने के लिए संवैधानिक रूप से बाध्य है। जबकि इस आवश्यकता को पूरा करने का तरीका राष्ट्रपति के विवेक पर है। अमेरिका में कांग्रेस के संयुक्त सत्र के लिए वार्षिक स्टेट ऑफ द यूनियन संबोधन देने की परंपरा है।

राष्ट्रपति पद की पात्रता संविधान द्वारा परिभाषित की गई है, जिसके लिए व्यक्ति की आयु कम से कम 35 वर्ष होनी चाहिए, वह जन्मजात नागरिक होना चाहिए और कम से कम 14 वर्षों तक संयुक्त राज्य अमेरिका में रहना चाहिए। राष्ट्रपति सीधे लोगों द्वारा नहीं चुना जाता है; इसके बजाय, लोगों द्वारा चुने गए इलेक्टोरल कॉलेज के सदस्य राष्ट्रपति के लिए वोट डालते हैं।

राष्ट्रपति जोसेफ आर. बिडेन 46वें राष्ट्रपति हैं, हालांकि ग्रोवर क्लीवलैंड की लगातार शर्तों के कारण पद संभालने वाले वह 45वें व्यक्ति हैं। आज, राष्ट्रपति दो चार-वर्षीय कार्यकाल तक सीमित हैं, यह प्रतिबंध 1951 में 22वें संशोधन द्वारा लगाया गया था। फ्रैंकलिन डेलानो रूजवेल्ट चार बार चुने जाने के बाद भी दो से अधिक कार्यकाल तक सेवा करने वाले एकमात्र राष्ट्रपति बने हुए हैं।

परंपरागत रूप से, राष्ट्रपति वाशिंगटन डी.सी. में व्हाइट हाउस में रहते हैं, जहां ओवल कार्यालय और वरिष्ठ कर्मचारी कार्यालय स्थित हैं। विमान से यात्रा करते समय, राष्ट्रपति पदनाम एयर फ़ोर्स वन का उपयोग करते हैं, और जब राष्ट्रपति विमान में होते हैं तो मरीन कॉप्स हेलीकॉप्टर को मरीन वन कहा जाता है। ज़मीनी यात्रा के लिए, राष्ट्रपति एक बख़्तरबंद प्रेसिडेंशियल लिमोज़ीन का उपयोग करते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका की कार्यकारी शाखा के शीर्ष पर राष्ट्रपति होता है, जो राष्ट्र के सर्वोच्च पद में निहित केंद्रीय प्राधिकार का प्रयोग करता है। राज्य के प्रमुख और सशस्त्र बलों के कमांडर-इन-चीफ के रूप में कार्य करने के अलावा, राष्ट्रपति कांग्रेस द्वारा बनाए गए कानूनों के कार्यान्वयन और प्रवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसमें संघीय एजेंसियों के प्रमुख के रूप में नेताओं की नियुक्ति का महत्वपूर्ण कार्य शामिल है, एक जिम्मेदारी जो मंत्रिमंडल के गठन तक फैली हुई है। राष्ट्रपति के साथ-साथ, उपराष्ट्रपति कार्यकारी शाखा का एक अभिन्न अंग होता है, जो जरूरत पड़ने पर राष्ट्रपति पद धारण के लिए तैयार रहते हैं। साथ में, वे कार्यकारी शाखा का मुख्य नेतृत्व बनाते हैं, जिसे राष्ट्र को नियंत्रित करने वाले संघीय कानूनों के कार्यान्वयन और कार्यान्वयन का काम सौंपा जाता है।

12.3.2 मुख्य कार्यपालक (राष्ट्रपति) की शक्तियां

अनुमोदन और वीटो का अधिकार :

राष्ट्रपति के पास कांग्रेस द्वारा पारित विधेयकों और प्रस्तावों को मंजूरी देने या वीटो करने का अधिकार है।

वित्तीय शक्तियाँ :

ट्रेजरी विभाग के माध्यम से, राष्ट्रपति को विनियोग कानूनों के अनुसार चेक जारी करने का अधिकार है।

संविधान का संरक्षण :

जैसा कि पद की शपथ में निर्धारित है, राष्ट्रपति संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान के संरक्षण, सुरक्षा और बचाव के लिए प्रतिबद्ध है।

कमांडर-इन-चीफ की भूमिका :

कमांडर-इन-चीफ के रूप में कार्य करते हुए, राष्ट्रपति सेवा में बुलाए जाने पर संयुक्त राज्य अमेरिका की सेना और अन्य सहायक रक्षा दलों को आदेश देते हैं।

कार्यकारी अधिकारियों की राय :

राष्ट्रपति को कार्यकारी विभागों के प्रमुख अधिकारियों से उनके कार्यालयों के कर्तव्यों के संबंध में लिखित राय मांगने का अधिकार है।

क्षमादान प्राधिकारी :

राष्ट्रपति के पास महाभियोग के मामलों को छोड़कर, संयुक्त राज्य अमेरिका के खिलाफ अपराधों के लिए राहत और क्षमादान देने की शक्ति है।

संधि बनाने वाला प्राधिकरण :

कांग्रेस की सलाह और सहमति से राष्ट्रपति को बातचीत करने और संधियाँ करने का अधिकार है।

नामांकन शक्तियाँ :

राष्ट्रपति को कांग्रेस की सलाह और सहमति के अधीन, राजदूतों और अन्य अधिकारियों को नामित करने का अधिकार है।

अवकाश नियुक्तियाँ :

सीनेट के अवकाश के दौरान, राष्ट्रपति उन रिक्तियों को भर सकते हैं जो सीनेट के अगले सत्र के अंत में समाप्त हो जाएंगी।

संघ राज्य की स्थिति :

राष्ट्रपति का यह कर्तव्य है कि वह समय-समय पर संघ की स्थिति पर कांग्रेस को सलाह दे और आवश्यक और समीचीन समझी जाने वाली सिफारिशें पेश करे।

कांग्रेस के सत्र :

राष्ट्रपति के पास असाधारण अवसरों के दौरान कांग्रेस के एक या दोनों सदनों को बुलाने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त, यदि कांग्रेस स्थगन के लिए सहमत नहीं हो सकती है, तो उचित समझे जाने पर राष्ट्रपति उन्हें स्थगित कर सकते हैं।

कानूनों का निष्पादन :

कानूनों का ईमानदारी से कार्यान्वयन सुनिश्चित करना राष्ट्रपति का कर्तव्य है।

कमीशनिंग अधिकारी :

राष्ट्रपति के पास संयुक्त राज्य अमेरिका के अधिकारियों को नियुक्त करने की शक्ति है।

12.3.3 राष्ट्रपति के कार्यकाल की सीमाएँ :

संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान का अनुच्छेद II, खंड 1, खंड 1 संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान का अनुच्छेद II, खंड 1, खंड 1 राष्ट्रपति के पद की रूपरेखा बताता है। इसमें कहा गया है कि कार्यकारी शक्ति संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति में निहित है, जिसे चार साल की अवधि के लिए पद संभालने के लिए चुना जाता है। उपराष्ट्रपति को भी उसी चार साल के कार्यकाल के लिए चुना जाता है और राष्ट्रपति के साथ चुना जाता है।

संविधान निर्माताओं ने राष्ट्रपति पर कार्यकाल की सीमाएं नहीं लगाईं, अपने दृष्टिकोण को इस विचार के साथ संरेखित किया कि राष्ट्रपति, प्रतिनिधियों और सीनेटरों की तरह, पूर्वनिर्धारित सीमा से बाधित हुए बिना फिर से चुनाव के लिए दौड़ सकते हैं। निर्माताओं का अनुमान था कि राष्ट्रपति उतने कार्यकाल तक सेवा दे सकते हैं जितने संयुक्त राज्य अमेरिका के नागरिक उचित समझेंगे, जो पद के लिए नेता की निरंतर उपयुक्तता निर्धारित करने के लिए लोकतांत्रिक प्रक्रिया में विश्वास को दर्शाता है।

12.4 अमेरिकी कांग्रेस (विधायिका) का परिचय : संघीय कानून तैयार करना

संयुक्त राज्य सरकार की विधायी शाखा को कांग्रेस के रूप में जाना जाता है, जिसमें दो कक्ष होते हैं: सीनेट और प्रतिनिधि सभा। कांग्रेस के लिए आधिकारिक बैठक स्थल वाशिंगटन, डीसी में स्थित यूएस कैपिटल बिल्डिंग है।

कांग्रेस की प्राथमिक जिम्मेदारियों में से एक संघीय कानूनों का निर्माण है। कांग्रेस के सदस्यों के पास नए कानूनों का प्रस्ताव करने का अधिकार है, जिन्हें विधेयक के रूप में पेश किया जाता है। किसी विधेयक को कानून बनने के लिए, इसे सीनेट और प्रतिनिधि सभा दोनों द्वारा अनुमोदित किया जाना चाहिए। दोनों सदनों से पारित होने के बाद विधेयक को राष्ट्रपति के पास विचार के लिए भेजा जाता है।

राष्ट्रपति के पास विधेयक पर हस्ताक्षर कर उसे कानून बनाने या वीटो करने का अधिकार है। यदि राष्ट्रपति सहमत हो जाते हैं, तो विधेयक आधिकारिक तौर पर कानून बन जाता है। हालाँकि, यदि राष्ट्रपति असहमत है, तो वीटो जारी किया जाता है। जवाब में, कांग्रेस के पास बाद के वोट के माध्यम से वीटो को खत्म करने का विकल्प है। वैकल्पिक रूप से, कांग्रेस विधेयक को संशोधित कर सकती है और इसे मंजूरी के लिए राष्ट्रपति के पास वापस भेज सकती है।

इस तरह, संघीय कानून बनाने की प्रक्रिया में विधायी और कार्यकारी शाखाओं के बीच एक सहयोगात्मक प्रयास शामिल होता है, जो जांच और संतुलन की प्रणाली सुनिश्चित करता है।

अमेरिकी सीनेट में कुल 100 सदस्य हैं, प्रत्येक राज्य का प्रतिनिधित्व दो सीनेटरों द्वारा किया जाता है। दूसरी ओर, अमेरिकी प्रतिनिधि सभा में 435 मतदान सदस्य शामिल हैं, और प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधियों की संख्या उसकी जनसंख्या द्वारा निर्धारित की जाती है।

12.4.1 अमेरिकी सीनेट: एक दृष्टि

100 सदस्यों वाली अमेरिकी सीनेट, संयुक्त राज्य कांग्रेस का एक प्रमुख घटक है। प्रत्येक राज्य का प्रतिनिधित्व दो सीनेटरों द्वारा किया जाता है, जो अपने संबंधित राज्यों के लोगों की सेवा के लिए चुने जाते हैं। सीनेटरों का कार्यकाल छह साल का होता है, और कुछ कार्यालयों के विपरीत, उनके कार्यकाल की संख्या की कोई सीमा नहीं है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के उपराष्ट्रपति सीनेट नेता की भूमिका निभाते हैं। जबकि उपराष्ट्रपति आवश्यक सीनेट समारोहों में भाग लेते हैं, वे केवल बराबरी की स्थिति में ही वोट डालते हैं।

सीनेट के पास अलग-अलग जिम्मेदारियां हैं, जैसे कैबिनेट सदस्यों, अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों और अन्य महत्वपूर्ण पदों के लिए राष्ट्रपति के नामांकन को मंजूरी देना। इसके अतिरिक्त, राष्ट्रपति द्वारा विदेशी देशों के साथ की गई संधियों को मंजूरी देने में सीनेट महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। देश के खिलाफ अपराध करने के आरोपी सरकारी अधिकारियों के खिलाफ मुकदमा चलाने का अधिकार केवल सीनेट को है।

अमेरिकी सीनेटर के रूप में अर्हता प्राप्त करने के लिए, व्यक्तियों को कुछ मानदंडों को पूरा करना होगा:

उम्र: 30 या अधिक

अमेरिकी नागरिकता : न्यूनतम 9 वर्ष

निवास : उस राज्य का निवासी होना चाहिए जिसका वे प्रतिनिधित्व करना चाहते हैं।

ये आवश्यकताएं अमेरिकी सीनेट में सेवा करने के इच्छुक लोगों के लिए अनुभव, प्रतिबद्धता और राष्ट्र और इसके शासन के साथ एक महत्वपूर्ण संबंध के महत्व को रेखांकित करती हैं।

12.4.2 अमेरिकी प्रतिनिधि सभा : एक दृष्टि

अमेरिकी प्रतिनिधि सभा, संयुक्त राज्य कांग्रेस की एक महत्वपूर्ण शाखा, में 435 मतदान सदस्य शामिल हैं, जिनमें से प्रत्येक को दो साल के कार्यकाल के लिए चुना जाता है। कुछ कार्यालयों के विपरीत, प्रतिनिधियों को किसी कार्यकाल सीमा का सामना नहीं करना पड़ता है, जिससे मतदाताओं द्वारा तय किए गए संभावित पुन: चुनाव की अनुमति मिलती है।

सदन में प्रतिनिधि अद्वितीय जिम्मेदारियाँ निभाते हैं, विशेषकर कर कानून के क्षेत्र में। उनके पास करों से संबंधित कानून पेश करने का विशेष अधिकार है और वे महाभियोग की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण हैं। क्या किसी सरकारी अधिकारी पर राष्ट्र के खिलाफ अपराध का आरोप लगाया जाना चाहिए, सदन निर्णय लेता है कि महाभियोग की कार्यवाही शुरू की जाए या नहीं, जिसमें सीनेट के समक्ष मुकदमा शामिल होता है।

प्रत्येक प्रतिनिधि राज्य के भीतर एक विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है जिसे जिला कहा जाता है। प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधियों की संख्या उसकी जनसंख्या से निर्धारित होती है, कैलिफ़ोर्निया जैसे बड़े राज्यों में अलास्का जैसे छोटे राज्यों की तुलना में अधिक प्रतिनिधि होते हैं।

प्रतिनिधि सभा के शीर्ष पर अध्यक्ष, शीर्ष अधिकारी होता है। ऐसी स्थिति में जब राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति दोनों सेवा करने में असमर्थ होते हैं, सदन का अध्यक्ष राष्ट्रपति की भूमिका निभाता है।

अमेरिकी प्रतिनिधि के रूप में सेवा करने के लिए पात्र होने के लिए, व्यक्तियों को निम्नलिखित आवश्यकताओं को पूरा करना होगा :

उम्र: 25 या अधिक

अमेरिकी नागरिकता: न्यूनतम 7 वर्ष

निवास: उस राज्य का निवासी होना चाहिए जिसका वे प्रतिनिधित्व करना चाहते हैं।

ये मानदंड अमेरिकी प्रतिनिधि सभा में सेवा करने के इच्छुक लोगों के लिए उम्र के संतुलन, राष्ट्रीय प्रतिबद्धता और राज्य के निवासियों के साथ जुड़ाव पर जोर देते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका में, कार्यकारी और विधायी शाखाएँ लोगों द्वारा चुनी जाती हैं, जो एक लोकतांत्रिक प्रणाली को दर्शाती हैं। हालाँकि, न्यायिक शाखा एक अलग ढांचे के तहत काम करती है। संविधान के अनुच्छेद III के अनुसार, जो न्यायिक शाखा की स्थापना की रूपरेखा देता है, इस शाखा के सदस्यों को निर्वाचित नहीं किया जाता है, बल्कि राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है और सीनेट द्वारा पुष्टि की जाती है।

जैसा कि अनुच्छेद III में उल्लिखित है, संविधान कांग्रेस को संघीय न्यायपालिका को आकार देने और उसकी संरचना बनाने का महत्वपूर्ण अधिकार देता है। इसमें सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या निर्धारित करने का विवेक शामिल है, यह आंकड़ा समय के साथ बदलता रहा है। विभिन्न बिंदुओं पर, कम से कम छह न्यायाधीश रहे हैं, लेकिन 1869 के बाद से, वर्तमान संख्या नौ निर्धारित की गई है, जिसमें एक मुख्य न्यायाधीश और आठ सहयोगी न्यायाधीश के रूप में कार्यरत हैं।

कांग्रेस, अपने संवैधानिक अधिकार का प्रयोग करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय के नीचे अदालतें स्थापित करने की भी शक्ति रखती है। परिणामस्वरूप, इसने संयुक्त राज्य अमेरिका की जिला अदालतें बनाई हैं, जो अधिकांश संघीय मामलों को संभालती हैं, और 13 संयुक्त राज्य अपील अदालतें, जिला अदालतों से अपील किए गए मामलों की समीक्षा के लिए जिम्मेदार हैं।

यह प्रणाली अमेरिकी सरकार के भीतर नियंत्रण और संतुलन को रेखांकित करती है। जबकि लोग कार्यकारी और विधायी शाखाओं में प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं, न्यायिक शाखा नियुक्तियों के माध्यम से काम करती है, पृथकता की एक सीमा प्रदान करती है जिसका उद्देश्य एक स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायपालिका सुनिश्चित करना है। संविधान का लचीलापन कांग्रेस को राष्ट्र की उभरती जरूरतों और परिस्थितियों को प्रतिबिंबित करते हुए संघीय न्यायपालिका के ढांचे को अनुकूलित करने और स्थापित करने की अनुमति देता है।

12.5 संयुक्त राज्य अमेरिका का सर्वोच्च न्यायालय : संरचना और संचालन

संयुक्त राज्य अमेरिका का सर्वोच्च न्यायालय, संविधान द्वारा स्थापित, सर्वोच्च संघीय न्यायिक प्राधिकरण के रूप में कार्य करता है। यहाँ संविधान नहीं वरन कांग्रेस न्यायाधीशों की संख्या निर्धारित करती है, 1869 से वर्तमान गिनती नौ तय की गई है। राष्ट्रपति द्वारा नामांकित और सीनेट द्वारा पुष्टि की गई, न्यायाधीशों की नियुक्तियाँ आजीवन बरकरार रहती हैं, इस कारणवश न्यायाधीश राजनीतिक दबावों से निरपेक्ष रहते हुए न्यायपालिका की स्वतंत्रता को अक्षुण्ण रखते हैं।

न्यायालय मुख्य रूप से अपीलीय मामलों को संभालता है और राज्यों के बीच विवादों जैसे कुछ मामलों पर उसका विशेष क्षेत्राधिकार होता है। यद्यपि यह विभिन्न कानूनी प्रश्नों पर अपीलों पर विचार कर सकता है, न्यायालय, एक नियम के रूप में, सुनवाई नहीं करता है। इसके बजाय, यह कानूनों की व्याख्या करता है, विशिष्ट तथ्यों के लिए उनकी प्रासंगिकता निर्धारित करता है, और निचली अदालतों के अनुसरण के लिए मिसाल कायम करता है।

सुप्रीम कोर्ट की समीक्षा की मांग करने वाले पक्षों को सर्टिअरी (उत्प्रेषण) की रिट के लिए याचिका दायर करनी होगी, यदि कम से कम चार न्यायाधीश किसी मामले की सुनवाई के लिए सहमत होते हैं तो न्यायालय परंपरागत रूप से प्रमाणपत्र दे देता है। सालाना हजारों अनुरोधों में से केवल एक छोटा सा हिस्सा ही सर्टिअरी (उत्प्रेषण) प्राप्त करता है। मामलों में आम तौर पर अपील की संघीय अदालतों के बीच महत्वपूर्ण कानूनी प्रश्न या परस्पर विरोधी फैसले शामिल होते हैं।

सर्टिअरी (उत्प्रेषण) प्रदान करने पर, न्यायालय कानूनी प्रविधियों एवं सुझावों की समीक्षा करता है और मौखिक दलीलें सुन सकता है। यदि शामिल हो तो सॉलिसिटर जनरल संघीय सरकार का प्रतिनिधित्व करता है। कई बैठकों में हुए विमर्शों के बाद न्यायाधीश किसी निर्णय पर पहुँचते हैं, न्यायालय की राय जारी करते हैं, और असहमतिपूर्ण तर्क दे सकते हैं। सर्टिअरी (उत्प्रेषण) से लेकर राय जारी करने तक की यह प्रक्रिया कई महीनों तक चल सकती है।

12.5.1 न्यायिक प्रक्रिया और संवैधानिक सुरक्षा :

संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान का अनुच्छेद III यह सुनिश्चित करता है कि अवैध कार्य हेतु आरोपी प्रत्येक व्यक्ति निष्पक्ष सुनवाई का हकदार है, जिसकी अध्यक्षता एक सक्षम न्यायाधीश और साथियों की जूरी (न्यायपीठ) करेगी। चौथे, पांचवें, छठे और आठवें संशोधन में अतिरिक्त सुरक्षा उपाय निहित हैं, जो आपराधिक आरोपों का सामना करने वालों के लिए आवश्यक सुरक्षा प्रदान करते हैं।

उचित प्रक्रिया गारंटी :

निष्पक्ष और निष्पक्ष कानूनी कार्यवाही पर जोर देते हुए यह सुनिश्चित करता है कि कानून की उचित प्रक्रिया के बिना किसी भी व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता या संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा।

दोहरे ख़तरे से सुरक्षा :

किसी व्यक्ति पर एक ही अपराध के लिए दो बार मुकदमा चलाने पर रोक लगाता है, दोहराव वाली कानूनी कार्यवाही और संभावित उत्पीड़न से बचाता है।

शीघ्र एवं निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार :

निष्पक्ष जूरी द्वारा समय पर सुनवाई के अधिकार की पुष्टि करता है, त्वरित न्याय सुनिश्चित करता है और लंबी कानूनी प्रक्रियाओं को रोकता है।

बहस करने और गवाहों को बुलाने का अधिकार :

एक व्यापक और संतुलित कानूनी प्रक्रिया के सिद्धांत को मजबूत करते हुए, आरोपी को गवाहों से जिरह करने और अपने बचाव में सबूत पेश करने का अधिकार देता है।

कानूनी प्रतिनिधित्व का अधिकार :

कानूनी प्रणाली की जटिलताओं को सुलझाने में पेशेवर सहायता के महत्व को स्वीकार करते हुए, कानूनी परामर्श का अधिकार प्रदान करता है।

आत्म-दोषारोपण से बचने का अधिकार :

इस सिद्धांत को बरकरार रखते हुए व्यक्तियों को खुद को दोषी ठहराने के लिए मजबूर होने से बचाता है। जैसे कि किसी भी व्यक्ति को अपने हितों के खिलाफ गवाही देने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है।

अत्यधिक जमानत, जुर्माना और क्रूर दंड से सुरक्षा :

कानूनी परिणामों में आनुपातिकता पर जोर देते हुए, व्यक्तियों को अनुचित वित्तीय बोझ और कठोर दंड से बचाता है। संक्षेप में, ये संवैधानिक प्रावधान सामूहिक रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका में न्यायिक प्रक्रिया का आधार बनाते हैं, मौलिक अधिकारों और सिद्धांतों को सुनिश्चित करते हैं जो कानूनी प्रणाली की निष्पक्षता, पारदर्शिता और अखंडता में योगदान करते हैं।

12.6 अमेरिकी सीनेट में पार्टियों का विकास: एक सिंहावलोकन

1790 और 1800 के दशक की शुरुआत में, सीनेटरों को फ़ेडरलिस्ट और डेमोक्रेटिक रिपब्लिकन में समूहित किया गया, जो मुख्य रूप से राष्ट्रपति वाशिंगटन और एडम्स की नीतियों के समर्थन या विरोध पर आधारित थे। ये समूहीकरण इतने स्पष्ट नहीं थे, लेकिन फिर भी फ़ेडरलिस्टों ने वाशिंगटन और एडम्स का समर्थन किया, जबकि जेफरसन के नेतृत्व में डेमोक्रेटिक रिपब्लिकन ने उनका विरोध किया। 1820 के बाद डेमोक्रेट और व्हिग्स के उभरने के साथ पार्टी की भूमिकाएँ मजबूत हुईं और 1830 के दशक में औपचारिक पार्टी रीति-रिवाज शुरू हुए।

1850 के दशक तक, पार्टियां अमेरिका में व्याप्त गुलामी के मुद्दों से निपटने में लगी रहीं , जिससे रिपब्लिकन पार्टी का उदय हुआ। डेमोक्रेट और व्हिग्स का वर्चस्व था, लेकिन गृहयुद्ध के कारण, दो-दलीय प्रणाली स्थापित हो गई। 19वीं सदी के अंत में डेमोक्रेट और रिपब्लिकन ने पार्टी की एकजुटता और नेतृत्व को मजबूत किया। 1913 तक डेमोक्रेट के पास एक नेता था, जबकि रिपब्लिकन के पास 1925 तक वरिष्ठता के बजाय नेतृत्व की क्षमता के आधार पर नेता चुने गए।

1920 और 1930 के दशक में, पार्टी नेताओं ने सीनेट प्रक्रियाओं के माध्यम से सत्ता हासिल की। 1946 के विधायी पुनर्गठन अधिनियम ने नेताओं को और अधिक सशक्त बनाया। 20वीं सदी में पार्टी पुनर्गठन, अभियान समितियाँ और नीति समितियाँ देखी गईं। लिंडन बी. जॉनसन और माइक मैन्सफील्ड जैसे नेता सत्ता के केंद्रीकरण में भिन्न थे। आज नेता पार्टियों की एकजुटता एवं देखरेख में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अधिकांश नेता विधायी एजेंडा निर्धारित करते हैं, साथ ही दलों के सदस्यों के पारस्परिक सहयोग से सीनेट का सुचारू रूप में संचालन सुनिश्चित होता है।

अमेरिका में पार्टी प्रणाली की विशेषता दो दलीय संरचना है जिसमें डेमोक्रेटिक पार्टी और रिपब्लिकन पार्टी का वर्चस्व है। यह प्रणाली सदियों से विकसित हुई है, 1790 के दशक में नीतियों को लेकर शुरुआती मतभेद उभरे और बाद में 19वीं सदी के मध्य में गुलामी पर बहस के दौरान तेज हो गए। 1800 के दशक के अंत तक डेमोक्रेटिक और रिपब्लिकन पार्टियों ने प्रमुख राजनीतिक ताकतों के रूप में अपनी स्थिति मजबूत कर ली।

जबकि तीसरे पक्ष और स्वतंत्र उम्मीदवार कभी-कभी भाग लेते हैं, अमेरिकी राजनीतिक परिदृश्य मुख्य रूप से डेमोक्रेट और रिपब्लिकन द्वारा आकार दिया गया है। प्रत्येक पार्टी विविध हितों के व्यापक समूहीकरण का प्रतिनिधित्व करती है, और उनकी प्रतिस्पर्धा राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय चुनावों को परिभाषित करती है । पार्टी प्रणाली संयुक्त राज्य अमेरिका में नीतिगत बहस, चुनावी रणनीतियों और विधायी प्राथमिकताओं को प्रभावित करती है। समय-समय पर बदलाव और पुनर्गठन के बावजूद, दो-पक्षीय ढांचा अमेरिकी राजनीति की एक केंद्रीय विशेषता बनी हुई है।

अभ्यास प्रश्न

1.अमेरिकी संविधान में राष्ट्रपति की शक्ति का उल्लेख संविधान की धारा दो में किया गया है। सत्य/असत्य

2.अमेरिकी राष्ट्रपति का कार्यकाल.....वर्षों के लिए होता है।

3.राष्ट्रपति पर महाभियोग का आधार देशद्रोह, भ्रष्टाचार, घोर अपराध या कदाचार ही हो सकता है। सत्य/असत्य

4.राष्ट्रपति को उच्च पद की नियुक्तियों के लिए सीनेट से परामर्श करना पड़ता है। सत्य/असत्य

5.सशस्त्र बलों का प्रधान सेनापति .....है।

12.7 सारांश

इस अध्याय के माध्यम से ,संयुक्त राज्य अमेरिका की विधायिका, संघीय कार्यपालिका, न्यायपालिका और पार्टी प्रणाली की को हम विस्तारपूर्वक समझ सकेंगे। साथ ही यह अध्याय देश के शासन को आकार देने वाले जटिल तंत्र

की व्यापक समझ प्रदान करता है । विधायी और कार्यकारी शाखाओं के बीच गतिशील परस्पर क्रिया से लेकर संविधान को बनाए रखने में न्यायपालिका द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका तक, यह अध्याय अमेरिकी राजनीतिक प्रणाली की जटिलता और लचीलेपन को रेखांकित करता है । इसके अतिरिक्त, पार्टी प्रणाली की जांच राजनीतिक संबद्धताओं के उभरते परिदृश्य और नीति निर्धारण पर उनके प्रभाव पर प्रकाश डालती है। जैसे-जैसे हम इन प्रमुख स्तंभों के बीच सूक्ष्म बातचीत में गहरे उतरते हैं, यह स्पष्ट हो जाता है कि संयुक्त राज्य अमेरिका की लोकतांत्रिक नींव मजबूत और अनुकूलन दोनों है, जो उन सिद्धांतों के प्रति निरंतर प्रतिबद्धता को दर्शाती है जिन पर राष्ट्र की स्थापना हुई थी ।

12.8 शब्दावली

इलेक्टोरल कोलेज - अमेरिका के राज्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले लोगों का एक निकाय, जो औपचारिक रूप से राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के चुनाव के लिए वोट डालता है ।

स्टेट ऑफ द यूनियन संबोधन - स्टेट ऑफ द यूनियन संबोधन संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्र की वर्तमान स्थिति पर अधिकांश कैलेंडर वर्षों की शुरुआत में संयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस के संयुक्त सत्र में दिया जाने वाला एक वार्षिक संदेश है ।

सर्टिओरी - अमेरिकी अदालत प्रणाली में, "सर्टिओरी रिट" कानूनी प्रक्रिया या प्रक्रियाओं में किसी भी अनियमितता के लिए निचली अदालत द्वारा किए गए निर्णयों की समीक्षा करने के लिए उच्च या "अपीलीय" अदालत द्वारा जारी किया गया एक आदेश (रिट) है ।

अक्षुण्ण – जो विभक्त न हो , अखंडित

12.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सत्य 2. 4 3. सत्य 4. सत्य 5. राष्ट्रपति

12.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. स्टीबार्ट ओ0 डेविड; 'द समर आफ 1787 दी मैन टू इन्वेन्टड दी कान्सटीट्यूशन' (2008), साइमन एण्ड स्कस्टर, न्यूयार्क

2. क्लूज, डेविड; 'दी पीपुल्स गाइड टू दी युनाइटेड स्टेट्स कन्सटीट्यूशन' (2007) एक्शन पब

3. जैन, पुखराज; 'विश्व के प्रमुख संविधान' (1993) साहित्य भवन, आगरा

4. नारायण, इकबाल; 'विश्व के प्रमुख संविधान' (1969) आर0 के0 प्रिंटर्स, दिल्ली

12.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. अखिल रीड अमर; 'अमेरिकास कन्सटीट्यूशन: अ बायोग्राफी' (2005) यू0 एस0 ए0

2. बीर्ब्रन, कोरल; 'अ ब्रीलियन्ट सलूशन: इन्वेन्टींग दी अमेरिकन कन्सटीट्यूशन' (2007) बल क्लाउड बुक्स, एजेड, यू एस ए

9.10 निबंधात्मक प्रश्न -

1. अमरीकी राष्ट्रपति के चुनाव प्रक्रिया पर निबन्ध लिखिए।

2. अमेरिकी राष्ट्रपति की शक्तियों की विवेचना कीजिए।

3. अमेरिकी मन्त्रिमण्डल के संगठन एवं कार्यों पर टिप्पणी कीजिए

4. ''अमेरिकी राष्ट्रपति का पद बेहद शक्तिशाली है'', विवेचना कीजिए।

5.कांग्रेस की शक्तियाँ, शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को बखूबी प्रदर्शित करती है। टिप्पणी कीजिए।

इकाई-13 स्विट्ज़रलैंड का संविधान-I: संविधान की मूलभूत विशेषताएँ, स्विस संघीय व्यवस्था

इकाई की संरचना

13.0 प्रस्तावना

13.1 उद्देश्य

13.2 स्विस संविधान की मूलभूत विशेषताएँ

13.3 संघवाद का अर्थ

13.4 स्विस संघीय व्यवस्था की विशेषताएं

13.5 सारांश

13.6 शब्दावली

13.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.8 संदर्भ ग्रन्थ

13.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

13.10 निबंधात्मक प्रश्न

13.0 प्रस्तावना

स्विट्जरलैण्ड का प्रारम्भिक इतिहास जातियों के आवागमन का इतिहास रहा है। अगस्त 1291 को तीन स्वतंत्र तथा सम्प्रभु राज्यों ने स्थायी संघ की स्थापना की। आप समझ गये होगें कि यहीं से स्विट्जरलैण्ड का जन्म हुआ। स्विट्जरलैण्ड की स्थापना के कई सौ वर्ष इसके विस्तार तथा दृढ़ता के वर्ष थे। इस समय क्रमषः अनेक केन्टनों ने इसमें प्रवेश लिया। 1648 ई0 में वेस्टफालिया की संधि ने इसे एक स्वतंत्र एवं सम्प्रभुता सम्पन्न राज्य के रुप में मान्यता प्रदान की। फ्रांस की राज्य क्रांति ने स्विस राज्य मण्डल को ओर अधिक दुर्बल कर दिया। नेपोलियन के पतन के पश्चात् वियना क्रांग्रेंस (1815ई0) ने तीन नये केण्टनों को मिलाकर स्विट्जरलैण्ड को पुराना राज्य मण्डल दे दिया। इसी के फलस्वरुप 1848ई0 को उदारवादी आंदोलन से प्रभावित होकर स्विस डाइट ने एक नये संविधान को स्वीकार किया। आप जानते है 1848 ई0 का संविधान उपयुक्त होते हुये भी अधिक दिनों तक कार्यशील नहीं रहा क्योंकि रेडिकल लोग इस संविधान के विरुद्ध थे। वे केन्द्र को शक्तिशाली बनाना चाहते थे और इसमें उन्हें जनता का समर्थन प्राप्त हुआ इसके परिणामस्वरुप 1874ई0 में संघीय संसद ने नया संविधान लागू किया। इस संविधान निर्माण से लेकर अब तक इसमें अनेक संशोधन हुये लेकिन संविधान में कोई मौलिक परिवर्तन नहीं हुआ है। स्विट्जरलैण्ड यूरोपीय महाद्वीप के मध्य स्थित सबसे छोटा देश है जिसकी सीमा तीन बड़े पड़ौसी देशों इटली, जर्मनी और फ्रांस से मिलती है। वर्तमान में स्विट्जरलैण्ड 26 केन्टनों में विभक्त है व इसकी जनसंख्या लगभग 7.8 मिलियन है।

स्विट्जरलैण्ड में संघवाद धीरे-धीरे विकसित हुआ। प्रारंभ में यहाँ कुछ स्वतंत्र राज्य थे तथा कोई केन्द्रीय शक्ति नहीं थी। इन राज्यों में रहने वाले लोगों में विभिन्नताएँ थी। 13वीं शताब्दी के अंत में तीन छोटी ट्यूटानिक जातियों ने संधि की ताकि जागीरदारों के अत्याचारों से बच सकें। बाद में पाँच अन्य केन्टन इसमें सम्मिलित हुए। इन्होंने आस्ट्रिया को हराया तथा 250 वर्ष तक परिसंघ कायम रखा। हालांकि आपसी मतभेद थे पर इन्हें जोड़ने वाला सूत्र सामूहिक सुरक्षा थी। 1648 में इन्हें स्वतंत्र मान लिया गया तब 13 केन्टन थे। 1815 के महत्वपूर्ण वर्ष में आधुनिक स्विट्जरलैण्ड संघ को वर्तमान आकृति प्राप्त हुई। 1848 में संघ गृहयुद्ध से गुजर कर और मजबूत हुआ तथा नया संविधान बना जो एक समझौते का फल था। बाद के वर्षों में केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति बढ़ी तथा 1874 में नया संविधान प्रभावी हुआ। बाद में 1999 में एक और नया संविधान आया जो अभी प्रभावी है परन्तु इन सभी में संघीय व्यवस्था को कायम रखा गया है।

स्विट्जरलैण्ड के संविधान का प्रथम अनुच्छेद स्विस संघ का वर्णन करता है तथा अनुच्छेद बताता है कि स्विस संघ 26 केन्टनों से मिलकर बना है। स्विस संविधान का अनुच्छेद दो स्विस संघ के उद्देश्य बताता है जो चार हैं: प्रथम उद्देश्य लोगों की स्वतंत्रता व अधिकारों तथा देश की रक्षा है। द्वितीय उद्देश्य सामूहिक कल्याण, टिकाऊ विकास तथा आंतरिक सामंजस्य है। तृतीय उद्देश्य सभी नागरिकों को समान अवसर प्रदान करना है तथा चतुर्थ उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण तथा अंतर्राष्ट्रीय शांति को बढ़ावा देना है।

स्विट्जरलैण्ड संघवाद का एक उत्तम उदाहरण है अतः भारत जैसे देश उससे सफल संघवाद चलाने की शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि दोनों ही देश विविधतापूर्ण भी हैं।

13.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप यह समझ सकेंगे कि –

1. स्विस संविधान की मूलभूत विशेषताओं को जान सकेंगे।
2. स्विस संघीय व्यवस्था की विशेषताओं को जान सकेंगें।

13.2 स्विस संविधान की मूलभूत विशेषताएँ

स्विट्जरलैण्ड की राजनीतिक व्यवस्था उसके संविधान द्वारा संचालित होती है अतः वहाँ की राजनीतिक व्यवस्था को समझने के लिए वहाँ के संविधान का अध्ययन आवष्यक है। स्विस संविधान का अध्ययन इसलिए आवश्कय है कि हमारे देश की तरह यह एक विविधतापूर्ण देष है परन्तु यहाँ का प्रशासन व राजनीतिक व्यवस्था अत्यन्त सुसंचालित है। अतः इसका अध्ययन कर हम अपनी व्यवस्था में सुधार हेतु कुछ सीख सकते हैं।

स्विस संविधान की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं ----

समयानुकूल संविधान: स्विट्जरलैंड का संविधान समय के साथ समायोजित होता रहता है और प्रतिमाह समीक्षा के लिए तैयार रहता है। 1999 में संविधान का आधार बनाया गया था, लेकिन इसमें पुराने संविधान की भावना को बनाए रखने के लिए संशोधन किए जा रहे हैं।

लिखित और निर्मित संविधान: स्विट्जरलैंड का संविधान लिखित है और इसमें नागरिकों के अधिकार-कर्तव्य, सरकार की शक्तियाँ और देश के संघ तथा केन्टनों के बीच सम्बन्धों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है।

संघवाद: स्विट्जरलैंड एक संघ है जिसमें 26 केन्टन (राज्य) शामिल हैं। केन्टन अपने निर्दिष्ट अधिकारों के लिए स्वतंत्र हैं और संघ के साथ सहयोग करते हैं लेकिन उनकी स्वायत्ता को बनाए रखते हैं।

राष्ट्रीय भाषाएं: स्विट्जरलैंड में चार प्रमुख भाषाएं हैं - जर्मन, फ्रेंच, इटालियन, और रोमांश। संविधान ने इन भाषाओं को राष्ट्रीय भाषाएं घोषित किया है और सार्वजनिक कार्यों में इन्हें प्रयुक्त करने का सुनिश्चित किया गया है।

कानून का शासन: संविधान ने यह उन्नत सिद्धांत को बढ़ावा दिया है कि सभी कार्यों का आधार कानून हो, और संघ और केन्टन दोनों को अपने कानूनों का पालन करना होता है।

मूल अधिकार: संविधान ने नागरिकों को विभिन्न मौलिक अधिकार प्रदान किए हैं, जैसे कि मानवीय गरिमा, समानता, जीवन, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, और शिक्षा।

सेना: स्विट्जरलैंड के संविधान ने सेना के बारे में भी प्रावधान किया है और सभी पुरुषों के लिए सैनिक सेवा को अनिवार्य बनाया है, जबकि महिलाएं इसमें ऐच्छिक रूप से शामिल हो सकती हैं।

शिक्षा और अनुसंधान: संविधान ने शिक्षा को महत्वपूर्णता दी है और प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य और मुफ्त बनाए रखा है। उच्च शिक्षा संघ और केन्टनों के विषय में है।

प्रत्यक्ष लोकतंत्र: स्विट्जरलैंड का संविधान प्रत्यक्ष लोकतंत्र की अद्वितीयता को बढ़ावा देता है, जिसमें नागरिकों को संघीय सभा के तीसरे सदन की संज्ञा दी जाती है और वे संविधान में संशोधन करने का अधिकार रखते हैं। जनमत संग्रह की प्रक्रिया से जनता को सीधा भागीदारी मिलती है।

इन विशेषताओं के माध्यम से, स्विट्जरलैंड का संविधान एक सुसंचालित और विविध देश की राजनीतिक व्यवस्था को स्थापित करने में कैसे सहायक है, यह समझा जा सकता है। इसके सिद्धांतों और मूल्यों को ध्यान में रखकर अन्य देश भी अपनी राजनीतिक व्यवस्था को सुधारने में सहायक हो सकते हैं।

हुआ है।

द्विसदनात्मक संसद:

स्विस संसद भारतीय संसद की तरह द्विसदनात्मक है। ऊपरी सदन को सीनेट कहते हैं। जिसमें 46 सीनेटर होते है जो केन्टनों के द्वारा भेजे जाते है। निचले सदन को प्रतिनिधि सदन कहते हैं। इसमें 200 सदस्य होते हैं, जो लोगों द्वारा सीधे निर्वाचित होते हैं। साधारणतः दोनों सदन अलग-अलग बैठक करते हैं तथा कानून निर्माण के लिए दोनों सदनों की सहमति आवश्यक होती है परन्तु कुछ परिस्थितियों में संयुक्त बैठक का भी प्रावधान है। दोनों सदनों के सदस्य 4 साल के लिए निर्वाचित होते हैं।

बहुल कार्यपालिका व सामूहिक सत्ता:

स्विस संविधान की संघीय परिषदउसकी एक अनूठी विषेषता है। यह एक बहुल कार्यपालिका है स्विट्जरलैण्ड में कार्यपालिका षक्ति न तो अमेरिका की शँति राष्ट्रपति में निहित है और न ही ब्रिटेन की शँति प्रधानमंत्री में निहित है। संघीय कार्यपालिका में सात मंत्री होते है जिनका चुनाव संघीय संसद करती है। ये सभी प्रतिनिधि सभा के सदस्य होने की योग्यता रखते हैं। इनके निर्वाचन में सभी क्षेत्रों को प्रतिनिधित्व मिले इसका ध्यान रखना आवश्यक है। इनका अध्यक्ष व उपाध्यक्ष इनमें से ही संसद द्वारा एक वर्ष के लिए चुना जाता है। एक ही व्यक्ति लगातार दो वर्ष अध्यक्ष नहीं हो सकता। संघीय कार्यपालिका सभी निर्णय मिलकर करती है। इसके सदस्य अलग-अलग दलों के होते है। 1959 से चार राजनीतिक दल मिलकर सरकार का गठन करते हैं। संघीय परिषदका प्रत्येक सदस्य हर दृष्टि से समान होता है। किसी को कोई विषेषाधिकार प्राप्त नहीं होता है।

गणतंत्रीय परंपरा:

स्विस संविधान का स्वरूप गणतंत्रात्मक है अर्थात इस देश का प्रधान निर्वाचित होता है जन्मजात या वंशानुगत नहीं। स्विट्जरलैण्ड में ऐसा कोई पद नहीं जिस पर साधारण नागरिक नियुक्त ना हो सके। यहाँ गणतंत्रीय परंपरा 600 साल से चली आ रही है।

विपक्ष का अभाव:

स्विस राजनीतिक व्यवस्था में सरकार में मंत्रीपद दल की संसद में स्थिति के आधार पर प्राप्त होते है अतः सभी प्रमुख दल सरकार में सम्मिलित होते हैं। किसी दल को एक तो किसी दल को दो मंत्रीपद प्राप्त होते हैं। अतः अन्य देशों की तरह वहाँ विपक्ष का अभाव होता है।

कठोर संविधान:

स्विट्जरलैण्ड का संविधान एक कठोर संविधान है। यह अमेरिका के संविधान से कम परन्तु शरत के संविधान से अधिक कठोर है। स्विट्जरलैण्ड के संविधान में संशोधन के प्रस्ताव को तभी लागू किया जा सकता है जब संघीय सभा के दोनों सदन उसे पारित कर दें और केन्टनों तथा मतदाताओं द्वारा उसको समर्थन मिले। आप समझ गये होंगे कि स्विट्जरलैण्ड के संविधान में जो कठोरता है वह संविधान के संघीय रुप की रक्षा के लिए आवश्यक है और इसी उद्देश्य से संविधान में संशोधन प्रक्रिया की व्यवस्था ऐसी की गई है जिससे संविधान का संशोधन अत्यधिक सरलता से तथा संघ की इकाइयों व उनकी जनता की इच्छा के बिना नहीं हो सकता। संविधान की संशोधन प्रक्रिया में नागरिकों की साझेदारी संशोधन के प्रस्ताव से लेकर उसकी पुष्टि तक है।

देश का सर्वोच्च कानून:

आप जानते होंगे कि शरत तथा अमेरिका में न्यायिक सर्वोच्यता का सिद्धान्त लागू किया गया है और वहां के सर्वोच्य न्यायालयों को संविधान की व्याख्या करने तथा कानून की वैद्यता की जाँच करने का अधिकार है। वे किसी ऐसे कानून को जो संविधान का उल्लंघन करता हो, अवैध घोषित कर सकते हैं। परन्तु स्विट्जरलैण्ड में न्यायपालिका को संघ द्वारा पारित कानूनों को अवैध घोषित करने का अधिकार नहीं है। वहाँ का संविधान लिखित है तथा किसी प्रकार के विवाद का निर्णय संविधान के उपबन्धों के अन्तर्गत ही होता है। संविधान कठोर है, क्योंकि संशोधन की प्रक्रिया बहुत जटिल है।

तिहरी नागरिकता:

संघीय संविधानों में नागरिकों को प्रायः दोहरी नागरिकता प्राप्त होती है-एक संघ की दूसरी उस राज्य की जिसमें नागरिक निवास करता है। आप जानते है स्विट्जरलैण्ड में नागरिकों को तिहरी नागरिकता प्राप्त है-एक स्विस राज्यमण्डल या परिसंघ की, दूसरी केन्टन की व तीसरी कम्यून की। दूसरी ओर शरत जैसी संघीय व्यवस्था वाले देषों में, राष्ट्रीय एकता और अखण्डता को बनाये रखने के लिए नागरिकों को एकहरी नागरिकता ही प्रदान की गई है।

धर्म निरपेक्षता:

स्विट्जरलैण्ड में धर्म के नाम पर जो प्राचीन काल में झगड़े थे, उनको समाप्त करने के लिए संविधान में कुछ उपबंध प्रस्तुत किये गये है। संविधान में सभी नागरिकों को धर्म व पूजा सम्बन्धी स्वतंत्रता दी गई। किसी नागरिक को किसी धर्म विषेष के अपनाने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है, न उसको किसी विषेष प्रकार की धार्मिक पूजा के लिए बाध्य किया जा सकता है न उसको किसी धार्मिक शिक्षा पर चलने के लिए बाध्य किया जा सकता है। किसी व्यक्ति के नागरिक अथवा राजनीतिक अधिकारों को किसी धार्मिक पादरी अथवा धार्मिक आज्ञा के आधार पर कम नहीं किया जा सकता। व्यक्ति को ऐसे किसी कर को देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है जो किसी ऐसी धार्मिक संस्था को चलाने के लिए प्रयुक्त किया जा रहा हो जिसका वह अनुयायी नहीं हो।

शक्ति पृथक्करण:

स्विट्जरलैण्ड में षक्ति-पृथक्करण के सिद्धान्त का कठोरता से पालन नहीं किया गया। स्विस संविधान में अमेरिका की शँति षक्ति-पृथक्करण के सिद्धान्त को नहीं अपनाया गया है। वहाँ सारी शक्ति के अन्तिम उपभोक्ता वहाँ के केन्टन और नागरिक हैं। उदाहरणतः स्विस संघीय परिषदऔर संघीय न्यायाधिकरण संघीय सभा के अधीन है। संघीय सभा

संघीय परिषदके सदस्यों और संघीय न्यायाधिकरण के न्यायाधीषों का निर्वाचन करती है। संघीय परिषदसंधीय सभा के आदेश और निर्देश में कार्य करती हैं। संघीय परिषदऔर संघीय न्यायाधिकरण दोनों अपने कार्यों की वार्षिक रिपोर्ट संघीय सभा को प्रस्तुत करते हैं। संघीय सभा द्वारा पारित कानूनों पर कार्यपालिका अथवा न्यायपालिका के द्वारा निषेधाधिकार का प्रयोग नहीं होता। दूसरी ओर, संघीय परिषदकेवल कार्यपालिका शक्तियों का ही प्रयोग नहीं करती अपितु विधायी, वित्तीय और न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करती है।

न्यायिक पुनरावलोकन की सीमित शक्ति:

स्विस संविधान न्यायापालिका को न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार केवल आंशिक रुप में ही देता है। यहाँ अन्य संविधानों की भांति एक संघीय न्यायाधिकरण है। परन्तु स्विस संधीय सभा और स्विस संघीय परिषद की शँति एक संघीय न्यायाधिकरण एक अद्वितीय न्यायालय है। प्रथम, स्विस संघीय न्यायाधिकरण शासन का एक समान स्तरीय एवं स्वतंत्र अंग नहीं है। यह एक अधीनस्थ अंग है। उदाहरणतः संधीय सभा संघीय न्यायाधिकरण के क्षेत्राधिकार का विस्तार कर सकती है। दूसरे, स्विस संघीय न्यायाधिकरण का न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार न तो अमेरिका सर्वोच्य न्यायालय की शँति "कानून की उचित प्रक्रिया" पर आधारित है और न शरतीय सर्वोच्च न्यायालय की शँति "कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया" पर आधारित है। स्विस संघीय न्यायाधिकरण की न्यायिक पुनरावलोकन की षक्ति सीमित है।

उदारवादी दर्शन पर आधारित:

उदारवाद स्विस राजनीतिक व्यवस्था का महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। उदारवाद से अभिप्राय उस विचारधारा से है जो व्यक्ति, उसकी स्वतंत्रता तथा अधिकारों का समर्थन करे और राज्य को उनके रक्षार्थ एक साधन के रुप में स्वीकार करें। स्विस संविधान व्यक्ति की स्वतंत्रता और समानता पर बल देता है। स्विस नागरिक शषण, प्रेस, समुदाय, धर्म, निवास, भ्रमण, षिक्षा, सम्पति, उद्यम आदि की स्वतंत्रताओं का उपयोग करते हैं। वहाँ सभी कानून के समक्ष समान हैं। यद्यपि उदारवाद का आर्थिक रुप पूँजीवाद है, लेकिन स्विस संविधान ने जन कल्याण तथा सामाजिक सुरक्षा के उपबंधों द्वारा संषोधित कर उसे लोककल्याणकारी राज्य का रुप दे दिया है।

विभिन्नता में एकता:

स्विट्जरलैण्ड विविध धर्मो, भाषाओं और संस्कृतियों का देष है।फिर वहाँ जाति वैमनस्य, धार्मिक मतान्धता और भाषायी कटुता नहीं है। सभी एक दूसरे के प्रति सहिष्णुता का दृष्टिकोण अपनाते हैं और अपने आपको स्विस समझते हैं।

स्थायी तटस्थता:

स्विट्जरलैण्ड की विदेष नीति तटस्थता पर आधारित है। इसके कारण वह अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की उथल-पुथल, संघर्ष और युद्ध आदि से अछूता रहा है। जॉन ब्राउन मैसन ने लिखा है कि स्विट्जरलैण्ड अषांति के सागर में एक सुखी द्वीप के समान है।

विकेन्द्रीकरण:

स्विस संविधान शक्तियों का केन्द्रीकरण किसी एक स्थान पर नहीं करता। उदाहरणतः स्विस संघीय परिषदके अध्यक्ष के रुप में एक स्विस राष्ट्रपति है पर वह शक्तिशालीनहीं होता है। उसके पास कोई विशेषाधिकार नहीं होता तथा हर वर्ष मंत्रीमंडल का एक नया सदस्य इस पद को ग्रहण करता है। अतः वास्तविकता में सभी समान होते हैं। स्विस जनता जनमत संग्रह के माध्यम से अन्तिम और आरम्भन के माध्यम से आरम्भिक विधायी शक्ति का प्रयोग करती हैं।

गतिशील संविधान:

स्विस संविधान एक जीवित गतिशील प्रलेख है। मौलिक उपबंधों द्वारा निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत यह अपने को समय के अनुकूल बदलता रहा है। संविधान की आत्मा को छुए बिना संशोधन द्वारा इसमें परिवर्तन किया गया है। फलतः समय की गति के साथ यह विकासशील होता रहा है। संशोधन तथा विधेयकों द्वारा व्यक्ति की सामाजिक रक्षा की गई है लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि राज्य के बढ़ते हुये कार्य ने व्यक्ति की स्वतंत्रता पर आघात किया है। स्विस जनता ने अपनी स्वतंत्रता पर आघात करने वाले विधेयकों का सदा से विरोध किया हैं।

अभ्यास प्रश्न 1

1.वर्तमान स्विस संविधान 18 अप्रैल 1999 को जनता द्वारा स्वीकारा गया था.सत्य /असत्य

2.स्विट्जरलैण्ड में धर्म निरपेक्षता की नीति अपनाई गयी है. सत्य /असत्य

3.स्विट्जरलैण्ड में शक्ति-पृथक्करण के सिद्धान्त का कठोरता से पालन किया गया. सत्य /असत्य

4.अवशिष्ट अधिकार क्षेत्र केन्टनों को सौंपे गये हैं. सत्य /असत्य

5.स्विट्जरलैण्ड अप्रत्यक्ष लोकतंत्र का श्रेष्ठतम उदाहरण है. सत्य /असत्य

13.3 संघवाद का अर्थ

संघवाद या संघीय व्यवस्था की तीन प्रमुख विशेषताएँ होती हैं:

प्रथम केन्द्र(संघ) व अवयवों का होना जिन्हें भारत में राज्य व स्विट्जरलैण्ड में केन्टन कहते हैं।

द्वितीय संघ व अवयवों में शक्ति का विभाजन जिसे आसानी से बदला ना जा सके अर्थात एक लिखित संविधान के द्वारा शक्तियों का विभाजन।

तृतीय विवादों को सुलझाने का उपाय जैसे स्वतंत्र न्यायपालिका जो केन्द्र(संघ) व राज्यों में शक्ति विभाजन को लेकर उपजे विवादों को सुलझा सके।

यदि ये तत्व किसी व्यवस्था में नहीं मिलते तथा सारी शक्तियाँ एक केन्द्र में ही केन्द्रित होती हैं तो ऐसी व्यवस्था को एकात्मक व्यवस्था कहते हैं।

13.4 स्विस संघीय व्यवस्था की विशेषताएँ

13.4.1 संविधान की सर्वोच्चता

जैसा कि हमने पहले पढ़ा संघवाद की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि संघ में संविधान सर्वोच्च होता है जिसके द्वारा संघ व अवयवों में शक्ति का विभाजन होता है तथा दोनों ही अपनी शक्तियाँ संविधान से प्राप्त करते हैं। ना तो संघ और न ही इकाई(अवयव) संविधान की धाराओं का उल्लंघन कर सकते हैं। स्विट्जरलैण्ड में भी संविधान को देश का सबसे ऊँचा और आधारभूत कानून माना जाता है और शासन के सभी अंगों को उसी से शक्ति प्राप्त होती है।

13.4.2 लिखित व कठोर संविधान

सभी संघात्मक संविधान लिखित व कठोर होते हैं जिससे शक्तियों का विभाजन सभी को स्पष्ट रूप से ज्ञात हो और संविधान को कोई भी आसानी से बदल कर शक्ति संबंधों को ना बदल सके। स्विट्जरलैण्ड का संविधान भी लिखित और कठोर है अर्थात इसको आसानी से परिवर्तित नहीं किया जा सकता। संविधान संशोधन की एक निश्चित प्रक्रिया है तथा इसके लिए जनता व अवयवों(इकाइयों या केन्टनों) का भी समर्थन आवश्यक है। जब तक आधे से अधिक केन्टन संविधान संशोधन को ना स्वीकारें वह संविधान संशोधन नहीं हो सकता। अतः स्विट्जरलैण्ड में संविधान संशोधन की प्रक्रिया साधारण कानून की अपेक्षा अधिक कठोर है।

13.4.3 शक्तियों का स्पष्ट विभाजन

स्विस संघ में 26 केन्टन हैं तथा एक केन्द्र(संघ) भी है। संविधान द्वारा केन्द्र व केन्टनों के बीच शक्तियों का स्पष्ट विभाजन किया गया है। जो राष्ट्रीय महत्व के विषय हैं उन्हें संघ सरकार को सौंपा गया है और शेष को केन्टनों को दिया गया है। संविधान द्वारा संघ(केन्द्र) को विदेश संबंध, युद्ध व संधि, रेल मार्ग, संचार, मुद्रा, वित्त, वाणिज्य आदि विषय प्रदान किए गए हैं। संघ सरकार को कुछ समवर्ती शक्तियाँ भी प्राप्त हैं जिनका प्रयोग वह केन्टनों के साथ-साथ करती हैं। परन्तु मतभेद की स्थिति में संघीय कानून को मान्यता प्राप्त होती है। परन्तु अवशिष्ट शक्तियाँ केन्टनों के पास है। इस प्रकार आप समझ गए होंगे कि स्विस व्यवस्था अमरीकी व्यवस्था के जैसी ही है।

13.4.4 द्वैध शासन

संघात्मक व्यवस्था में संघ व अवयवों की अपनी-अपनी सरकार होती है। वही व्यवस्था स्विट्जरलैण्ड में भी है। यहाँ संघ (केन्द्र) की अपनी सरकार है तथा अवयवों (केन्टनों) की अपनी सरकार। दोनों ही अपने-अपने कार्य क्षेत्र में स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करते हैं। कार्य क्षेत्र तथा शक्तियाँ दोनों को ही संविधान से प्राप्त होती है। अतः न तो केन्द्र ही अवयवों (केन्टनों) पर निर्भर है और ना केन्टन ही संघ पर। परन्तु संघ व सभी 26 केन्टन एक दूसरे से सहयोग करते हैं।

अमरीकी संघ की भांति स्विस संघ में भी सभी इकाइयाँ(केन्टन) समान स्थिति में हैं। प्रत्येक केन्टन का अपना संविधान, नागरिकता के नियम, कानून, प्रथाएँ व परम्पराएँ हैं। संघात्मक सिद्धांत के

अनुरूप दोहरी नागरिकता, दोहरे अधिकार और दोहरी न्यायपालिका की भी व्यवस्था है। अमेरिका की ही भांति व्यवस्थापिका के उच्च सदन अर्थात सीनेट में सभी इकाइयाँ(केन्टन) बराबर प्रतिनिधि भेजते हैं अर्थात सभी पूर्ण केन्टन दो प्रतिनिधि और सभी अर्द्ध केन्टन एक प्रतिनिधि भेजते हैं। समान प्रतिनिधित्व का यह सिद्धांत सभी केन्टनों को परस्पर समानता प्रदान करता है।

13.4.5 न्यायापालिका की सर्वोच्चता

संघात्मक व्यवस्था में केन्द्र व इकाइयों(राज्यों) के बीच शक्ति विभाजन को सुदृढ़ करने के लिए तथा उनके बीच विवादों का अंतिम निर्णय करने के लिए तथा संविधान की व्याख्या करने के लिए एक स्वतंत्र, सर्वोच्च और निष्पक्ष न्यायपालिका को आवश्यक माना गया है। परन्तु स्विट्जरलैण्ड में अमेरिका की तरह न्यायापालिका की सर्वोच्चता को स्वीकार नहीं किया गया है। अतः संघीय न्यायालय को संविधान की अंतिम व्याख्या करने की शक्ति प्राप्त नहीं है। संघीय विधानमंडल द्वारा पारित कानूनों की वैधानिकता की जाँच करने का भी उसे अधिकार नहीं है। स्विट्जरलैण्ड में केवल आंशिक न्यायिक पुनरावलोकन की व्यवस्था है। क्योंकि स्विट्जरलैण्ड का संघीय न्यायालय केवल केन्टनों के कानूनों का पुनरावलोकन कर सकता है तथा उन्हें अवैध घोषित कर सकता है।

13.4.6 संविधान संशोधन में केन्टनों का महत्वपूर्ण स्थान:

स्विट्जरलैण्ड एक संघीय व्यवस्था वाला देश है क्योंकि वहाँ प्रत्येक संविधान संशोधन में आधे से अधिक केन्टनों का समर्थन आवश्यक है। अतः संघीय व्यवस्थापिका मनमाने तरीके से संविधान संशोधन करके अपनी शक्तियों में वृद्धि नहीं कर सकती तथा संघ व केन्टनों में शक्ति संतुलन को बदल नहीं सकती।

उपरोक्त विशेषताओं के अध्ययन से आप समझ ही गए होंगे कि स्विट्जरलैण्ड में संघात्मक व्यवस्था है जिसमें केन्टनों को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है।

अभ्यास प्रश्न 2

1.यह संघ वर्तमान में 26 केन्टनों से मिलकर बना है। सत्य /असत्य

2.स्विट्जरलैण्ड संघ नहीं है. सत्य /असत्य

3.संविधान द्वारा केन्द्र व केन्टनों के बीच शक्तियों का स्पष्ट विभाजन किया गया है। सत्य /असत्य

4.संघात्मक व्यवस्था में केन्द्र व इकाइयों(राज्यों) के बीच शक्ति विभाजन को सुदृढ़ करने के लिए तथा उनके बीच विवादों का अंतिम निर्णय करने के लिए तथा संविधान की व्याख्या करने के लिए एक स्वतंत्र, सर्वोच्च और निष्पक्ष न्यायपालिका को आवश्यक नहीं माना गया है। सत्य /असत्य

13.5 सारांश

स्विट्जरलैण्ड का संविधान प्राचीन होने के साथ-साथ समयानुकूल भी है। यह लिखित व निर्मित संविधान है। जो संघवाद व लोकतंत्र की स्थापना करता है। संविधान में राजनीतिक व्यवस्था के साथ-साथ उद्देश्यों, भाषाओं , सेना, शिक्षा, पर्यावरण व सामाजिक सुरक्षा के बारे में भी विस्तार से वर्णन है। संविधान कानून का शासन, मूल अधिकार, केन्टनों की स्थिति, प्रत्यक्ष लोकतंत्र, द्विसदनात्मक संसद, बहुल कार्यपालिका, सामूहिक सत्ता व गणतंत्र परंपरा की स्थापना करता है परिणाम स्वरूप सुसंचालित व्यवस्था की स्थापना होती है।

आप समझ ही गए होंगे कि स्विट्जरलैण्ड एक संघीय व्यवस्था वाला देश है जिनका आरंभ कुछ स्वतंत्र केन्टनों ने सुरक्षा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया था। यह संघ वर्तमान में 26 केन्टनों से मिलकर बना है। वर्तमान संविधान के अनुसार इस संघ का उद्देश्य लोगों व देश की रक्षा तथा नागरिकों को समान अवसर व टिकाऊ विकास देना व उनका कल्याण करना है। साथ ही प्रकृति की रक्षा व अंतर्राष्ट्रीय शांति को बढ़ावा देना भी उद्देश्य है।

स्विस संघ लिखित व कठोर संविधान की सर्वोच्चता, शक्तियों के विभाजन, द्वैध शासन, केन्टनों की समानता व महत्वपूर्ण स्थिति में विश्वास रखता है। हालांकि आधुनिक समय में यहाँ केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति स्पष्टतः दिखलाई पड़ती है परन्तु वास्तविकता में यह एक संघ ही है।

13.6 शब्दावलीः

द्विसदनात्मक	:	दो सदन वाली
गणतंत्र	:	निर्वाचित प्रधान
आरंभक	:	आरंभ करने वाला
केन्टन	;	राज्य
द्वैध शासन	-	दोहरा शासन- केंद्र और राज्य दोनों स्तर पर शासन
केन्द्रीकरण	-	केन्द्र का मजबूत होना

13.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1: 1. सत्य 2. सत्य 3.असत्य 4.सत्य 5.अ सत्य

2: 1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य

13.8 संदर्भ ग्रन्थ

Websites :

1.ILL-switzerand constitution

2.http://www.servat.unibe.in/ial/5200000=html, accessed on 4-6-11

3.सिंह, वीरकेश्वर प्रसाद (1993): स्विट्जरलैण्ड का संविधान, ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली

4.चड्डा, पी. के. (2001), प्रमुख राजनीति व्यवस्थायें, युनिवर्सिटी बुक प्रकाशन, जयपुर

5.शर्मा, प्रभुदत्त तथा शीलकांत असोपा (1982) आधुनिक प्रमुख संविधान, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

6.कटारिया, सुरेन्द्र (2008), तुलनात्मक लोक प्रशासन, आर बी एस ए पब्लिशर्स, जयपुर

7.पार्थसारथी, जी.: आधुनिक संविधान, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ

8.शर्मा, प्रभुदत्तः संविधानों की दुनिया, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर-2

13.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.अखिल, रीड अमर; 'दी बिल आफ राइटस् क्रीयेशन एण्ड रीकन्सट्रक्शन' (2000), येल यूनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन

2.जस्टिस, लर्मिनगार्ग; 'दी यूनाइटेड स्टेट्स कान्सटीट्यूशन; 'वाट इट सेज, वाट इट मीन्स' (2005), आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

13.10 निबंधात्मक प्रश्नः

1. स्विट्जरलैण्ड के संविधान की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए?

2. प्रत्यक्ष प्रजातंत्र से आप क्या समझते हैं? स्विट्जरलैण्ड में इसके स्वरुप की व्याख्या कीजिए।

3. स्विस संविधान प्राचीन होने के साथ-साथ समयानुकूल कैसे हैं?

4. स्विट्जरलैण्ड के संघात्मक शासन की विशेषताओं का अलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

इकाई-14 स्विट्ज़रलैंड का संविधान-II: संघीय शासन-संघीय सभा, संघीय परिषद्

इकाई की संरचना

14.0 प्रस्तावना

14.1 उद्देश्य

14.2 संघीय सभा

14.2.1 संघीय सभा की विशेषताएँ

14.2.2 संघीय सभा का संगठन

14.2.3 संघीय सभा की शक्तियाँ

14.2.3.1 व्यवस्थापन संबंधी शक्तियाँ

14.2.3.2 संविधान संशोधन संबंधी शक्तियाँ

14.2.3.3 वित्तीय शक्तियाँ

14.2.3.4 कार्यपालिका शक्तियाँ

14.2.3.5 न्यायिक शक्तियाँ

14.3 संघीय परिषद

14.3.1संघीय परिषद की विशेषताएँ

14.3.2संघीय परिषद की शक्तियाँ

14.4 सारांश

14.5 शब्दावली

14.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14.7 संदर्भ ग्रन्थ

14.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

14.9 निबंधात्मक प्रश्न

14.0 प्रस्तावना

स्विट्जरलैण्ड की राजनीतिक व्यवस्था अनूठी है तथा इसे विश्व के श्रेष्ठतम लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में गिना जाता है। स्विस संघीय सरकार जिस प्रकार कार्य करती है वह शासन का प्रकार विश्व में कहीं और दिखाई नहीं देता है। संघीय कार्यपालिका में कई दलों के सदस्य साथ-साथ मिलकर कार्य करते हैं तथा अलग-अलग दलों के होने के बावजूद वे एक सफल और बेहतरीन शासन व्यवस्था प्रदान करते हैं। इसी प्रकार संघीय व्यवस्थापिका में भी सभी दलों के सदस्य सहयोगपूर्ण रवैया अपनाते हैं और अनुशासनात्मक तरीके से कार्यों को पूर्ण करते हैं। उनका रवैया व्यावहारिक व पेशेवर होता है।

स्विस संघीय व्यवस्था को पढ़ना राजनीति शास्त्र के सभी विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि यह विश्व की श्रेष्ठतम राजनीतिक व्यवस्था है तथा इसके जैसी दूसरी कोई व्यवस्था विश्व में नहीं है। भारतीयों के लिए इस व्यवस्था का अध्ययन इसलिए भी आवश्यक है कि हमारी राजनीतिक व्यवस्था में दलीय द्वेष, अनुशासनहीनता व भ्रष्टाचार का बोलबाला है जबकि स्विस व्यवस्था इसके बिल्कुल विपरीत है। वह प्रत्यक्ष प्रजातंत्र व सहवर्तनमूलक राजनीति को अपनाये हुए एक श्रेष्ठ राजनीति व्यवस्था को प्रस्तुत करती है।

14.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से हम --

1. संघीय सभा के अर्थ को जान सकेंगे।

3.संघीय सभा की विशेषताओं को जान सकेंगे।

4. संघीय परिषद के अर्थ को जान सकेंगे।

5.संघीय परिषद की शक्तियों को जान सकेंगे।

14.2 संघीय सभा

वर्तमान संविधान के अनुच्छेद 143 से 173 तक संघीय सभा का वर्णन है। जिसमें उसका संगठन तथा शक्तियाँ सम्मिलित हैं।

14.2.1 संघीय सभा की विशेषताएँ

1.**द्विसदनीय:**

विश्व के अन्य संघीय लोकतांत्रिक देशों की ही तरह स्विटरजरलैण्ड की संघीय व्यवस्थापिका के दो सदन हैं। एक है नेशनल काउन्सिल तो दूसरा है काउन्सिल ऑफ स्टेट्स। नेशनल काउन्सिल में 200 सदस्य होते हैं तथा काउन्सिल ऑफ स्टेट्स में 46 सदस्य होते हैं। नेशनल काउन्सिल को प्रतिनिधि सदन तथा हाउस ऑफ रिप्रेजेन्टेटिवस् भी कहते हैं तथा काउन्सिल ऑफ स्टेट्स का सीनेट भी कहते हैं। सीनेट में हर पूर्ण केन्टन के दो तथा हर अर्द्ध केन्टन का एक प्रतिनिधि होते हैं। प्रतिनिधि सभा में केन्टनों का प्रतिनिधित्व जनसंख्या के आधार पर होता है। दोनों के लिए कार्यकाल चार वर्ष का है।

2.समानपदीय सदन:

दोनों ही सदनों के अधिकार व शक्तियाँ बराबर हैं। प्रायः दूसरे लोकतांत्रिक देशों में व्यवस्थापिका का एक सदन ज्यादा शक्तिशाली होता है। उदाहरण के लिए भारत में निचला सदन जिसे लोक सभा कहते हैं राज्य सभा की तुलना में अधिक शक्तिशाली है। संयुक्त राज्य अमेरिका में सीनेट, प्रतिनिधि सभा की तुलना में अधिक शक्तिशाली है। परन्तु स्विट्जरलैण्ड में दोनों सदन समान हैं। नवीन संविधान का अनुच्छेद 148 दोनों समानता की घोषणा करता है। साधारणतया दोनों सदन अलग-अलग बैठक कर विचार विमर्श करते हैं तथा किसी भी कानून के लिए दोनों की सहमति आवश्यक है। परन्तु किन्हीं विशिष्ट परिस्थितियों में सामूहिक बैठक का भी प्रावधान है।

3.महत्वपूर्ण स्थिति:

स्विट्जरलैण्ड की संसद की स्थिति अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि वहाँ अमरीकी राष्ट्रपति की तरह कार्यपालिका अध्यक्ष के पास निषेधाधिकार नहीं है। ना ही अमेरिका की तरह स्विस न्यायपालिका के पास संघीय कानूनों पर न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति है। बल्कि संघीय व्यवस्थापिका के द्वारा ही कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के सदस्यों का चुनाव किया जाता है। आप समझ ही गये होंगे कि व्यवस्थापिका की स्थिति कार्यपालिका व न्यायपालिका की तुलना में उच्च है। उस पर यदि कोई प्रतिबंध है तो वह जनता व केन्टनों का है। दूसरे शब्दों में स्विस व्यवस्थापिका संघ सरकार का सर्वोच्च अंग है परन्तु यह ब्रिटिश लोक सदन की तरह सर्व प्रभुत्व संपन्न नहीं है।

4.स्पष्ट शक्तियाँ: नवीन संविधान में संघीय व्यवस्थापिका की शक्तियों का स्पष्ट वर्णन है। वह विदेश संबंध व संधियों; संघीय वित्त; संघीय सरकार व न्यायपालिका के सदस्यों के चुनाव व पर्यवेक्षण; संघ केन्टन संबंधों; देश की बाह्य व आंतरिक सुरक्षा आदि के लिए जिम्मेदार है।

5.पेशेवर एवं व्यावहारिक रवैया:

स्विट्जरलैण्ड की व्यवस्थापिका बेहतरीन ढंग से संचालित की जाती है। व्यवस्थापिका के सदस्य दलीय दृष्टिकोण नहीं रखते। वे दलीय आधार पर बैठते भी नहीं बल्कि केन्टनों के आधार पर बैठते हैं। उनका व्यवहार पेशेवर, संतुलित, व्यावहारिक व अनुशासित होता है तथा आक्रामकता का नितान्त अभाव होता है। जैसे विरोध प्रदर्शन हम भारत की संसद में देखते हैं वैसे स्विस संसद में कभी नहीं दिखाई देते। लॉर्ड ब्राइस ने इसे विश्व की सबसे पेशेवर व्यवस्थापिका कहा है। यहाँ निर्णय करते हुए सभी से विचार विमर्श किया जाता है।

6.विविध भाषाओं का प्रयोग:

जैसा कि आप जानते हैं कि स्विट्जरलैण्ड में कई भाषायें बोली जाती हैं अतः वहाँ चार भाषाओं को राजकीय मान्यता प्राप्त है; जर्मन, फ्रेंच, इटेलियन तथा रोमनाश और इनमें से किसी भी भाषा का प्रयोग सांसद कर सकते हैं। संसदीय कार्यवाही का प्रकाशन भी सभी भाषाओं में किया जाता है।

7.कोई विपक्ष नहीं:

भारत व अमेरिका जैसे संघात्मक लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले देशों में व्यवस्थापिका में विपक्षी दल होते हैं। सत्ता पक्ष तथा विपक्ष को पहचानना अत्यन्त सुगम होता है। परन्तु स्विस व्यवस्था में सहवर्तनमूलक राजनीति है जिसमें हर मुद्दे पर सभी की सहमति प्राप्त करने का प्रयास होता है तथा कोई स्पष्ट विपक्ष नहीं होता है। सभी दल व सदस्य गुटों में कार्य करते हैं जिससे छोटे दलों को भी महत्वपूर्ण भूमिका प्राप्त होती है।

उपरोक्त से आप समझ गये होंगे कि स्विस व्यवस्थापिका अन्य देशों की व्यवस्थापिका से बेहतर है।

14.2.2 संघीय सभा का संगठन

संघीय सभा के दो सदन हैं राष्ट्रीय हाउस ऑफ रिप्रेजेन्टेटिव (प्रतिनिध सदन) तथा सीनेट।

प्रतिनिधि सदन:

प्रतिनिधि सदन जिसे अंग्रेजी में हाउस ऑफ रिप्रेजेन्टेटिव कहते हैं को राष्ट्रीय परिषद या नेशनल काउन्सिल भी कहते हैं। यह भारत की लोक सभा की तरह ही है।

प्रतिनिधि सदन की रचना:

प्रतिनिधि सदन में वर्तमान में 200 सदस्य होते हैं जो चार वर्ष के लिए चुने जाते हैं। चुनाव जनता द्वारा सीधे आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा किया जाता है। अधिक जनसंख्या वाले केन्टनों से अधिक प्रतिनिधि तथा कम जनसंख्या वाले केन्टनों से कम प्रतिनिधि आते हैं परन्तु हर केन्टन से कम से कम एक प्रतिनिधि अवश्य होता है। सदन की गणपूर्ति 101 सदस्यों से होती है तथा निर्णय बहुमत से। सदस्यों को वेतन नहीं मिलता परन्तु भत्ते और मार्ग व्यय मिलते हैं। सदस्य आजीविका के लिए अन्य रोजगार करते हैं। कोई भी वयस्क नागरिक चुनाव में खड़ा हो सकता है तथा सभी वयस्क नागरिक मतदान में भाग लेते हैं। सामान्यतः सदन को समय से पहले विघटित नहीं किया जा सकता परन्तु पूरे संविधान का यदि पुर्ननिर्माण हो रहा हो तो ऐसा संभव है।

सत्र व अधिकारी:

सदन का सत्र साल में कम से कम एक बार होना आवश्यक है। वास्तविकता में साल में चार सत्र होते हैं। यदि 25 प्रतिशत सदस्य मांग करें तो विशेष सत्र बुलाया जाता है। सदन अपने बीच से अपना अध्यक्ष व उपाध्यक्ष चुनता है। अध्यक्ष के पास निर्णायक मत होता है। यह सम्मान का पद है तथा अवैतनिक है। दोनों सदनों की संयुक्त बैठक की अध्यक्षता प्रतिनिधि सदन का अध्यक्ष करता है। इस सदन की बैठकें सभी के लिए खुली होती हैं।

सीनेट:

सीनेट विश्व के अन्य ऊपरी सदनों की तुलना में शक्तिशाली है क्योंकि वह प्रतिनिधि सदन से समान शक्तियाँ प्राप्त हैं। इसे सीनेट के अतिरिक्त राज्यों का सदन भी कहते हैं क्योंकि इसमें सभी पूर्ण केन्टन (राज्य) 2 तथा सभी अर्द्ध केन्टन एक सदस्य भेजते हैं।

सीनेट की रचना:

सीनेट में कुल 46 सदस्य होते हैं जिनके चुनाव की पद्धति सभी केन्टन स्वयं ही तय करते हैं। अतः कहीं सीधा निर्वाचन होता है तो कहीं अप्रत्यक्ष। सदस्य कितने साल के लिए चुने जायेंगे यह भी केन्टन ही तय करते हैं। कुछ केन्टनों में पुर्नवापसी (री कॉल) की भी व्यवस्था है अतः वे अपने सांसद को वापस बुला सकते हैं।

सत्र व अधिकारी:

साल में कम से कम एक सत्र बुलाना अनिवार्य है परन्तु सामान्यतः चार सत्र होते हैं। यदि 25 प्रतिशत सांसद चाहे तो विशेष सत्र भी बुलाया जाता है। गणपूर्ति 24 है तथा निर्णय बहुमत से लिए जाते हैं। सदन अपने अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का चुनाव एक साल के लिए करता है। किसी को भी लगातार दो बार नहीं चुना जा सकता है। अध्यक्ष व उपाध्यक्ष एक ही केन्टन से नहीं हो सकते हैं।

14.2.3 संघीय सभा की शक्तियाँ:

संघीय सभा संघीय कार्यपालिका व संघीय न्यायपालिका की तुलना में सशक्त है तथा उसके पास अनेक शक्तियाँ व कार्य हैं।

14.2.3.1 व्यवस्थापन संबंधी शक्तियाँ

जैसा कि आप जानते हैं संघीय सभा स्विस संघीय व्यवस्थापिका को कहते हैं। हर लोकतांत्रिक देश में व्यवस्थापिका का मूल कार्य व्यवस्थापन का ही होता है। स्विस संघीय व्यवस्थापिका अर्थात संघीय सभा का भी सबसे महत्वपूर्ण कार्य व्यवस्थापन ही है। वह सभी संघीय विषयों पर कानून निर्माण कर सकती है। उसके द्वारा बनाये गये कानूनों पर कार्यपालिका के पास निषेधाधिकार नहीं है और ना ही उन कानूनों को न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है। परन्तु यदि पचास हजार नागरिक मॉग करें तो कानूनों को जनमत संग्रह के लिए भेजा जाना आवश्यक है। जनता को कानून निर्माण की शुरूआत करने का भी अधिकार है। इसे आरंभन कहते हैं तथा इसके द्वारा जनता व्यवस्थापिका को कोई कानून बनाने के लिए बाध्य कर सकती है। आरंभन के लिए एक लाख नागरिकों के द्वारा माँग करना आवश्यक है। आलोचकों का मानना है कि जनमत संग्रह व आरंभन की इन प्रक्रियाओं के द्वारा व्यवस्थापिका की स्थिति कमजोर

होती है परन्तु वस्तुतः इन प्रक्रियाओं द्वारा स्विस लोकतंत्र बेहतर बनता है तथा लोगों को राजनीतिक भागीदारिता के अधिक अवसर मिलते हैं। वास्तविकता मे अधिकतर कानून वही बनते हैं जिन्हें व्यवस्थापिका प्रारम्भ करती है।

14.2.3.2 संविधान संशोधन संबंधी शक्तिया

संघीय सभा के पास संविधान संशोधन प्रारम्भ करने की शक्ति है। इस हेतु दोनों सदन प्रस्ताव पारित करते हैं फिर उस पर जनमत संग्रह करवाया जाता है तथा जनता के बहुमत की सहमति मिलने पर संविधान संशोधन होता है। यदि संशोधन का प्रारम्भ जनता द्वारा किया गया हो तो व्यवस्थापिका उसका अच्छा स्वरूप बनाकर प्रस्तुत करती है।

14.2.3.3 वित्तीय शक्तियाँ:

संघीय सभा संघ के वार्षिक बजट पर भी विचार करती है और उसे पारित करती है। वह संघीय सरकार द्वारा लिये गये सार्वजनिक ऋणों की परिपुष्टि करती है। वह केन्टनों के लेखों की स्वीकृति करती है और उनको ऋण लेने की अनुमति देती है।

14.2.3.4 कार्यपालिका शक्तियाँ:

संघीय सभा को महत्वपूर्ण कार्यपालिका शक्तियाँ प्राप्त हैं

(1) दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में वह संघीय कार्यपालिका के सातों सदस्यों का निर्वाचन तथा उनके अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का भी निर्वाचन करती है। वह संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों, संघीय बीमा निकाय के सदस्यों, सर्वोच्च सेनापति, असाधारण जन अभियोजक व चांसलर का भी निर्वाचन करती है।

(2) संघीय सभा संघ की सशस्त्र सेनाओं पर भी नियंत्रण रखती है।

(3) वह युद्ध व शान्ति की घोषणा करती है।

(4) वह विदेशों से की गई संधियों पर भी अपनी स्वीकृति देती है और केन्टनों की परस्पर अथवा पड़ौसी राज्यों के साथ की गई संधियों की भी परिपुष्टि करती है।

(5) वह केन्टनों के क्षेत्र तथा उनके संविधानों की गारण्टी करती है।

(6) यदि कोई केन्टन संघीय कानूनों के क्रियान्वयन में रूकावट डालता है तो वह निश्चित करती है कि क्या कार्यवाही की जाए।

(7) वह लोकसेवकों के क्रियाकलापों का निरीक्षण करती है तथा वेतन-भत्तों का निर्धारण करती है।

(8) वह विदेश सम्बन्धों का निर्धारण करती है।

(9) वह आन्तरिक सुरक्षा स्थापित करती है।

(10) वह कार्यपालिका को आदेश दे सकती है तथा प्रश्न पूछकर सूचना प्राप्त कर सकती है। वह कार्यपालिका के कार्यों का समर्थन या विरोध कर उस पर नियंत्रण रखती है।

14.2.3.5 न्यायिक शक्तियाँ

संघीय सभा के पास इस सम्बन्ध में निम्न शक्तियाँ हैं :

(1) वह संघीय न्यायाधीशों का चुनाव करती है।

(2) वह संघीय न्यायालय का निरीक्षण तथा निर्देशन करती है।

(3) वह न्यायिक संगठन संबंधी कानून बनाती है।

(4) संघीय न्यायालय इसके समक्ष अपनी वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करता है।

(5) विभिन्न संघीय अधिकारियों के बीच क्षेत्राधिकार के प्रश्न संबंधी मतभेदों पर निर्णय संघीय सभा करती है।

(6) वह कुछ मामलों में संघीय कर्मचारियों के विरूद्ध न्यायिक कार्यवाही कर सकती है।

(7) संघीय न्यायालय द्वारा दण्डित तथा सैनिक शासन के अन्तर्गत मृत्युदण्ड प्राप्त अभियुक्त को क्षमा प्रदान करने का अधिकार भी संघीय सभा को है।

14.3 संघीय परिषद

स्विस कार्यपालिका को संघीय परिषद कहते हैं। नवीन संविधान के अनुच्छेद 174 से 187 तक में इसके संगठन व शक्तियों आदि का वर्णन है। यह अपने आप में विश्व में अनूठी है।

14.3.1 संघीय परिषद की विशेषताएँ

संघीय परिषद एक अद्वितीय कार्यपालिका है जो अत्यन्त सफल है। इसकी निम्न विशेषताएं हैं-

1 बहुल:

स्विस कार्यपालिका विश्व की अन्य कार्यपालिकाओं से अलग है क्योंकि इसमें सात सदस्य होते हैं जिनका चुनाव संघीय सभा के दोनों सदन करते हैं। इन सातों सदस्यों की शक्तियाँ एक समान होती हैं अतः इसे बहुल या सामूहिक कार्यपालिका कहते हैं। एकल कार्यपालिका ना अपनाने का मूल कारण किसी व्यक्ति को अत्यधिक शक्तिशाली ना बनने देना है। प्रत्येक सदस्य एक प्रशासनिक विभाग का प्रमुख होता है साथ ही उसके पास एक अन्य विभाग का भी दायित्व होता है जिसका वहन वह उस विभाग के मंत्री की अनुपस्थिति में करता है। बहुल कार्यपालिका को अपनाने का एक अन्य कारण यह था कि स्विस परम्परा में परिषदों की पद्धति बैठी हुई है और उनकी जनतांत्रिक भावना व्यक्तिगत प्रधानता की विरोधी है।

2. अदलीय प्रकृति:

जैसा कि आप समझ ही गये हैं कि संघीय परिषद के सात सदस्य संघीय सभा द्वारा चुने जाते हैं। विश्व के अन्य प्रजातांत्रिक देशों में एक ही राजनीतिक दल के सदस्य कार्यपालिका का निर्माण करते हैं। यदि वे ऐसा करने की स्थिति में नहीं होते तो अन्य दलों के सहयोग से सरकार का गठन करते हैं परन्तु सामान्यतः विपक्ष (या विरोधियों) को सरकार में सम्मिलित नहीं किया जाता। परन्तु स्विट्जरलैण्ड में कोई विपक्ष होता ही नहीं है तथा चार राजनीतिक दलों के सदस्य मिलकर सरकार बनाते हैं तो तीन राजनीतिक दलों को दो-दो पद तथा एक राजनीतिक दल को एक पद प्राप्त होता है। वे मिलजुलकर सरकार चलाते हैं उनके चुनाव में उनका दल महत्वपूर्ण ना होकर योग्यता सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है।

3. लंबा व पक्का कार्यकाल:

सभी सात कार्यपालिका सदस्यों को चार वर्ष के लिए चुना जाता है तथा उन्हें पहले पदमुक्त नहीं किया जा सकता। अगर वे अच्छा कार्य करें तो उन्हें कई बार चुना जा सकता है। कुछ ने तो 32 वर्ष तक कार्य किया। अच्छा कार्य ना करने पर दुबारा निर्वाचन नहीं होता है। इन्हें काउन्सिलर कहते हैं।

4. संसदीय व अध्यक्षीय का मिश्रण भी तथा अलग भी:

स्विस कार्यपालिका में कुछ तत्व अध्यक्षीय व्यवस्था के दिखते हैं जैसे कार्यपालिका के सदस्य व्यवस्थापिका के सदस्य नहीं होते तथा कार्यपालिका के सदस्यों का निश्चित कार्यकाल होता है। साथ ही इस व्यवस्था में कुछ तत्व संसदीय व्यवस्था के भी दिखते हैं यथा कार्यपालिका का निर्वाचन व्यवस्थापिका द्वारा तथा कार्यपालिका के सदस्यों की व्यवस्थापिका में उपस्थिति व विधेयक प्रस्तुति। परन्तु कुछ तत्व इस व्यवस्था में ऐसे भी हैं जो इसे अद्वितीय बना देते हैं जैसे बहुल कार्यपालिका जो कई दलों के सदस्यों से मिलकर बनती है तथा जिसमें सभी सदस्य समान होते हैं।

5. विशेषज्ञों की कार्यपालिका: कार्यपालिका के सदस्यों के चुनाव में सबसे महत्वपूर्ण तत्व उनकी योग्यता व कार्य होता है। विद्वानों ने उनकी प्रशंसा करते हुए कहा है कि वे किसी कंपनी के निदेशकों की तरह होते हैं अतः यदि वे अच्छा काम नहीं करते तो पुनः निर्वाचित नहीं होते परन्तु यदि अच्छा कार्य करते हैं तो लंबे समय तक पद संभालते हैं।

6. सामूहिकता व सहवर्तनमूलक:

सभी सात सदस्य एक ही दल के नहीं होते परन्तु मिलजुलकर निर्णय लेते हैं तथा सभी को साथ लेकर चलते हैं। जो भी निर्णय होता उसके लिए सभी समान रूप से उत्तरदाई होते हैं। यदि किसी एक का मत अलग है तो वह कह सकता है व अपना मत दर्ज करा सकता है परन्तु लागू करने में सभी सम्मिलित होते हैं।

7. प्रतिबंध:

कार्यपालिका की सदस्यता के संबंध में कुछ प्रतिबंध भी हैं जैसे दो निकट संबंधी एक ही समय में इसके सदस्य नहीं हो सकते जैसे पति-पत्नि या भाई-बहिन। एक ही केन्टन से एक से अधिक सदस्य नहीं हो सकते। संघीय परिषद के सदस्य संघ अथवा केन्टन में कोई पद धारण नहीं कर सकते ना ही व्यवसाय कर सकते हैं। यह परंपरा है कि बर्न, ज्यूरिख व वॉड से एक-एक प्रतिनिधि चुना जाता है। सामान्यतः चार सदस्य जर्मन भाषी, दो फ्रेंच भाषी व एक इटेलियन भाषी होता है। इस प्रकार प्रादेशिकता व भाषा का ध्यान रखा जाता है। 2011 में इसकी चार सदस्य महिलायें हैं तथा अध्यक्ष **व उपाध्यक्ष पद भी उन्हीं के पास हैं।**

8. अध्यक्ष व उपाध्यक्ष:

संघीय सभा के दोनों सदन अपने संयुक्त अधिवेशन में संघीय परिषद के सदस्यों में से एक वर्ष के लिए अध्यक्ष व उपाध्यक्ष चुनते हैं। अध्यक्ष ही देश का राष्ट्रपति कहलाता है। परंपरा के अनुसार यह पद संघीय परिषद के सदस्यों को बारी-बारी से वास्तविकता के आधार पर प्रदान किया जाता है तथा कोई अध्यक्ष व उपाध्यक्ष नहीं रहता। अन्य सदस्यों की तुलना में उनके पास अधिक शक्तियाँ नहीं होती। यह मात्र एक अलंकारिक उपाधि है। वह कार्यपालिका

प्रधान नहीं होता है। उसे वीटो जैसे अधिकार प्राप्त नहीं हैं। परन्तु वह बैठकों की अध्यक्षता करता है व संचालन करता है। वह औपचारिक अवसरों पर देश का प्रतिनिधित्व करता है।

अतः कहा जा सकता है कि स्विस कार्यपालिका एक अनूठी संस्था है जो अप्रत्यक्ष रूप में संसद द्वारा निर्वाचित की जाती है परन्तु इसके सदस्य संसद सदस्य नहीं रह सकते तथा इसने देश को उत्तम शासन व्यवस्था प्रदान की है।

14.3.2 संघीय परिषद की शक्तियाँ:

संघीय परिषद की निम्नलिखित शक्तियाँ हैं

1. कार्यपालिका शक्तियाँ

सर्वोच्च कार्यपालिका होने के कारण यह संघीय कानूनों व संविधान के अनुसार देश के प्रशासन का संचालन करती है। स्विस संविधान के उपबंधों, अध्यादेशों व संधियों आदि को क्रियान्वित करने का दायित्व संघीय परिषद पर है। यह विदेश संबंधों का भी संचालन करती है तथा यदि किसी केन्टन में शांति भंग हो तो स्थिति को संभालती है। यह संघ सरकार के उन कर्मचारियों की नियुक्ति करती है जो निर्वाचित नहीं होते। यह सेना पर नियंत्रण रखती है व बाह्य आक्रमण से देश की रक्षा करती है।

2. व्यवस्थापन संबंधी शक्तियाँ

संघीय परिषद के सदस्य संघीय सभा के सदस्य नहीं होते परन्तु विधि निर्माण में उनका महत्वपूर्ण योगदान होता है। वे मतदान में भाग नहीं लेते परन्तु सदन में अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं तथा विचाराधीन विषयों पर प्रस्ताव पेश कर सकते हैं। वे सदस्यों के प्रश्नों के उत्तर भी देते हैं। वे संसदीय समितियों की बैठकों में सम्मिलित होते हैं। वे अधिनियमों के मसौदे तैयार करवाते हैं व उन्हें संघीय सभा में प्रस्तुत करके पास करवाते हैं। संघीय सभा अपने कानूनों की व्याख्या अथवा स्पष्टीकरण हेतु संघीय परिषद को विनियम बनाने की शक्ति देती है। जिसे विधि निर्माण का अत्यन्त महत्वपूर्ण हिस्सा माना जाता है।

3. वित्तीय शक्तियाँ:

संघीय परिषद राजस्व का भी प्रबन्ध करती है। वार्षिक बजट तैयार करना तथा उसे संघीय सभा से पारित कराना इसी का कार्य है।

4. न्यायिक शक्तियाँ:

यह कुछ न्यायिक कार्य भी करती है यथा प्रशासनिक अभियोग, जो संघीय पदाधिकारियों के सार्वजनिक कार्यों से उत्पन्न होते हैं, के संबंध में निर्णय देना। वह अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों, संधियों, रेलवे प्रशासन या केन्टनों द्वारा संचालित शिक्षा संस्थाओं के संबंध में भी अपील सुनती है। अतः कहा जा सकता है कि संघीय परिषद एक अत्यन्त महत्वपूर्ण व अनूठी संस्था है।

अभ्यास प्रश्न

१.संघीय परिषद के सदस्यों में से दो वर्ष के लिए अध्यक्ष व उपाध्यक्ष चुनते हैं।सत्य /असत्य

२.स्विस कार्यपालिका ,एकल कार्यपालिका है . सत्य /असत्य

३.सीनेट में 46 सदस्य हैं . सत्य /असत्य

४.वार्षिक बजट पर विचार और उसे पारित करने का कार्य संघीय परिषद करती है. सत्य /असत्य

५.संघीय परिषद में सदस्य की संख्या कितनी होती है.

६.संघीय परिषद के सदस्य एक ही दल से होते हैं. सत्य /असत्य

14.4 सारांश

स्विस संघीय सभा स्विट्जरलैण्ड की व्यवस्थापिका है जो द्विसदनीय है परन्तु दोनों सदन समानपदीय हैं। उसे स्विस व्यवस्था में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है। वह अत्यन्त पेशेवर एवं व्यावहारिक ढंग से अपने कार्य संपादित करती है। स्विस व्यवस्था में कोई विपक्ष नहीं होता। संघीय सभा के दो सदन हैं-प्रतिनिधि सदन एवं सीनेट। सीनेट केन्टनों का प्रतिनिधित्व करता है व उसके 46 सदस्य हैं। प्रतिनिधि सभा जनता का प्रतिनिधित्व करता है व उसमें 200 सदस्य हैं। दोनों सदन मिलकर व्यवस्थापन, कार्यपालिका एवं न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करते हैं।

संघीय परिषद स्विस कार्यपालिका है जिसमें सात सदस्य होते हैं। यह बहुल, अदलीय प्रवृत्ति की है तथा इसका कार्यकाल निश्चित होता है। यहॉं चुने जाने में योग्यता अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है तथा यह सामूहिकता व सहवर्तनमूलकता के आधार पर कार्य करती है। संघीय परिषद व्यवस्थापन, प्रशासन, एवं न्यायिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

14.5 शब्दावली

द्विसदनीय-दो सदन वाली

समानपदीय-जहाँ दोनों सदनों की शक्तियाँ बराबर हों

गणपूर्ति-कार्य करने के लिए न्यूनतम संख्या

सीनेट-उच्च सदन

प्रतिनिधि सभा-निम्न सदन

संघीय सभा-स्विस संसद

संघीय परिषद-स्विस कार्यपालिका

14.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

१.असत्य २.असत्य ३.सत्य ४.असत्य ५. ७ ६.असत्य

14.7 संदर्भ ग्रन्थ

(1) स्विस फेडरल कॉन्सटिट्यूशन-विकीपीडिया

(2) पोलिटिक्स ऑफ स्विट्जरलैण्ड-विकीपीडिया

(3) सिंह, वीरकेश्वर प्रसाद, स्विट्जरलैण्ड का संविधान, ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली।

(4) चढ्ढा, पी.के, प्रमुख राजनीतिक व्यवस्थायें, यूनिवर्सिटी बुक, जयपुर।

(5) घई, के.के. मेजर गवर्नमेन्ट, कल्याणी, नई दिल्ली।

14.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.अखिल, रीड अमर; 'दी बिल आफ राइटस् क्रीयेशन एण्ड रीकन्सट्रक्शन' (2000), येल यूनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन

2.जस्टिस, लर्मिनगार्ग; 'दी यूनाइटेड स्टेट्स कान्सटीट्यूशन; 'वाट इट सेज, वाट इट मीन्स' (2005), आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

14.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. स्विट्जरलैण्ड की संघीय सभा की विशेषताओं व शक्तियों पर प्रकाश डालिए?

2. स्विट्जरलैण्ड की संघीय परिषद की विशेषताओं व शक्तियों को बताइये?

3. स्विस कार्यपालिका को विशेषज्ञों की कार्यपालिका क्यों कहते हैं?

इकाई-15 चीन का संविधान: संविधान की मूलभूत विशेषताएं, राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस, कार्यपालिका, न्यायपालिका, चीन का साम्यवादी दल

इकाई की संरचना

15.0 प्रस्तावना

15.1 उद्देश्य

15.2 ऐतिहासिक पृष्टभूमि

15.3 संविधान की मूलभूत विशेषताएँ

15.4 राष्ट्रीय जनवादी कॉग्रेस

15.5 न्यायपालिका, कार्यपालिका

15.6 चीन का साम्यवादी दल

15.7 सारांश

15.8 शब्दावली

15.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

15.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

15.11 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

15.12 निबंधात्मक प्रश्न

15.0 प्रस्तावना

जैसा कि हम चीन के शासन की जटिलताओं को गहराई से समझने से पहले , इसकी बुनियादी बातों को समझें। एक पहेली की कल्पना करें, और प्रत्येक भाग द्वारा चीन को कैसे चलाया जाता है इसके एक महत्वपूर्ण पहलू का प्रतिनिधित्व करता है। सबसे पहले, हमारे पास नियम पुस्तिका की तरह "संविधान" है जो खेल की दिशा तय करता है। यह चीन की मान्यताओं, नागरिकों के अधिकारों और देश को कैसे शासित किया जाना चाहिए, इसके बारे में बात करता है।

अब, लोगों द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों के एक समूह "नेशनल पीपुल्स कांग्रेस (एनपीसी)" से मिलें। वे निर्णय लेने वालों की तरह हैं, जो देश के लिए महत्वपूर्ण चीजों पर चर्चा और निर्णय लेते हैं। यह कुछ हद तक एक बड़ी बैठक की तरह है जहां वे योजना बनाते हैं कि क्या किया जाना चाहिए।

फिर, कर्ता-धर्ता की तरह "कार्यकारी" भी है। "स्टेट काउंसिल" "प्रीमियर" के नेतृत्व वाली टीम है, जो एनपीसी द्वारा बनाई गई योजनाओं के अनुसार काम करवाती है। वे कानूनों को लागू करने और यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार हैं कि सब कुछ सुचारू रूप से चले।

अब, एक अदालत कक्ष की कल्पना करें - वह "न्यायपालिका" है। यहां, "सुप्रीम पीपुल्स कोर्ट" रेफरी की तरह है, जो यह सुनिश्चित करता है कि हर कोई निष्पक्ष खेलें और न्याय मिले। भ्रष्टाचार के मामलों को संभालने वाला एक समूह भी है, जो यह सुनिश्चित करता है कि सब कुछ साफ-सुथरा हो।

अंततः, पृष्ठभूमि में एक बड़ा खिलाड़ी है - "चीन की कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीसी)।" उन्हें दीर्घकालिक योजनाकारों के रूप में देखें। वे 1921 से चीन के मार्ग को आकार दे रहे हैं। उनके विचार, वे खुद को कैसे व्यवस्थित करते हैं, और निर्णयों पर उनका प्रभाव सभी बड़ी तस्वीर का हिस्सा हैं।

जैसे ही हम इस पहेली के प्रत्येक भाग की खोज शुरू करेंगे - संविधान, एनपीसी, कार्यपालिका, न्यायपालिका और सीपीसी - हमें एक स्पष्ट तस्वीर मिलेगी कि चीन कैसे शासित होता है। यह एक रहस्य को उजागर करने जैसा है, यह समझना कि देश को चलाने के लिए प्रत्येक भाग एक साथ कैसे काम करता है।

15.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के बाद आप -

1.चीनी संविधान की विशेषताओं को समझ पायेंगें।

2.राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की शक्तियों एवं कार्यो का विश्लेषण कर सकेंगे।

3.जनवादी चीन की कार्यपालिका की संरचना को समझ सकेंगे।

4.जनवादी चीन की न्यायिक व्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

15.2 संविधान की प्रमुख विशेषताएं

चीन की समाजवादी व्यवस्था और राजनीतिक नेतृत्व:

चीन एक समाजवादी देश के रूप में कार्य करता है और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीसी) इसकी राजनीतिक संरचना में केंद्रीय भूमिका निभाती है। संविधान समाजवादी विचारधारा की सर्वोच्चता को मान्यता देता है, सीपीसी को स्थानीय स्तर पर लाखों सदस्यों के साथ विश्व स्तर पर सबसे बड़ी राजनीतिक पार्टी के रूप में नामित करता है।

लोकतांत्रिक केन्द्रीयवाद और नेतृत्व संरचना:

चीन में राजनीतिक व्यवस्था लोकतांत्रिक केंद्रवाद के सिद्धांतों पर कार्य करती है, जहां शीर्ष नेता अंतिम शक्ति का प्रयोग करते हैं। हर पांच साल में आयोजित होने वाली नेशनल पार्टी कांग्रेस (एनपीसी) में केंद्रीय समिति, पोलित ब्यूरो और प्रभावशाली स्थायी समिति का चयन होता है, जो पार्टी नेतृत्व के भीतर शक्ति को मजबूत करती है।

प्रस्तावना और विदेशी संबंध सिद्धांत:

संविधान की प्रस्तावना मार्क्सवाद, लेनिनवाद और माओ की शिक्षाओं के महत्व को रेखांकित करती है। यह "सर्वहारा वर्ग की तानाशाही" से "पीपुल्स डेमोक्रेटिक तानाशाही" में परिवर्तित हो गया है। ताइवान को चीन का अभिन्न अंग मानते हुए संविधान इसकी मुक्ति की जिम्मेदारी चीनी लोगों पर डालता है। विदेशी संबंध सिद्धांतों में क्षेत्रीय अखंडता, गैर-आक्रामकता, गैर-हस्तक्षेप, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व शामिल हैं।

संविधान की प्रकृति एवं एकात्मक राज्य संरचना:

चीन का संविधान कठोरता और लचीलेपन के बीच संतुलन बनाता है, जो पूर्व सोवियत संघ के संविधान से मिलता जुलता है। पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना एक एकात्मक बहुराष्ट्रीय राज्य के रूप में स्थापित है, जिसमें एक मजबूत केंद्र सरकार पर जोर दिया गया है। नीति निर्माण में जनता की भागीदारी को प्रोत्साहित करने के लिए विकेंद्रीकरण की शुरुआत की गई है।

व्यवहार में लोकतांत्रिक केन्द्रीयवाद:

लोकतांत्रिक केंद्रीयवाद प्रबल है, जो सरकारी संस्थानों और पार्टी संगठन के भीतर सभी स्तरों पर वैकल्पिक सिद्धांतों को पेश करता है। एक-दलीय प्रणाली कम्युनिस्ट पार्टी को राजनीतिक अधिकार के एकमात्र स्रोत के रूप में रखती है, जिसमें अन्य राजनीतिक दलों के लिए सीमित स्वतंत्रता होती है। कुछ संबद्ध युवा संगठन निर्णय लेने में भाग लेते हैं।

विधायी ढांचा और नेशनल पीपुल्स कांग्रेस (एनपीसी):

विधायी शाखा, एनपीसी, 3000 से अधिक सदस्यों के साथ एक सदनीय विधायिका के रूप में कार्य करती है। एनपीसी, सैद्धांतिक रूप से शीर्ष निर्णय लेने वाली संस्था है, जो लगभग 150 सदस्यों वाली स्थायी समिति के माध्यम से अपने कार्यों का संचालन करती है। एनपीसी सदस्य पांच साल के लिए चुने जाते हैं और बीजिंग में हर साल सत्र आयोजित किए जाते हैं।

सर्वोच्च कानून बनाने वाला प्राधिकरण और संवैधानिक संशोधन:

एनपीसी के पास कानूनों को बनाने, बदलने या निरस्त करने और राज्य की प्रशासनिक नीति को मंजूरी देने का सर्वोच्च विधायी अधिकार है। संवैधानिक संशोधनों के लिए दो-तिहाई बहुमत के समर्थन की आवश्यकता होती है, और सामान्य कानून साधारण बहुमत द्वारा बनाए जाते हैं। गौरतलब है कि कांग्रेस के कृत्यों को सुप्रीम कोर्ट में चुनौती देने का कोई प्रावधान नहीं है।

नेशनल पीपुल्स कांग्रेस (एनपीसी) की कार्यकारी शक्तियां और वैकल्पिक कार्य:

चीन में नेशनल पीपुल्स कांग्रेस (एनपीसी) को संविधान के तहत महत्वपूर्ण कार्यकारी शक्तियां और वैकल्पिक कार्य प्राप्त हैं। हालाँकि, इन शक्तियों का प्रभावी प्रयोग मुख्य रूप से इसकी स्थायी समिति को सौंपा गया है, जो एक निर्णायक निकाय के रूप में कार्य करती है।

कार्यकारी शक्तियाँ:

एनपीसी, जैसा कि संविधान में उल्लिखित है, संवैधानिक कानूनों और क़ानूनों के निष्पादन की निगरानी करने का अधिकार रखता है। यह शीर्ष सार्वजनिक अधिकारियों की नियुक्ति के माध्यम से प्रशासनिक नीतियों पर नियंत्रण रखता है, जो अपने आधिकारिक कार्यों के लिए कांग्रेस के प्रति जवाबदेह होते हैं। इसके अतिरिक्त, कांग्रेस के पास राष्ट्रीय आर्थिक नीति और वार्षिक बजट को मंजूरी देने की शक्ति है, जो अपने कार्य क्षेत्र के भीतर आवश्यक शक्तियों का प्रयोग करने के लिए पूर्ण अधिकार रखती है।

वैकल्पिक कार्य:

एनपीसी सरकारी प्राधिकार के प्रमुख पदाधिकारियों का चुनाव करके सरकारी ढांचे में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसमें गणतंत्र के राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का चुनाव, साथ ही राष्ट्रपति की सिफारिश के आधार पर राज्य परिषद के प्रधान मंत्री की नियुक्ति भी शामिल है। अन्य मंत्रियों को भी प्रधान मंत्री की सलाह पर नियुक्त किया जाता है, और कांग्रेस मंत्रियों को हटाने की शक्ति रखती है। इसके अलावा, एनपीसी के पास सुप्रीम कोर्ट के अध्यक्ष और सुप्रीम प्रोक्यूरेट के मुख्य प्रोक्यूरेटर को नियुक्त करने या हटाने का अधिकार है।

स्थायी समिति की भूमिका:

एनपीसी को इन शक्तियों का प्रयोग करने के लिए संवैधानिक रूप से अधिकृत होने के बावजूद, व्यवहार में, इसकी भूमिका कुछ हद तक कम है। सीमित अवधि के लिए वर्ष में एक बार होने वाले नियमित सत्रों की कमी, कांग्रेस की संयमित गतिविधि में योगदान करती है। इसके बजाय, एनपीसी की स्थायी समिति कांग्रेस की कई शक्तियों को क्रियान्वित करने की जिम्मेदारी लेती है।

नेशनल पीपुल्स कांग्रेस की स्थायी समिति:

स्थायी समिति एनपीसी के भीतर एक महत्वपूर्ण निकाय के रूप में कार्य करती है, जो विधायी और कार्यकारी कार्यों पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है। लगभग 150 सदस्यों से युक्त, यह दिन-प्रतिदिन के मामलों को संभालता है और जब पूर्ण कांग्रेस सत्र में नहीं होती है तो एनपीसी की ओर से शक्तियों का प्रयोग करता है। स्थायी समिति चीन की विधायी प्रक्रियाओं और नीतिगत निर्णयों की समग्र स्थिरता में योगदान करते हुए, अधिक निरंतर और प्रभावी शासन संरचना सुनिश्चित करती है।

चीन के प्रमुख राजनीतिक संस्थान

15.3 कार्यकारी संरचना: राज्य परिषद और नेतृत्व भूमिकाएँ:

राज्य परिषद चीन की कार्यकारी या कैबिनेट के रूप में कार्य करती है, जिसकी अध्यक्षता प्रधान मंत्री, चार उप प्रधान मंत्री और राज्य पार्षद करते हैं। संवैधानिक रूप से सरकार के मुख्य कार्यकारी अंग के रूप में नामित, सभी राज्य परिषद सदस्य कांग्रेस द्वारा चुने जाते हैं और इसके प्रति जवाबदेह होते हैं। परिषद के प्राथमिक कार्यों में कानूनों को

लागू करना, प्रशासनिक नीतियों का निर्माण और कार्यान्वयन शामिल है। राज्य परिषद के सदस्य कांग्रेस में प्रस्तावों के रूप में विधेयकों को पेश करके विधायी प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं, अंततः इन प्रस्तावों को संसदीय तर्ज पर कानून में तब्दील करते हैं।

प्रीमियर की महत्वपूर्ण भूमिका:

राज्य परिषद के भीतर प्रशासन के प्रमुख के रूप में प्रीमियर एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जो समग्र प्रशासनिक व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

राज्य के प्रमुख के रूप में राष्ट्रपति पद:

चीन में गणतंत्र के राष्ट्रपति को राज्य का प्रमुख माना जाता है। कांग्रेस द्वारा पांच साल के कार्यकाल के लिए चुना गया राष्ट्रपति प्रशासनिक ढांचे में सबसे प्रतिष्ठित पद रखता है।

समाजवादी ढांचे में न्यायपालिका:

चीन समाजवाद के लक्ष्यों के अनुरूप एक प्रतिबद्ध न्यायपालिका रखता है। सुप्रीम पीपुल्स कोर्ट सर्वोच्च न्यायिक अंग के रूप में कार्य करता है, जबकि प्रोक्यूरेटोरेट कोर्ट विशेष रूप से अधिकारियों से जुड़े भ्रष्टाचार के मामलों से निपटता है। चीनी न्यायिक प्रणाली अर्ध-न्यायिक संस्थानों में विवादों और विवादों को निपटाने, संहिताबद्ध कानूनों की तुलना में सम्मेलनों पर अधिक निर्भर करती है।

केंद्रीय सैन्य आयोग के माध्यम से सैन्य निरीक्षण:

पार्टी और सरकार के नियंत्रण में केंद्रीय सैन्य आयोग, सेना की निगरानी सुनिश्चित करता है। सेना को कम्युनिस्ट पार्टी के रक्षक के रूप में वर्णित किया गया है।

15.4 नागरिकों के अधिकार और कर्तव्य:

अधिकार:

चीनी संविधान अपने नागरिकों को मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है। 18 वर्ष और उससे अधिक आयु के नागरिकों को वोट देने और चुनाव लड़ने का अधिकार है। अतिरिक्त अधिकारों में पत्राचार की गोपनीयता, भाषण, अभिव्यक्ति, संघ की स्वतंत्रता, सार्वजनिक बैठकें आयोजित करने का अधिकार और मांगों को व्यक्त करने के लिए हड़ताल करने का अधिकार शामिल हैं। संविधान अवैध हिरासत के खिलाफ पारिवारिक जीवन और व्यक्तिगत सुरक्षा को सुरक्षा प्रदान करता है। यह शिक्षा, सांस्कृतिक स्वतंत्रता और जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरुषों और महिलाओं की समानता के समान अधिकारों को मान्यता देता है।

कर्तव्य:

संविधान नागरिकों के कुछ न्यायसंगत कर्तव्यों को स्पष्ट रूप से रेखांकित करता है। नागरिकों को समाजवादी नेतृत्व के साथ सहयोग करना, संविधान और राज्य कानूनों का पालन करना, सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करना और कानून और व्यवस्था बनाए रखने में योगदान देना आवश्यक है। विदेशी आक्रमण से देश की रक्षा करना भी नागरिकों का निर्धारित कर्तव्य है।

15.5 चीन की न्यायपालिका प्रणाली: एक व्यापक अवलोकन

चीन की न्यायपालिका प्रणाली देश के कानूनी ढांचे का एक अभिन्न अंग है, जिसका काम न्याय सुनिश्चित करने और सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने के लिए कानूनों की व्याख्या करना और उन्हें लागू करना है। यहां इसकी प्रमुख विशेषताओं और कार्यों पर करीब से नज़र डाली गई है:

1. संरचना:

न्यायपालिका के शीर्ष पर "सुप्रीम पीपुल्स कोर्ट" है, जो अपील की सर्वोच्च अदालत के रूप में कार्य करता है। इसके नीचे प्रांतीय स्तर पर उच्च लोक अदालतें और स्थानीय स्तर पर बुनियादी लोक अदालतें हैं। यह स्तरीय संरचना विभिन्न न्यायक्षेत्रों में कानूनी मामलों को व्यवस्थित रूप से संभालने की अनुमति देती है।

2. समाजवादी आदर्शों के प्रति प्रतिबद्धता:

समाजवादी सिद्धांतों द्वारा निर्देशित, चीनी न्यायपालिका एक ऐसे ढांचे के भीतर काम करती है जो अपने निर्णयों और कार्यों को समाजवाद के व्यापक लक्ष्यों के साथ संरेखित करता है। यह वैचारिक प्रतिबद्धता कानूनी प्रणाली के भीतर कानूनों की व्याख्या और अनुप्रयोग को प्रभावित करती है।

3. प्रोक्यूरेटोरेट कोर्ट:

नियमित अदालतों के साथ मिलकर काम करना "कोर्ट ऑफ़ प्रोक्यूरेटोरेट्स" है, जो एक विशेष संस्था है जो भ्रष्टाचार के मुद्दों से निपटती है। यह संस्था सरकारी अधिकारियों और सार्वजनिक हस्तियों से जुड़े मामलों की जांच और मुकदमा चलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

4. कानूनी विशेषताएँ:

कुछ पश्चिमी देशों की कानूनी प्रणालियों के विपरीत, जो व्यवस्थित संहिताकरण पर निर्भर हैं, चीनी कानून को समान रूप से संहिताबद्ध नहीं किया गया है। इसके बजाय, कानूनी प्रणाली कानूनों, विनियमों और न्यायिक व्याख्याओं के संयोजन के माध्यम से संचालित होती है। यह विशेषता कानूनी कार्यवाही में लचीलेपन का स्तर प्रदान करती है।

5. अर्ध-न्यायिक संस्थाएँ:

चीनी न्यायपालिका केवल औपचारिक अदालत कक्षों तक ही सीमित नहीं है। कई विवाद और विवाद अर्ध-न्यायिक संस्थानों में हल हो जाते हैं, जो कानूनी प्रणाली की समग्र प्रभावशीलता में योगदान करते हैं। ये संस्थान पारंपरिक अदालती कार्यवाहियों से परे विवाद समाधान के लिए वैकल्पिक रास्ते प्रदान करते हैं।

6. सामाजिक एवं राजनीतिक संदर्भ:

चीन में, कानूनी निर्णय अलग-अलग नहीं किए जाते बल्कि व्यापक सामाजिक-राजनीतिक संदर्भ पर विचार किए जाते हैं। जबकि न्यायपालिका का लक्ष्य निष्पक्षता और निष्पक्षता है, यह देश की राजनीतिक और सामाजिक गतिशीलता के बड़े ढांचे के भीतर काम करती है।

7. व्यवस्था बनाए रखने में भूमिका:

कानूनी विवादों को सुलझाने के अलावा, चीन में न्यायपालिका प्रणाली सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कानून के शासन को कायम रखकर, यह राष्ट्र की स्थिरता और शासन में योगदान देता है।

संक्षेप में, चीन की न्यायपालिका प्रणाली कानूनी परंपराओं, वैचारिक सिद्धांतों और समाजवाद के संदर्भ में न्याय सुनिश्चित करने की प्रतिबद्धता का एक अनूठा मिश्रण दर्शाती है। इसकी स्तरीय संरचना, कानून के शासन पर जोर और व्यापक सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य पर विचार देश के समग्र शासन में इसकी बहुमुखी भूमिका में योगदान देता है।

15.6 चीन का साम्यवादी दल

गठन और प्रारंभिक वर्ष:

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (सीसीपी) की स्थापना 1921 में लेनिन की महत्वपूर्ण सहायता से हुई थी, जिन्होंने नवगठित पार्टी को संगठित करने में सहायता के लिए एक प्रतिनिधि भेजा था। चेंग तू-हिसु उद्घाटन महासचिव बने, जिससे कस्बों और शहरों में पार्टी शाखाओं की तेजी से स्थापना हुई।

वैचारिक आधार:

मार्क्स और लेनिन की शिक्षाओं में निहित, सीसीपी ने अपनी स्थापना से ही वैश्विक कम्युनिस्ट आंदोलन के साथ मजबूत संबंध विकसित किए। माओत्से तुंग ने चीनी लोगों के समाजवादी संघर्ष के दौरान पार्टी की विचारधारा को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

पार्टी संगठन और लोकतांत्रिक केन्द्रीयवाद:

सीसीपी डेमोक्रेटिक सेंट्रलिज्म के सिद्धांत पर काम करती है, जहां सभी पार्टी पदाधिकारी चुने जाते हैं। प्राथमिक इकाई जिला कांग्रेस का चुनाव करती है, जो बदले में, उच्च स्तर पर कांग्रेस के लिए प्रतिनिधियों का चुनाव करती है। पार्टी सदस्यों को नेतृत्व की आलोचना करने और नीतियों का प्रस्ताव करने का अधिकार है। हालाँकि, सख्त अनुशासन बनाए रखा जाता है, और निर्णय अक्सर उच्च-रैंकिंग वाले पार्टी नेताओं द्वारा तय किए जाते हैं।

पोलित ब्यूरो और निर्णय लेना:

पोलित ब्यूरो सर्वोपरि निर्णय लेने वाली संस्था है, जो केंद्रीय समिति के सत्र बुलाती है। इसकी स्थायी समिति, जिसमें सात सदस्य शामिल हैं, जब केंद्रीय समिति सत्र में नहीं होती है, तो पार्टी के लिए महत्वपूर्ण निर्णय लेने के लिए शक्तियों का प्रयोग करती है।

राष्ट्रीय कांग्रेस और नीति-निर्माण:

कम्युनिस्ट पार्टी की राष्ट्रीय कांग्रेस नीति-निर्माण में केंद्रीय भूमिका रखती है, जिसके सदस्य हर पांच साल में क्षेत्रीय और स्थानीय पार्टी कांग्रेस द्वारा चुने जाते हैं। केंद्रीय कार्यकारी समिति तब कांग्रेस की शक्तियों का प्रयोग करती है जब वह सत्र में नहीं होती है, और इसका पोलित ब्यूरो व्यावहारिक रूप से निर्णय लेता है क्योंकि पूर्व में शायद ही कभी बैठक होती है।

केंद्रीय समिति और नेतृत्व चयन:

राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा चुनी गई केंद्रीय समिति अपना पोलित ब्यूरो, अध्यक्ष और उपाध्यक्ष चुनती है। इस समिति की शक्तियों का प्रयोग इसके पोलित ब्यूरो द्वारा व्यवहार में किया जाता है, जो पार्टी शासन में इसकी प्रभावशाली भूमिका को उजागर करता है।

बहुदलीय संरचना:

एकल-दलीय प्रणाली के विपरीत, चीन बहु-दलीय ढाँचा अपनाता है। सीसीपी के अलावा, कुओमितांग रिवोल्यूशनरी कमेटी, डेमोक्रेटिक लीग, नेशनल कंस्ट्रक्शन एसोसिएशन और विभिन्न युवा संगठनों जैसे छोटे दलों को कार्य करने की अनुमति है। हालाँकि, सीसीपी राजनीतिक एकाधिकार बनाए रखती है, जबकि अन्य पार्टियों का अस्तित्व मात्र वैधानिक है। पार्टी संगठन सरकार के समानांतर चलता है, दोनों संस्थाओं के भीतर सार्वजनिक अधिकारियों की दोहरी भूमिकाओं पर जोर देता है।

केंद्रीय नेतृत्व का दबदबा:

पार्टी का केंद्रीय नेतृत्व सरकारी नीतियां बनाने में महत्वपूर्ण जिम्मेदारी रखता है। केवल कानूनी स्थिति ही किसी सरकारी विभाग का महत्व निर्धारित नहीं करती; पार्टी के भीतर इसकी भूमिका भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। सरकारी मामलों पर सीसीपी का प्रभाव चीन में राजनीतिक और प्रशासनिक संरचनाओं के अंतर्संबंध को रेखांकित करता है।

अभ्यास प्रश्न

1. जनवादी चीन के 1978 के संविधान में अनुच्छेदों की संख्या..... थी।

2. 1978 के संविधान में संशोधन की प्रक्रिया ..... के संविधान की तरह थी।

3. चीन के 1978 के संविधान के सन्दर्भ में निम्न लिखित में से कौन सा कथन असत्य है-

(अ) यह एक लचीला संविधान था।

(व) इस संविधान द्वारा चीन को एक संघात्मक राज्य घोषित किया गया।

(स) इस संविधान में सेना की भूमिका को उजागर किया गया।

(द) इस संविधान में जनसंप्रभुता के सिद्वान्त को मान्यता प्रदान की गई।

4. निम्नलिखित में से कौन सा कथन असत्य है-

(अ) स्थायी समिति राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्यों का चुनाव करबाती है।

(ब) स्थायी समिति संविधान की व्याख्या तथा क्रियान्वयन करती है।

(स) स्थायी समिति का कार्यकाल राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के समकक्ष होता है।

(द) स्थायी समिति की सदस्य संख्या संविधान द्वारा निर्धारित की गई है।

15.7 सारांश

चीन के शासन की मुख्य विशेषताएं, जिसमें उसका संविधान, नेशनल पीपुल्स कांग्रेस (एनपीसी), कार्यपालिका, न्यायपालिका और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीसी) शामिल हैं, सामूहिक रूप से देश के राजनीतिक परिदृश्य का एक विशिष्ट चित्र चित्रित करती हैं। संविधान, मूलभूत मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हुए, समाजवादी आदर्शों को प्रतिबिंबित करता है और नागरिकों के अधिकारों और कर्तव्यों को रेखांकित करता है। एनपीसी, विधायी शक्ति केंद्र के रूप में कार्य करते हुए, वैकल्पिक कार्यों, नीतियों को आकार देने और कानून बनाने के माध्यम से अपने अधिकार का प्रयोग करती है। राज्य परिषद द्वारा सन्निहित कार्यपालिका, प्रधान मंत्री के नेतृत्व में विधायी जनादेशों को कार्रवाई योग्य नीतियों में बदल देती है। समाजवादी सिद्धांतों के प्रति प्रतिबद्ध न्यायपालिका, एक स्तरीय प्रणाली के माध्यम से

न्याय को कायम रखती है जिसमें सुप्रीम पीपुल्स कोर्ट और प्रोक्यूरेटोरेट कोर्ट शामिल हैं। इस बीच, मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा में गहराई से निहित सीपीसी एक केंद्रीय भूमिका निभाती है, जो दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य के साथ निर्णय लेने और शासन को प्रभावित करती है। साथ में, ये घटक एक गतिशील शासन संरचना बनाते हैं जो चीन की राजनीतिक प्रणाली के वैचारिक, विधायी, कार्यकारी और पार्टी-संचालित पहलुओं को दर्शाता है।

15.8 शब्दावली

विशेषाधिकार - वे विशिष्ट अधिकार जो कुछ विशेष पदधारकों को प्रदान किए जाते हैं,सामान्य नागरिकों को नहीं। अधिकांश देशों में राष्ट्राध्यक्षों,व्यवस्थापिका के सदस्यों मंत्रियों तथा कुछ अन्य उच्च पद धारकों को कुछ विशिष्ट अधिकार प्रदान किए जाते हैं ताकि वे अपने पद से सम्बन्धित दायित्व का निर्वाह ठीक ढंग से कर सके।

पोलिट ब्यूरो- भूतपर्व सोवियत संघ,चीन तथा अन्य साम्यवादी देशों में साम्यवादी दल की सर्वोच्च कार्यकारिणी जिसमें पार्टी के शीर्ष नेता सम्मिलित होते हैं जिनके द्वारा प्रमुख निर्णय लिये जाते हैं।

साम्यवादी शासन:- वह शासन जो पूँजीवाद विरोधी है और सर्वहारा वर्ग की तानाशाही के अन्तर्गत एक शोषण विहीन समाज की स्थापना के लक्ष्य पर आधारित है। इस शासन व्यवस्था में उत्पादन के साधनों पर सामूहिक स्वामित्व की व्यवस्था होती है और सत्ता पर एक दल- साम्यवादी दल- का प्रभुत्व होता है जो मूलतः मार्क्सवाद एवं लेनिनवाद की विचारधारा से प्रेरित होती है।

जनवादी लोकतंत्र:- इस शव्द का प्रयोग सामान्यतया चीन तथा भूतपूर्व सोवयित संघ जैसे साम्यवादी व्यवस्था के संदर्भ में किया जाता रहा है। इस व्यवस्था के समर्थकों का मानना है किजहॉ पाश्चात्य लोकतंत्र में पूँजीपतियों का वर्चस्व एवं नियंत्रण होता है वहीं जनवादी लोकतंत्र सच्चा लोकतंत्र है जिसमें वहुसंख्यक मजदूरों एवं किसानों का वर्चस्व एवं नियंत्रण होता है। इसे समाजवादी लोकतंत्र भी कहा जाता है।

गणतंत्र:- वह शासन व्यवस्था जिसमें राज्य का प्रधान जनता द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीति से निर्वाचित होता है।

15.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. 60 (ब) 1975 2. (ब) 4. (द)

15.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूचना

1.भगवान, विश्नू एवं भूषण, विद्या, (2009): वर्ल्ड कॉन्स्टिट्यूसन्स, स्टर्लिग प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं. 524-550

2.खन्ना, वी0एन0 एवं आनन्द, उमा (2009): शासन एवं राजनीति का तुलनात्मक अध्ययन, आर. चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली, पृ.सं. 491-518

3.तायल, वी0वी0 (1983): शासन और राजनीतिः तुलनात्मक अध्ययन, नेशनल पव्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ.स. 525-540

4.पालेकर, एस0ए0 (2009): कम्पैरेटिव पॉलिटिक्स एण्ड गवर्मेन्ट, प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, पृ.सं. 229-237

15.11 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.पार्थसारथी, जी0, (1987): आधुनिक संविधान, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ.सं. 12-27

2.शर्मा, प्रभुदत्त, (1998): प्रमुख राजनीतिक व्यवस्थाए, कालेज वुक डिपों, जयपुर, पृ.सं. 437-447

15.12 निबंधात्मक प्रश्न

1.चीनी जनवादी गणराज्य के संविधान की ऐतिहासिक पृष्टभूमि का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

2. चीन की राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की स्थायी समिति के संगठन, कार्यो एवं भूमिका का परीक्षण कीजिए।

3. राष्ट्रीय जनवादी चीन की समिति व्यव्यस्था पर एक निबंध लिखिए।

4. जनवादी चीन की न्याय व्यवस्था की समीक्षा कीजिए।

5. चीन के प्रशासन में साम्यवादी दल के स्थान का वर्णन कीजिए।

इकाई .16 रूस के संविधान की विशेषतायें

इकाई की संरचना

16.0 प्रस्तावना

16.1 उद्देश्य

16.2 इतिहास एवं संवैधानिक विकास

16.3 1992 के रूस के संविधान में विधायिका

16.3.1 स्टेट ड्यूमा का गठन

16.4 रूस की कार्यपालिका

16.5 रूस में राजनीतिक दलों का अभुदय एवं इतिहास

16.6 सारांश

16.7 शब्दावली

16.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

16. 9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

16.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

16.0 प्रस्तावना

रूस का सम्पूर्ण इतिहास परिवर्तन का रहा है। वर्तमान रूस का जन्म 12 जून 1990 को मनाया जाता है। सोवियत संघ के विघटन के बाद अनेक नये राज्य अस्तित्व में आये। रूस भी उन्हीं राज्यों में से एक था। 1922 की संधि से जन्मा सोवियत संघ द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद बनी द्वि धुरी विश्व व्यवस्था में एक महाशक्ति था जिसने लगभग पांच दशक तक अमेरिकी खेमे को राजनैतिक ,आर्थिक, वैज्ञानिक सभी मोर्चों पर चुनौती दी। सोवियत संघ अपने वैभव काल में साम्यवादी व्यवस्था का एक आदर्श था। ये अमेरिकी नेतृत्व वाले पूँजीवादी व्यवस्था को चुनौती दे रहा था। 5 सितम्बर 1991 के सोवियत विधायिका के प्रस्ताव के द्वारा विघटन को स्वीकार कर लिया गया। 21 दिसम्बर 1991 को बारह में से 11 नवोदित राज्यों ने '' अल्मा एटा'' (कजाकिस्तान की राजधानी) में ऐतिहासिक समझौते पर हस्ताक्षर कर ''कामनवेल्थ आफ इण्डिपडेंट स्टेट (सी0आई0एस0) का गठन किया। रूस ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में पूर्व सोवियत संघ का स्थान लिया। सोवियत विघ्टन के पीछे मुख्य रूप से आर्थिक,राजनैतिक तथा तत्कालीन सोवियत राष्ट्रपति गार्वाच्योव की ''ग्लास्तनोव'' की नीति थी। जिसका अर्थ था ''खुलापन'' , संवैधानिक सुधार।

1992-93 वोरिस येल्तसिन रूस के राष्ट्रपति बने। उन्होंने 1978 में बने तत्कालीन संविधान को वर्तमान हालात में अनुपयोगी पाया। बदले हालात में बदले संविधान की आवश्यकता थी जो रूस के राष्ट्रपति को अधिक शक्ति सम्पन्न, विश्व आर्थिक व्यवस्था में अधिक सहभागी और बाजार उन्मुख हो। बोरिस येल्तसिन ने सितम्बर 1993 में संसद को भंगकर एक संविधान सभा का गठन किया जिसने शीघ्र ही संविधान का एक प्रारूप प्रस्तुत किया जिसमें राष्ट्रपति को अधिकाधिक कार्यपालकीय शक्ति प्रदान की गई। 12 दिसम्बर 1993 के जनमत संग्रह में 58.4 प्रतिशत मतों के साथ नया संविधान स्वीकृत हो गया। नवनिर्मित संविधान ने पूर्व सोवियत साम्यवादी अनावरण को छोड़कर रूस को लोकतन्त्रात्मक, गणराज्य बनाया। रूस में संधीय शासन को स्वीकार किया गया। नये संविधान में पूर्व की शक्तियों के केन्द्रीकरण के स्थान पर विधायिका,कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के पृथककरण को स्वीकार किया गया। नये संविधान में बहुदलीय व्यवस्था, अन्तर्राष्ट्रीय विधियों के प्रति प्रेम, नागरिक अधिकारों में विश्वास आदि को स्वीकार किया गया।

16.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

1. रूस के इतिहास एवं संवैधानिक विकास को जान पायेंगें।
2. रूस की विशेषताओं का विश्लेषण कर पायेंगें।
3. रूस के संविधान में वर्णित विधायिका और कार्यपालिका की स्थिति को समझ पायेंगें।
4. रूस में राजनीतिक दलों के अभुदय एवं इतिहास समझ पायेंगें।

16.2 इतिहास एवं संवैधानिक विकास

सोवियत संघ का जन्म 1922 में तीन गणराज्यों ब्राइलो रूस , यूक्रेन तथा ट्रासकाकेशिया के एक साथ मिलने से हुआ। अखिल रूसी कांग्रेस और केन्द्रीय कार्यकारिणी में इन्हें प्रतिनिधित्व की आवश्यकता थी। इसी उद्देश्य से 1923

में सोवियत संघ की केन्द्रीय कार्यकारिणी ने संविधान का प्रारूप तैयार करने हेतु संवैधानिक आयोग की नियुक्ति की। आयोग द्वारा निर्मित प्रारूप 31 जनवरी 1924 को द्वितीय सोवियत कांग्रेस द्वारा स्वीकार कर लिया गया। 1924 में उज्बेक,तुर्कमान तथा 1929 में ताजिक भी इसमें शामिल हो गये। 1935 आते-आते सोवियत संघ में समाजवाद भली-भांति स्थापित हो गया था और इसके 11 गणराज्य हो गये थे। 1935 में स्टालिन ने नये चुनौंतियों के अनुरूप नये संविधान के निर्माण के लिये नये संवैधानिक आयोग का गठन किया जिसमें 35 सदस्य थे। तत्कालिन संवैधानिक आयोग द्वारा तैयार संविधान की 6 करोड़ से अधिक प्रतियां जनता में वितरित कर तथा अनेक सभायें कर जनता की राय ली गई। आम जनता के द्वारा एक लाख से अधिक संशोधन प्रस्तावित किये गये। कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में 43 संशोधनों के साथ नये संविधान को जनवरी 1937 में स्वीकार कर लिया गया। इस नये संविधान में 13 अध्याय एवं 143 धारायें थी।

1957-58 तक खुरश्चेव की पकड़ सोवियत संघ पर मजबूत हो गई थी। सोवियत सामाजिक,आर्थिक व्यवस्था तथा विश्व राजनैतिक व्यवस्था में बड़े बदलाव आ गये थे, ऐसे में नये सवंधिान की आवश्यकता महसूस की गई। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये 1963 में 97 सदस्यों के संविधान आयोग का गठन किया । 1964 में ख्रुश्चेव के पतन के बाद ब्रेजनेव ने सत्ता की बागडोर संभाली। 1977 में नया संविधान राष्ट्रव्यापी विचार विमर्श के लिये प्रस्तुत किया गया। संशोधन के लगभग 4 लाख प्रस्ताव आये। 4 अक्टूबर 1977 को सर्वोच्च सोवियत के सातवें अधिवेशन में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की।

1977 में लागू नया संविधान स्टालिन के 1936 के संविधान से अधिक व्यापक था। इसमें 21 अध्याय, 174 अनुच्छेद है। यह मध्यमार्गी एवं कुछ हद तक उदार संविधान था। नये संविधान में सोवियत संघ दुनियाँका सबसे बड़े राष्ट्र (क्षेत्र एवं जनसंख्या) के रूप में सामने आया।

शीतयुद्ध के दौरान नई विश्व राजनैतिक व्यवस्था के जन्म हुआ। कठोर साम्यवादी व्यवस्था में सोवियत संघ आर्थिक विकास की दौड़ में पिछड़ने लगा। नई बदली विश्व व्यवस्था , संघ की ईकाईयों का असंतोष , संघ में रूस के दबदबे ने व्यापक असंतोष को जन्म दिया। इसी समय तत्कालीन सोवियत राष्ट्रपति गार्वाच्योव ने खुलेपन की नीति को अपनाया। संघीय इकाईयों ने अधिक स्वायत्ता की माँग की। इसी समय ईकाईयों में राष्ट्रवाद का उभार हुआ। लोकतान्त्रिक सुधार की माँग बलवती हुई। रूस में नई विधायिका (कांग्रेस आफ पीपुल डिपुटीज) के चुनाव 1990 में हुए। इस कांग्रेस ने ही बोरिस येल्तसिन को सुप्रीम सोवियत का अध्यक्ष चुना। अगले महीने ही कांग्रेस ने देश के सभी प्राकृतिक संसाधनों पर अपने सम्प्रभुता की घोषणा कर दी। रूस ने राष्ट्रपति के नये पद का सृजन 1991 में सोवियत राष्ट्रपति की तरह किया। येल्तसिन गार्वाच्योव के विरोध के बावजूद 57 प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त कर विजयी हुए। येल्तसिन ने अपने कार्यकाल में रूसी राष्ट्रवाद,रूसी सम्प्रभुता को बढ़ावा दिया। 1991 में दक्षिणपंथियों के द्वारा गार्वाच्योव के विरूद्ध एक विद्रोह किया गया। ऐसे समय में येल्तसिन ने गार्वाच्योव को समर्थन दिया और तीन दिन के अन्दर गार्वाच्योव को पुनः स्थापित किया। गार्वाच्योव की वापसी के बाद वे पहले की तरह शक्तिशाली नहीं रह गये। येल्तसिन का प्रभाव,पकड़ बढ़ती जा रही थी। कई संघ की इकाई अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर रही थी। गार्वाच्योव की सरकार ने इस्टोनिया,लटाविया, लिधुआनिया की स्वतन्त्रता को स्वीकार किया। 1991 के अन्त तक बोरिस येल्तसिन ने गार्वाच्योव की सरकार के आर्थिक अधिकारों पर नियन्त्रण प्राप्त कर लिया। रूस ने अपनी स्वन्त्रता की घोषणा नहीं की। यूक्रेन के द्वारा स्वतन्त्रता की घोषणा के एक हफ्ते बाद येल्तसिन एवं यूक्रेन तथा बेलारूस

नेताओं ने ''स्वतन्त्र राष्ट्रों के कामनवेल्थ'' की घोषणा की। आगे यह कामनवेल्थ (सी0आई0एस0) और विस्तारित हुआ। 25 दिसम्बर 1991 को गार्वाच्योव ने 1922 की संधि की समाप्ति तथा सोवियत संघ के विघटन की घोषणा की। रूस को दुनियाँके देशों की स्वीकृति मिल गई और वह सोवियत संघ के उत्तराधिकारी के रूप में सुरक्षा परिषद में शामिल हुआ। दुनियाँके अन्य संगठनों तथा क्षेत्रीय संगठनों में सोवियत उत्तराधिकारी के रूप में शामिल हुआ। इस प्रकार दुनियाँके नक्शे पर सोवियत संघ के स्थान पर रूस का जन्म हुआ।

रूसी गणराज्य मध्य एशिया में स्थित 6,592,849 वर्ग मील के क्षेत्रफल वाला देश है। यह क्षेत्र काफी घना बसा हुआ है। अप्रैल 2001 में यहाँ की जनसंख्या 146001176 थी। यहाँ पर अनेक प्रजातियों तथा अनेक भाषा बोलने वाले लोग एक साथ रहते है। यहाँ की कुल जनसंख्या में सर्वाधिक 81.5 प्रतिशत रूसी , 3.8 प्रतिशत तरतरस ,3 प्रतिशत यूक्रेनी ,1.2 प्रतिशत चुवास, 0.9 प्रतिशत बस्कीर, 0.8 प्रतिशत बेलारूसी, और 0.7 प्रतिशत माल्देवीय लोग है। रूसी भाषा यहाँ की मुख्य भाषा है। रूस की नई संवैधानिक व्यवस्था में राष्ट्रपति को कार्यपालिका का प्रधान बनाया गया है। ब्लादीमीर पुतिन 31 दिसम्बर 1999 को पहले राष्ट्रपति चुने गये थे। राष्ट्रपति को परामर्श के लिए प्रधानमंत्री के पद को स्वीकार किया गया है जिसकी नियुक्ति ड्यूमा के अनुमोदन से राष्ट्रपति करता है। नये संविधान में विधायिका के दो सदन निम्न सदन के रूप में डूमा तथा उच्च सदन के रूप में फडरेशन कौसिल (संघीय परिषद) को स्वीकार किया गया है। नये संविधान में स्थानीय स्वशासन को भी स्वीकार किया गया है। स्थानीय स्तर पर ईकाईयों को स्वायत्तता प्रदान की गई है। नये संविधान में पूर्व सोवियत संविधान के विपरीत बहुदलीय व्यवस्था को स्वीकार किया गया है। 2003 में हुए चुनाव में 23 राजनीतिक दलों ने सहभागिता की थी। वर्तमान रूसी संविधान में रूस के बहुभाषीय , बहुजातीय समाज के अनुरूप बहुदलीय व्यवस्था को स्वीकार किया गया है। यहाँ का संविधान संसदीय एवं अध्यक्षात्मक शासन का मिश्रण प्रतीक होता है। इसमें दोनों के गुण दिखाई पड़ते है। रूस के संविधान की प्रमुख विशेषतायें निम्न हैः-

1. **लिखित संविधान:** संविधान दुनियाँके अन्य संविधानों की तरह लिखित है। अमेरिका, भारत, फ्रांस,कनाडा, स्विट्जरलैण्डकी तरह रूस का संविधान लिखित है। इस संविधान में 137 अनुच्छेद है। इस संविधान को संविधान सभा ने निर्मित किया तथा जनमत संग्रह ने देश की जनता ने स्वीकृति दी। रूस के संविधान में 137 अनुच्छेद है। यह संविधान संग्रह के उपरांत 12 दिसम्बर 1993 को लागू हुआ। संविधान के अनुच्छेद 65 में 9 जनवरी 1996 में आंशिक परिवर्तन किये गये। यह एक छोटा संविधान है। भारत का संविधान भी संविधान सभा ने 2 वर्ष 11 माह 18 दिन में निर्मित किया। भारत के संविधान में 395 अनुच्छेद हैं जो विश्व को सर्वाधिक विशाल संविधान है। रूस का संविधान भारत की तुलना में तो छोटा है परन्तु अमेरिका के संविधान की तुलना में बड़ा है।
2. **सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक राज्य की स्थापनाः-** रूस का संविधान रूस को प्रभुतासम्पन्न लोकतन्त्रात्मक राज्य घोषित करता है। संविधान के अनुच्छेद 3 और 5 इसे लोकतन्त्रात्मक गणराज्य घोषित करते है। इसी में सार्वभौम व्यस्क मताधिकार के द्वारा चुनाव की व्यवस्था की गई है। ऐसे नागारिक जिनकी आयु 21 वर्ष से अधिक है उन्हें चुनाव में मतदान का अधिकार प्रदान किया गया है। जनमत संग्रह एवं निष्पक्ष चुनाव जनता को शक्तिशाली बनाते है। भारत एवं अमेरिका सहित दुनियाँके अनेक देशों में लोकप्रिय सम्प्रभुता के सिद्वान्त को स्वीकार किया गया है। भारत में सार्वभौग व्यस्क मताधिकार के सिद्धान्त को

स्वीकार किया गया है। भारत में एक संविधान संशोधन के द्वारा मताधिकार की आयु को घटाकर 18 वर्ष कर दिया गया।

3. **संघात्मक शासन व्यवस्था**:- रूस में संघीय ढ़ाचे को स्वीकार किया गया। रूस के वर्तमान संविधान में रिपब्लिक, टेरीटरी, रीजन और स्वायत क्षेत्र जैसी इकाईयों की उपस्थिति संघीय स्वरूप को स्पष्ट करते है। रूस के संघीय ढांचे की समस्त शक्तियों का प्रयोग संघ एवं इकाईयों के द्वारा किया जाता है। रूस की संघीय व्यवस्था को संविधान के द्वारा सुनिश्यित कराया जाता है। संविधान के अनु0 4,5 इसको इंगित करते है। दुनियाँसंघीय शासन के आदर्श के रूप में अमेरिकी व्यवस्था को माना जाता है। अमेरिका में 1779 संविधान लागू होने के साथ संघीय व्यवस्था को स्वीकार किया गया। आज अमेरिका के संघ में पचास इकाईयां सम्मिलित है। भारत भी एक संघात्मक राज्य है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 1 में भारत को ''राज्यों का एक संघ'' कहा गया है। इसे कनाडा के संविधान से लिया गया है। भारत के संविधान में केन्द्र एवं राज्य इकाइयों में स्पष्ट रूप से शक्तियों का विभाजन किया गया है।
4. **गणराज्य की स्थापना**:- रूस में राजतन्त्र का लम्बा इतिहास रहा है। वहाँ पर 14 वीं शताब्दी से 19 वीं शताब्दी तक जार शासकों का निरंकुश शासन स्थापित था। 1914 आते-आते वहाँ की सामाजिक,राजनैतिक आर्थिक हालात से अंसतोष बहुत बढ़ गया। इसी समय जर्मन सेनाओं से पराजित होने के कारण जार शासक बेहद कमजोर हो गये। मार्च 1917 में ड्यूमा की मांग पर जार को सिहासंन छोड़ना पड़ा। क्रान्तिकारियों के द्वारा समस्त वंश का वध कर दिया गया। केरेन्सकी के हाथ में अस्थायी सरकार का नेतृत्व था। यह सरकार कमजोर थी। अक्टूबर 1917 में लेनिन ने केरेन्सकी के सरकार को पदच्युत कर सरकार की बागडोर संभाली। 1917 से 1992 तक वामपंथी शासन रहा। रूस के वर्तमान संविधान ने भी राजतन्त्र के स्थान पर लोकतन्त्र की स्थापना की। रूस को एक गणराज्य बनाया गया है जिसमें सर्वोच्च पदाधिकारी के रूप में राष्ट्रपति को स्वीकार किया गया है। राष्ट्रपति का चुनाव आम निर्वाचन से होता है। वहाँ पर वंशानुगत व्यवस्था को कोई अवशेष नहीं है।
5. **अधिकारों का उल्लेख**:- रूस के संविधान के पूर्व सोवियत संविधान में अधिकारों का उल्लेख था। इन अधिकारों में नागरिक अधिकार तो अधिक प्रभावी नहीं थे परन्तु आर्थिक अधिकार बहुत प्रभावी थे। पूर्व की साम्यवादी व्यवस्था में आर्थिक समानता पर अधिक जोर था। रूस के वर्तमान संविधान में उदारवादी व्यवस्था के अनुरूप सभी नागरिक अधिकारों को स्वीकार किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 2 में कहा गया है कि '' मानव उनके अधिकार और स्वतन्त्रता सर्वोच्च मूल्य है।'' रूस के वर्तमान में नागारिक अधिकारों पर बल दिया गया है। रूस के संविधान में दिये गये अधिकार अन्तर्राष्ट्रीय कानून पर आधारित है। संविधान के अनुच्छेद 17 से 56 तक अधिकरों का उल्लेख किया गया है। रूस के संविधान में प्रदत्त किये गये प्रमुख अधिकारों में जीवन का अधिकार, स्वतन्त्रता का अधिकार, विधि के समक्ष समता,निजता का अधिकार, धार्मिक गतिविधियों को करने का अधिकार,विचार अभिव्यक्ति का अधिकार, संघ बनाने का अधिकार, चुनने का राजनीतिक अधिकार, राज्य सेवाओं में समता का अधिकार, निजी संपत्ति रखने का अधिकार, काम पाने तथा न्यूनतम मजदूरी का अधिकार, परिवार का अधिकार , घर का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, शिक्षा का अधिकार, शैक्षिक, कला, वैज्ञानिक एवं रचानात्मक गतिविधियों को करने का अधिकार , राज्य से हुए नुकसान के प्रतिकर अधिकार, आदि है। रूस के संविधान में अधिकारों का विस्तृत एवं प्रभावी विवरण दिया गया है। रूस के संविधान में इन अधिकारों को न केवल प्रदान किया गया है वरन

इनको राज्य की उपेक्षा से बचाने की व्यवस्था भी की गई है। रूस के संविधान में नागरिक आर्थिक और राजनीतिक स्वतन्त्रता की गारंटी दी गई।

6. **मूल कर्तव्यों का उल्लेख**:- रूस के वर्तमान संविधान में अनुच्छेद 57 से 59 तक नागरिक कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है। रूस के संविधान में मुख्य रूप से नागरिकों से राज्य के करों का भुगतान, विभिन्न मदों के शुल्क का भुगतान, रक्षा एवं सैनिक सेवाओं करने की आशा की गई हैं। रूस के संविधान में यह स्वीकार किया गया है कि यह कर्तव्य लोगों को कानून का पालन करने वाला तथा देशभक्त बनाता है।
7. **अध्यक्षात्मक शासन:-** रूस के वर्तमान संविधान में राष्ट्रपति को अत्याधिक शक्तियां दी गई है। राष्ट्रपति का निर्वाचन जनता के द्वारा सीधे किये जाने की व्यवस्था की गई है। राष्ट्रपति को पर्याप्त अधिकार प्रदान किये गये है। वहीं प्रधानमंत्री एवं मन्त्रिमण्डल का निर्माण करता है। प्रधानमंत्री नियुक्ति का अनुमोदन वह ड्यूमा से लेने के लिये बाध्य होता है। वह केवल अस्वस्थता, राजद्रोह,महाभियोग के आधार पर हटाया जा सकता है। उसको हटाने की प्रक्रिया बेहद जटिल है। वह ड्यूमा के अध्यक्ष की नियुक्ति करता है। वह रूस के संघीय सरकार की बैठकों की अध्यक्षता करता है। रूस का राष्ट्रपति देश की आन्तरिक एवं बाहय नीतियों को निर्देशित करता है। वह देश के बाहर रूस का प्रतिनिधित्व करता है। वह विधायिका के परामर्श से राजदूतों की नियुक्ति करता है। वह विदेशों से आने वाले राजदूतों का परिचय भी लेता है। वह विदेशों में राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिये संधि पर हस्ताक्षर करता है। राष्ट्रपति के पास कई ऐसी शक्तियां है जो उसे विधायिका से अधिक शक्तिशाली बनाती है। राष्ट्रपति के पास आदेश जारी करने की तथा सरकार को निर्देश देने की महत्वपूर्ण शक्ति है। कुछ मामलों में संविधान उसे ड्यूमा को भंग करने का अधिकार भी प्रदान करता है। रूस के नये संविधान में राष्ट्रपति जनमत संग्रह भी करा सकता है। पहले यह अधिकार विधायिका के पास था। अमेरिका, भारत में भी राष्ट्रपति को हटाने के लिये संविधान के द्वारा महाभियोग की प्रक्रिया निर्धारित है। रूस के वर्तमान संविधान में यदि राष्ट्रपति गंभीर अपराध अथवा राजद्रोह करता है तो ड्यूमा उच्च सदन (संघीय परिषद) में महाभियोग का प्रस्ताव ला सकती है। दोनों सदनों के 2/3 बहुमत से प्रस्ताव पारित होने के साथ राष्ट्रपति को पद छोड़ना पड़ता है। संघीय परिषद यदि तीन महीने तक प्रस्ताव पारित नहीं करती तो महाभियोग प्रक्रिया समाप्त मान ली जाती है। राष्ट्रपति के महाभियोग द्वारा हटने या गंभीर रूप से अस्वस्थ होने की दशा में प्रधानमंत्री राष्ट्रपति के दायित्वों का निर्वहन करेगा। ऐसी दशा में तीन महीने के अन्दर राष्ट्रपति के चुनाव कराने का प्रावधान है। रूस के संविधान मे उपराष्ट्रपति पद का कोई प्रावधान नहीं है। राष्ट्रपति कार्यपालिका के प्रधान के रूप में प्रधानमंत्री सहित सरकार का गठन करता है। वह ड्यूमा के अनुमोदन से रूस के केन्द्रीय बैंक के अध्यक्ष, संवैधानिक न्यायालय, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति संघीय परिषद के अनुमोदन से करता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति संघीय जिला न्यायालयों के न्यायधीशों की भी नियुक्ति करता है।
8. **द्विसदनात्मक विधायिका**:- रूस की ''फेडरल असेम्बली'' ही वहां की विधायिका है। इसके दो सदन है निम्न सदन के रूप में ड्यूमा तथा उच्च सदन के रूप में संघीय परिषद है। रूस की विधायिका का निम्न सदन 450 सदस्यों से मिलकर बना है जिनका चुनाव सार्वभौम व्यस्क मताधिकार के आधार पर जनता के द्वारा होता है। संघीय सभा की कुल सदस्य संख्या 628 है। इसमें निम्न सदन ड्यूमा की संख्या 450 तथा संघीय परिषद की संख्या 178 है। पहली संघीय सभा का चुनाव 1993 में विशेष परिस्थितियों में हुआ। इसका कार्यकाल केवल दो वर्ष था। पहले चुनाव में चेचन्या, चेल्याबिक तथा टाटरस्टन जैसे कुछ रिपब्लिकों के

बहिष्कार के कारण संघीय परिषद के सदस्यों की संख्या 170 ही रह गई थी। 1994 के मध्य तक चेचन्या को छोड़कर सभी का प्रतिनिधित्व सुनिश्चत कर लिया गया।

रूस के नये संविधान में विधायिका पूर्व सोवियत विधायिका की तरह केवल ''रबर स्टैम्प'' की तरह कार्य करने के लिये वर्ष में केवल कुछ दिन कार्य नहीं करती वरन वह स्थायी रूप से सक्रिय विधायिका के रूप में कार्य करती है। संविधान के द्वारा दोनों सदनों के अलग-अलग अधिवेशनों की व्यवस्था की गई है। आवश्यकता पड़ने पर संयुक्त अधिवेशन का भी प्रावधान किया गया है। ड्यूमा के सदस्य अन्य किसी सदन के सदस्य नहीं हो सकते और न ही वे सरकार में कोई पद धारण कर सकते है। 1995 के बाद लगभग 19 अधिकारियों को ड्यूमा के सदस्य बनने के बाद अपने पुराने पद से त्यागपत्र देना पड़ा है। दोनों सदनों में ड्यूमा अधिक शक्तिशाली प्रतीक होती है। दोनों से पारित किसी विधेयक को यदि राष्ट्रपति सहमति नहीं देता है तो दोनों सदन पुनः 2/3 बहुमत से विधेयक पास कर दे तो राष्ट्रपति को सात दिन के अन्दर अपनी सहमति देनी पड़ती है।

9. **सरकार का गठनः-** रूस में मन्त्रिमण्डल सहित उसके अध्यक्ष की नियुक्ति में केवल राष्ट्रपति की भूमिका नहीं होती वरन अध्यक्ष (प्रधानमंत्री) तथा सरकार के अन्य सदस्यों की नियुक्ति ड्यूमा यदि तीन बार अस्वीकार कर देती है तो राष्ट्रपति ड्यूमा को भंग कर सकता है और नये चुनाव करा सकता है। इस प्रकार रूस के वर्तमान संविधान में सरकार के अंगों में परस्पर नियन्त्रण की व्यवस्था की गई है। संविधान के अनु0 111 तथा 113 में उपर्युक्त प्रावधान किये गये है। रूस की विधायिका के निम्न सदन ड्यूमा के प्रति सरकार जबावदेह होती है। यदि ड्यूमा अविश्वास व्यक्त कर दे तो सरकार को त्यागपत्र देना पड़ता है। यह त्यागपत्र राष्ट्रपति को सौंपा जाता है। यह राष्ट्रपति के ऊपर निर्भर है कि वह उसे स्वीकार करे अथवा न करे। यदि तीन महीने के अन्दर पुनः अविश्वास प्रस्ताव पास हो जाये तो राष्ट्रपति या तो सरकार का त्यागपत्र स्वीकार करता है या ड्यूमा को भंग कर सकता है।
10. **निष्पक्ष न्यायपालिका का गठनः-** रूस में न्याय व्यवस्था के शीर्ष पर सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गई हैं संविधान के अनुच्छेद 126 में सर्वोच्च न्यायालय को दीवानी, फौजदारी तथा प्रशासकीय मामलों में देश का सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय बनाया गया है। इसके अतिरिक्त आर्थिक मामलों के निपटारे के लिये ''सुप्रीम आरेबेटरी कोर्ट'' की स्थापना की गई है। इसके अतिरिक्त एक 19 सदस्यीय संवैधानिक न्यायालय की स्थापना की गई है। यह मुख्य रूप से निम्न मामलों को देखती हैः-

1. संविधान के प्रावधानों का पालन सुनिश्चत कराना।
2. संघीय कानूनों की व्याख्या करना।
3. रूस के राष्ट्रपति के आचरण व्यवहार से संबंधित मामले।
4. ड्यूमा संघीय परिषद तथा सरकारी पदाधिकारियों के आचरण एवं व्यवहार के मामले।
5. संविधान की व्याख्या सुनिश्चित करना।

संवैधानिक न्यायालय उक्त मामले संघीय परिषद के अध्यक्ष, ड्यूमा के अध्यक्ष की सलाह पर लेता हैं।

11. **कठोर संविधान**:- रूस का वर्तमान संविधान कठोर संविधान है। कठोर संविधान का अर्थ है कि इसमें संशोधन की प्रक्रिया जटिल है। इसमें आसानी से बदलाव संभव नहीं है। संविधान में संशोधन का प्रस्ताव रूस के राष्ट्रपति के द्वारा,ड्यूमा तथा संघीय परिषद के द्वारा लाये जा सकते है। संविधान के भाग 1,2 तथा 9 में संशोधन के लिये आवश्यक है कि उक्त प्रावधान संघीय परिषद तथा ड्यूमा में 3/5 सदस्यों के मतों से पास होना चाहिए। इसके बाद एक विशेष संवैधानिक सभा का गठन किया जायेगा। संविधान सभा के 2/3 सदस्यों के मत से पारित होने के साथ संशोधन पूर्ण हो जाता हैं। संविधान के भाग 3 से 8 में संशोधन संघीय संवैधानिक कानून के प्रावधानों के अनुरूप किया जाता है। इसी प्रकार अनुच्छेद 65 में संशोधन का प्रावधान है। संविधान के अनुच्छेद 7 तथा 16 में संशोधन के उक्त कठोर प्रावधानों का उल्लेख है। उपरोक्त प्रावधान स्पष्ट करते है कि संविधान में संशोधन आसानी से नहीं हो सकता। भारत में संविधान की संशोधन की प्रक्रिया में लचीला एवं जटिल दोनों तत्व दिखाई पड़ते है। भारत में मूल ढ़ाचें से संबंधित संशोधन प्रस्ताव के लिये संशोधन की विशेष प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है। इसमें संसद के 2/3 बहुमत के साथ आधे से अधिक राज्यों की विधानसभा की सहमति अनिवार्य की गई है। अमेरिका संविधान कठोर संविधान का एक उदाहरण है।
12. **संविधान की सर्वोच्चता**:- पूर्व के सोवियत संविधान में '' कम्युनिस्ट पार्टी'' की सर्वोच्चता स्थापित थी। संविधान कम्युनिस्ट पार्टी एवं पोलित ब्यूरो और महासचिव के हाथ का खिलौना था। 1993 में रूस के नये संविधान से स्थितियां बदल गई। नये संविधान में संविधान की सर्वोच्चता स्थापित हुई। रूस के संविधान की सर्वोच्चता सम्पूर्ण रूसी भू भाग पर स्थापित है। रूस की सरकार,नागरिक ,स्थानीय सरकार सभी संविधान के अधीन है। कोई भी सरकारी प्रावधान संविधान के प्रतिकूल नहीं हो सकता है। रूस की विधायिका कोई भी ऐसा कानून नहीं बनायेगी जो संविधान विरूद्ध हो। रूस के संविधान की सर्वोच्च वैधानिक स्थिति है। संविधान के अनु0 16 में सर्वोच्चता को स्पष्ट किया गया है। रूसी संघ में संविधान की यह सर्वोच्चता अमेरिकी संविधान की सर्वोच्चता की ही तरह है।
13. **लोक सम्प्रभुता**:- रूस के संविधान के अनुच्छेद 3 में लोक सम्प्रभुता को स्पष्ट किया गया है। बहुभाषीय, बहुजातीय, बहुधर्मी देश में लोकसम्प्रभुता के सिद्धान्त को स्वीकार किया गया है। रूस में नागारिक अपने अधिकारों का प्रयोग प्रत्यक्ष रूप से, राज्य सरकारों के माध्यम से तथा स्थानीय स्वशासन की इकाईयों के माध्यम से करते है। रूस के संविधान में जनमत संग्रह का प्रावधान भी रूसी नागारिकों की महती भूमिका को दर्शाता है। सरकार का गठन, विधायिका का चुनाव, कानून निर्माण के बाद जनता की रायशुमारी जनता की सर्वोच्च स्थिति को दर्शाती हैं। उपरोक्त प्रावधान रूस की सम्पूर्ण प्रशासनिक व्यवस्था में नागरिकों को धुरी बनाते है। सरकार की सम्पूर्ण शक्ति का उद्गम स्थल लोक (नागरिक) है।
14. **राज्य के सिद्धान्तों का उल्लेख**:- रूस के संविधान में राज्य के प्रमुख सिद्धान्तों का उल्लेख किया गया है। इसमें प्रमुख रूप से नागरिकों के व्यक्तित्व के स्वतंत्र विकास पर जोर दिया गया है। इसके अन्तर्गत सरकारों से यह अपेक्षा की गई है कि वे ऐसी नीतियां बनायेंगे जिसमें नागरिक सम्मानजनक जीवन यापन कर सके। इसमें नागरिकों की सुरक्षा, अच्छे स्वास्थ्य, न्यूनतम मजदूरी तथा वरिष्ठ नागरिकों के लिये विशेष व्यवस्थाओं को सुनिश्चित करने की बात की गई है। संविधान का अनुच्छेद 7 इस तरह के प्रावधानों का उल्लेख करता है।
15. **बहुदलीय व्यवस्था**:- पूर्व सोवियत संविधान में एकदलीय व्यवस्था स्थापित थी। सोवियत शासन व्यवस्था में कम्युनिस्ट दल की तानाशाही स्थापित थी। रूस के 1992 के संविधान में बहुदलीय व्यवस्था को स्थापित

किया गया है। वर्तमान ड्यूमा में 4 दलों का प्रतिनिधित्व है। इनमें ''यूनाइटेड रशिया'' सत्तारूढ़ है। इसके अतिरिक्त कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ रशियन फडरेशन, लिबरल डेमोक्रेटिक पार्टी आफ रशिया तथा ए जस्ट रशिया आदि प्रमुख है। कम्युनिस्ट पार्टी मुख्य विपक्षी दल है।

अभ्यास प्रश्न 1:

1. रूस का वर्तमान संविधान .....में लागू हुआ।
2. रूस में.....व्यवस्था को स्वीकार किया गया।
3. रूस में विधायिका के.....सदन है।
4. रूस में संविधान के सर्वोच्चता के सिद्धान्त को स्वीकार किया गया है। सत्य/असत्य
5. संविधान के अनुपालन की जिम्मेदारी संवैधानिक न्यायालय को प्रदान की गई है। सत्य/असत्य
6. रूस में.....शासन व्यवस्था को स्वीकार किया गया है।
7. रूस की विधायिका के निम्न सदन को .....कहते है।
8. रूस में प्रधानमंत्री की नियुक्ति .....करता है।
9. रूस में नागरिकों को व्यस्क मताधिकार दिया गया है। सत्य/असत्य
10. मतदान की आयु 21 वर्ष है। सत्य/असत्य

16.3 1992 के रूस के संविधान में विधायिका

नये बदले हालात में सोवियत विघटन के बाद रूस में लोकतान्त्रिक मूल्यों पर आधारित संविधान लागू किया गया। लम्बे समय बाद रूस में साम्यवादी व्यवस्था का छोड़कर उदार लोकतान्त्रिक व्यवस्था को स्थापित किया गया। इस नई व्यवस्था में दुनियाँके अन्य लोकतान्त्रिक व्यस्थाओं की तरह रूस में भी द्विसदनीय व्सवस्था को स्वीकार किया गया। रूस में निम्न सदन के रूप में ड्यूमा को स्थापित किया गया जो आम जनता का प्रतिनिधित्व करता है। उच्च सदन को संघीय परिषद कहा गया जो ईकाईयों का प्रतिनिधित्व करती है। संविधान के अनुच्छेद 94 में कहा गया है -''संघीय सभा अर्थात रूसी संघ की संसद संघ की सर्वोच्च विधायी एवं प्रतिनिधिआत्मक संस्था है।'' यह दो सदनों ड्यूमा तथा संघीय परिषद से मिलकर बनेगी।

16.3.1 स्टेट ड्यूमा का गठन

स्टेट ड्यूमा 450 सदस्यों से मिलकर बनी है। उनका चुनाव दो तरह से होता है-

1.स्टेट आफ ड्यूमा के 225 सदस्यों का चुनाव सूची मतदान प्रणाली से होता है। इसके लिये वे दल ही अर्ह माने जाते है जो 5 प्रतिशत से अधिक मत आम निर्वाचन में प्राप्त करते है।

2.स्टेट ऑफ ड्यूमा के शेष 225 सदस्यों का चुनाव एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र के आधार पर किया जाता है। सार्वभौम व्यस्क मताधिकार का सिद्धान्त अपनाया जाता है। मतदान के लिये आयु सीमा 21 वर्ष रखी गई है। कोई भी व्यक्ति जिसकी आयु 21 वर्ष हो चुकी है वह चुनाव में भाग ले सकता है। वह 21 वर्ष का आयु प्राप्त करते ही सदन का सदस्य बनने की आयु संबंधी योग्यता पूरी कर लेता है। रूस के संविधान में स्पष्ट किया गया है कि एक साथ दोनों सदनों का सदस्य कोई नहीं हो सकता है। इसके अतिरिक्त स्टेट ऑफ ड्यूमा और संघीय परिषद का सदस्य किसी अन्य राज्य ईकाई अथवा स्थानीय स्वशासन की इकाई का सदस्य नहीं

हो सकता। ड्यूमा का सदस्य नौकरशाही का सदस्य नहीं हो सकता। वह किसी प्रकार का कोई कार्य नहीं कर सकता जिससे धनार्जन होता है। वह केवल शिक्षण और शोध संबंधी कार्यों में इस पांबदी से मुक्त है। 1995 के चुनाव के बाद 19 नौकरशाहों को अपने विधायी कार्यों के लिए नौकरी छोड़नी पड़ी।

ड्यूमा के सदस्यों को प्राप्त विशेषाधिकारः- ड्यूमा के सदस्यों को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त है जो इस प्रकार हैः-

1. ड्यूमा का सदस्यों की आपराधिक मामलों को छोड़कर अन्य मामलों में गिरफ्तार,छानबीन, घर की जांच नहीं की जा सकती।
2. लोगों की सुरक्षा के मामले को छोड़कर ड्यूमा के सदस्यों की व्यैक्तिगत जांच नहीं की जा सकती।
3. ड्यूमा के सदस्यों को उनके सम्पूर्ण कार्यकाल में उपरोक्त छूट प्राप्त होती है। उनको ड्यूमा के सदस्य के रूप में प्राप्त होने वाली छूट को समाप्त करने का अधिकार प्रोस्क्यूटर जनरल की सिफारिश पर संबंन्धित सदन को है। संबंधित सदन ही उसको प्राप्त होने वाली विशेष सुविधायें समाप्त कर सकती है।

सत्रः- रूस का राष्ट्रपति 30 दिन के पूर्व सत्र बुलाता है। ड्यूमा के सत्र की अध्यक्षता सबसे वरिष्ठ सदस्य द्वारा की जाती है। रूस में ड्यूमा के सत्र खुले तथा विशेष अवसरों पर बंदसत्र भी होते है। संविधान के अनुच्छेद 99 एवं 100 में इसका उल्लेख किया गया है।

ड्यूमा के अधिकार एवं शक्तियां: रूस में ड्यूमा विधायिका का निम्न सदन है। यह जनता का प्रतिनिधित्व करने वाला सदन है। दुनियाँके अन्य निम्न सदनों की तरह ही यह उच्च सदन संघीय परिषद से अधिक शक्तिशाली है। ड्यूमा की शक्तियों की व्याख्या हम इस प्रकार कर सकते हैः-

1. **कार्यपालकीय शक्तियां:** ड्यूमा एक विधायी सदन है। वह कानून निर्माण के अतिरिक्त अनेक कार्यपालकीय कार्यों को करती है। उसके कार्यपालकीय कार्यों को निम्न भागों में बाँटा जा सकता हैः-

नियुक्ति संबंधीः- राष्ट्रपति के निर्वाचन के बाद राष्ट्रपति सरकार के मुखिया (प्रधानमंत्री) की नियुक्ति करता है। ड्यूमा राष्ट्रपति द्वारा की गई इस महत्वपूर्ण नियुक्ति का अनुमोदन करती है। ड्यूमा के अनुमोदन के बिना प्रधानमंत्री की नियुक्ति पूर्ण नहीं होती है। इसके अतिरिक्त एकाउटिंग चेम्बर के चैयरमैन की नियुक्ति एवं पदच्युति का दायित्व भी ड्यूमा के पास है। इसके अतिरिक्त ड्यूमा नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिए विशेष अधिकारियों की नियुक्ति करता है। वह ही नियुक्ति एवं पदुच्यति के लिए जिम्मेदार है। ड्यूमा ही सरकार पर नियन्त्रण रखता है। सरकार के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव पास कर वह ही सरकार की आयु तय करती है।

राष्ट्रपति के विरूद्ध महाभियोगः- रूम में व्यवस्था है कि राष्ट्रपति कार्यपालिका का प्रधान है। वह संविधान का उल्लघंन, राजद्रोह के मामले में महाभियोग की कार्यवाही कर पद से हटाया जा सकता है। ड्यूमा में राष्ट्रपति के विरूद्ध लगे आरोपों की जांच की जाती है यदि वहां से 2/3 सदस्यों के बहुमत से प्रस्ताव पास हो जाता है तो मामला संघीय परिषद में जाता है। यदि दोनों सदन 2/3 बहुमत से प्रस्ताव पास हो जाता है, तो महाभियोग पूर्ण हो जाता है। ऐसे हालात में राष्ट्रपति को पद छोड़ना पड़ता है।

क्षमादान की शक्तिः- ड्यूमा के पास क्षमादान की महत्वपूर्ण शक्ति है। रूस की संसद में ड्यूमा ही क्षमादान की शक्ति है। वह इसका प्रयोग कर क्षमादान प्रदान करती है।

2. **विधायी शक्तियां:** रूस की विधायिका का निम्न सदन होने के कारण ड्यूमा का प्रमुख कार्य विधि निर्माण करना है। दुनियाँके अन्य विधायिकाओं की तरह ड्यूमा भी इस कार्य को करती है। अनेक विधेयक प्रस्ताव ड्यूमा में ही प्रस्तुत किये जाते है। करों को समाप्त करने वाले कानून,राज्यों के वित्तीय देनदारीयों में परिवर्तन करने वाले, संघीय बजट से खर्च किये जाने वाले मामले में विधेयक ड्यूमा में ही प्रस्तुत किये जाते है। उक्त मामलों में ड्यूमा के कुल सदस्य संख्या के बहुमत से पारित किये जाते है। ड्यूमा से पास होने के बाद पांच दिन के अन्दर विधेयक संघीय परिषद में भेजे जाते है। संघीय परिषद या तो अपने बहुमत से पास कर देती है या उसे अस्वीकार कर देती है। यदि संघीय परिषद चौदह दिन तक उस पर विचार नहीं करती तब वह बिल परिषद से पास मान लिया जाता है। संघीय परिषद से अस्वीकार होने के बाद विधेयक को एक समाधान आयोग के पास भेज दिया जाता है जहां पर दोनों सदनों के मतभेद कम करने के प्रयास किये जाते है। यहां से उक्त प्रयास के बाद विधेयक को पुनः ड्यूमा में भेज दिया जाता है। ड्यूमा यदि संघीय परिषद के प्रस्ताव से असहमत होती है और ड्यूमा के 2/3 सदस्य दूसरे मतदान में सहमति देते है तो विधेयक स्वीकृत मान लिया जायेगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि दोनों सदनों में ड्यूमा की स्थिति अधिक मजबूत है। यह स्थिति दुनियाँके सभी निम्न सदनों में दिखती है। भारत में लोक सभा , ब्रिटेन में कामन सभा आदि द्वितीय सदन की तुलना में अधिक शक्तिशाली है। ड्यूमा के द्वारा संघीय बजट, संघीय कर, वित्त, कस्टम विभाग, वित्त संबंधी, अन्तर्राष्ट्रीय संधि को स्वीकार या अस्वीकार करने,रूस की सीमाओं की रक्षा तथा युद्ध और शंति संबंधी मामले यदि स्वीकार किये जाते है तो संघीय परिषद के द्वारा अनिचार्य रूप से स्वीकार होगें। संविधान के अनुच्छेद 106 में उक्त व्यवस्था की गई है।

16.4 रूस की कार्यपालिका

रूस का राष्ट्रपति 1992 के नये संविधान में सर्वोच्च पदाधिकारी है। नये संविधान में राष्ट्रपति को महत्वपूर्ण शक्ति प्रदान की गई है। उसका पद शासन में एक धुरी के समान है। वह सरकार का मुखिया है। वह संविधान का संरक्षक है। वह संघ की सम्प्रभुता को सुनिश्चत करता है। वह लोकतान्त्रिक तरीके से चुना जाता है। यही कारण है कि वह वास्तविक शक्तियों का प्रयोग करता है।

योग्यतायें: राष्ट्रपति पद पर चुने जाने के लिए संविधान द्वारा निम्न योग्यतायें निर्धारित की गई हैः-

1: वह रूस का नागरिक होना चाहिए।

2: वह 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

3: वह पिछले 10 वर्ष से रूस में रह रहा हो।

चुनाव प्रक्रियाः- 1992 के रूसी संविधान में राष्ट्रपति को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। नये संविधान में राष्ट्रपति के जनता द्वारा प्रत्यक्ष चुनाव की व्यवस्था की गई है। रूस में राष्ट्रपति का चुनाव सामान्य निर्वाचन में गुप्त मतदान के द्वारा होता है। चुनाव की प्रक्रिया संघीय कानून द्वारा निश्चित की जाती है। वोरिस येल्तसिन रूस के पहले राष्ट्रपति हुए। वह वर्ष 1999 तक राष्ट्रपति बने रहे। मार्च 2000 को ब्लादिमीर पुतिन 52.8 प्रतिशत मत प्राप्त कर रूस के राष्ट्रपति बने। उन्होंने कम्युनिस्ट पार्टी के प्रत्याशी जुगोनोव को पराजित किया जिसने 29.3 प्रतिशत मत प्राप्त किये। इसी चुनाव में तीसरे स्थान पर आये यावलोको पार्टी के यवेलेन्स्की आये जिन्होंने 5.8 प्रतिशत मत प्राप्त किये।

दिमित्री मेडवेडेव 7 मई 2008 को रूस के राष्ट्रपति बने। मेडवेडेव ने कम्युनिस्ट पार्टी के जिनेडी जेयानोव को पराजित किया। इस चुनाव में मेडवेडेव की भारी समर्थन मिला। उन्हें 70 प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त हुए। तीसरे नम्बर पर आये प्रत्याशी ब्लादीमिर जिथोनोवस्की को 9 प्रतिशत मत प्राप्त हुए। दिसम्बर 2011 में रूस में हुए राष्ट्रपति चुनाव में ब्लादिमीर पुतीन पुनः राष्ट्रपति चुने गये है। इस चुनाव में उनका प्राप्त मत पिछले चुनावों से कम हुए है।

कार्यकाल:- रूस के संविधान में राष्ट्रपति का कार्यकाल 4 वर्ष रखा गया है। राष्ट्रपति के पुनः निर्वाचन पर रोक नहीं है।

राष्ट्रपति की शक्तियां: रूस के राष्ट्रपति के पास वास्तविक शक्तियां है। दुनियाँके अन्य संविधानों की तरह रूस के राष्ट्रपति के पास कार्यपालकीय, सैनिक, विधायी,वित्तीय और न्यायिक शक्तियां है। उसकी यह शक्तियां अमेरिकी एवं फ्रांस के राष्ट्रपति के समकक्ष उसे स्थापित करती है। उसकी प्रमुख शक्तियों को हम इस प्रकार स्पष्ट कर सकते है:-

1. **कार्यपालकीय शक्तियां:** राष्ट्रपति के पास समस्त कार्यपालकीय शक्तियां है। वह चेयरमैन ऑफ गर्वनमेट (प्रधानमंत्री) की नियुक्ति करता है। यद्यपि उसकी यह नियुक्ति ड्यूमा के अनुमोदन पर निर्भर करती है। वह सरकार की बैठकों की अध्यक्षता करता है। वह सेंटंªल बैंक ऑफ रशियन फडरेशन की नियुक्ति के लिए प्रस्ताव ड्यूमा में भेजता है। वह ड्यूमा में नियुक्ति ही नहीं पदच्युति का प्रस्ताव भी भेजता है। वह सभापति की सलाह पर संघीय सरकार के उपसभापति तथा अन्य सदस्यों की नियुक्ति एवं पदच्युत करता है। वह रूस की संघीय सुरक्षा परिषद का अध्यक्ष होता है। उसका पद संघीय कानूनों से मर्यादिता होता है। वह विभिन्न क्षेत्रों में सराहनीय कार्य कर रहे लोगों का सम्मान करता है। रक्षा के क्षेत्र में उत्कृष्ठ कार्य कर रहे लोगों का उच्च सैनिक पद, मानद उपाधि आदि प्रदान करता है। वह राजनीतिक शरण के मामले में अंतिम निर्णय करता है। वह राजनीतिक शरण प्रदान करता है।

2. **सैनिक शक्ति:-** रूस का राष्ट्रपति तीनों सेनाओं का प्रधान होता है। वह संघ की सेनाओं के सर्वोच्च कमाण्डरों की नियुक्त तथा पदच्युति करता है। रूस के सर्वोच्च सेनापाति होने के कारण वह रूस की सैनिक नीतियों का निर्धारण करता है। संघ के समक्ष खतरा उत्पन्न होने की स्थिति में वह देश में मार्शल ला लगा सकता है। उसका नोटिफिकेशन ड्यूमा और संघीय परिषद में किया जाता है। वह देश के किसी भाग में संघीय सभा की सहमति से आपातकाल लगा सकता है।

3. **वैदिशक संबंधों का संचालन:-** रूस के राष्ट्रपति के पास वैदेशिक मामलों में महत्वपूर्ण शक्तियां प्राप्त है। वह विदेशों से आने वाले राजदूतों का परिचय प्राप्त करता है। वह संघीय सभा के अनुमोदन से विदेशों में राजदूत नियुक्त करता है तथा उन्हें वापस बुलाता है। वह देश की विदेश नीति का संचालन करता है। वह देश के बाहर देश का प्रतिनिधित्व करता है। वह अन्तर्राष्ट्रीय संधि एवं समझौते पर हस्ताक्षर करता है।

4. **न्यायिक शक्तियां:** रूस के राष्ट्रपति के पास महत्वपूर्ण न्यायिक शक्तियां है। वह संघीय परिषद के अनुमोदन से संवैधानिक न्यायालय, सर्वोच्च न्यायालय,प्रोसीक्यूटर जनरल कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है। वह प्रोसीक्यूटर जनरल की कार्यमुक्त करने की सिफारिश संघीय परिषद से करता है। वह अन्य संघीय न्यायालयों के न्यायाधीशों की भी नियुक्ति करता है। संविधान के अनु0 88 में उसे क्षमादान की भी शक्ति प्रदान की गई है। रूस का राष्ट्रपति अन्तर्राष्ट्रीय संधि एवं समझौते, मानव अधिकार के उल्लघंन तथा रूस के संविधान के उल्लघंन की स्थिति में संघ के कार्यपालकीय कानूनों को निलम्बित कर सकता है। वह संघ एवं उसकी इकाईयों में विवादों का निपटारा करता है।

5. **विधायी शक्तियां:** रूस के राष्ट्रपति के पास महत्वपूर्ण विधायी शक्तियां है। रूस में कोई विधेयक दोनों सदनों में स्वीकृत होने के बाद राष्ट्रपति की स्वीकृति से ही कानून बनता है। रूस की विधायिका के निम्न सदन ड्यूमा के चुनाव की घोषणा राष्ट्रपति ही करता है। आवश्यकता होने पर वह ही जनमत संग्रह की घोषणा करता है। वह ड्यूमा में आवश्यकता पड़ने पर प्रतिवेदन प्रस्तुत करता है। वह विधायिका में देश की अं: तरिक एवं वाहय स्थिति, विदेश एवं गृह नीति के संबंध में संदेश देता है। संविधान के अनुच्छेद 84 में इसको स्पष्ट किया गया है। संविधान के अनु0 90 में स्पष्ट किया गया है कि राष्ट्रपति के सभी आदेश रूस के सम्पूर्ण क्षेत्र में सभी के ऊपर बाध्यकारी होगें।

रूस के राष्ट्रपति की शक्तियों के परीक्षण से यह स्पष्ट होता है कि वह देश का सबसे शक्तिशाली व्यक्ति है। उसकी सैनिक, कार्यपालकीय,वैदशिक शक्तियां उसकी स्थिति को बहुत मजबूत करती है। सरकार के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष की नियुक्ति ,सरकार का त्यागपत्र पर निर्णय लेना, सरकार की बैठकों की अध्यक्षता स्पष्ट रूप से उसकी महत्वपूर्ण स्थिति को दर्शाते है। वह संविधान का संरक्षक है। सरकार के अंगों के बीच मध्यस्थ है। वह रूस की सेनाओं का सर्वोच्च सेनापति है। वह संकट के समय मार्शल ला और इमरजेंसी लगा सकता है। संविधान के अनु0 91 में उसको अनेक प्रकार की उन्युक्तियां (छूट) प्राप्त है। इसके बाद भी वह तानाशाह नहीं बन सकता क्योंकि उसके विरूद्ध महाभियोग लगाया जा सकता है। रूस में बहुदलीय व्यवस्था को अपनाया जाता है। ऐसी स्थिति में वह तानाशाह नहीं हो सकता। येल्तसिन को 92-94 तक कम्युनिस्ट पार्टी ने तगड़ी चुनौती दी थी। उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रपति की रूस की शासन व्सवस्था में केन्द्रीय भूमिका है। वह शासन की धुरी है।

अभ्यास प्रश्न 2:

1. रूस की विधायिका .....सदनात्मक है।
2. रूस की विधायिका के निम्न सदन को .....कहते है।
3. रूस की विधायिका के उच्च सदन को .....कहते है।
4. रूस की कार्यपालिका का प्रधान.....होता है।
5. रूस का राष्ट्रपति सरकार के अध्यक्ष (प्रधानमंत्री) की नियुक्ति करता है। सत्य/असत्य
6. रूस के राष्ट्रपति बनने के लिए 35 वर्ष की आयु होनी चाहिए। सत्य/असत्य
7. रूस के राष्ट्रपति को महाभियोग के द्वारा हटाया जा सकता है। सत्य/असत्य

16.5 रूस में राजनीतिक दलों का अभ्युदय एवं इतिहास

रूस का प्राचीन इतिहास प्रजातंत्र का है। 14वीं सदी से रूस में जार वंश का निरंकुश शासन चला आ रहा है। उन्नीसवीं शताब्दी में औद्योगिक क्रान्ति एवं अन्य कारणों से मध्यम वर्ग का उदय हुआ। इसी कारण से 1895 में रूसी सामाजिक प्रजातन्त्रवादी दल का उदय हुआ। यह दल आगे जाकर वोल्शेविक एंव मैन्शेविक दो भागों में बंट गया। रूस की जापान के हाथों पराजय ने जार की लोकप्रियता को कम कर दिया। इसी समय जन आक्रोश अपने चरम पर

पहुंच गया। यही वह समय था जब विरोधियों व असन्तुष्टों को अवसर मिल गया। वोल्शेविक दल का नेता लेनिन था। 1905 से 1917 तक ये दोनों दल प्रभुता पाने के लिए संघर्ष करते रहें। 1917 की क्रान्ति के समय अन्य दल भी थे। इनमें प्रमुख रूप से संवैधानिक जनतंत्रवादी तथा सामाजिक क्रान्तिकारी थें। क्रान्ति में सभी दलों द्वारा सहयोग किया गया। 1917 में वोल्शेविक दल के नेता ने लेनिन ने केरेन्सकी का तख्ता पलट कर सत्ता अपने हाथ में ले ली। 1918 में रूसी सामाजिक जनतान्त्रिक श्रमिक दल की सातवीं कांग्रेस का अधिवेशन में इस दल का नाम बदलकर ''रूसी साम्यवादी दल'' कर दिया गयां 1925 में 14वीं कांग्रेस ने पुनः इसका नाम बदलकर सोवियत संघ का साम्यवादी दल कहा गया। 1936 में संविधान में प्रथम बार इसे मान्यता दी गयी। साम्यवादी दल का मुख्य उद्देश्य जारशाही का अंत कर ,पूंजीवादी व्यवस्था को समाप्त कर समाजवादी राज्य की स्थापना करना था। इस दल का अगला लक्ष्य साम्यवादी समाज की स्थापना करना था। 1988 के 19वें महासम्मेलन में इसके लक्ष्य को बढ़ाकर पुर्नसरंचना (पेरपेरेस्त्रोइका) और खुलेपन(ग्लासनोस्त) को स्वीकार किया गया। इसका प्रमुख उद्देश्य आम जनता को जोड़ना तथा खुलेपन की नीतियों को स्वीकार करना था।

शीतयुद्ध के दौरान नई विश्व राजनैतिक व्यवस्था का जन्म हुआ। कठोर साम्यवादी व्यवस्था में रूस विकास की दौड़ में पिछड़ने लगा। नई बदली विश्व व्यवस्था संघ की इकाईयों असंतोष, संघ के इकाइयों के विकास में विषमता ने व्यापक असंतोष को जन्म दिया। इसी समय तत्कालीन सोवियत राष्ट्रपति ने खुलेपन (ग्लास्तनोस्त) की नीति को अपनाया। इसी समय ईकाईयों में राष्ट्रवाद, लोकतान्त्रिक सुधार की मांग बलवती हुई। रूस की विधायिका (कांग्रेस आफ पीपुल डिपुटीज) के चुनाव 1990 में हुए। येल्तसिन को सुप्रीम सेावियत का अध्यक्ष चुना गया। अगले महीने कांग्रेस ने सभी प्राकृतिक संसाधनों पर रूसी सम्प्रभुता की घोषणा कर दी। 1991 में रूस में राष्ट्रपति से नये पद का सृजन हुआ। पहले राष्ट्रपति के रूप में येल्तसिन चुने गये। धीरे-धीरे सेवियत संघ में स्वतन्त्रता की मांग बढ़ने लगी। कई संघीय राज्यों ने स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। इसी समय इस्टोनिया, लताविया तथा लिथुआनिया की स्वतन्त्रता की घोषणा को सोवियत सरकार ने स्वीकार कर लिया। 1991 के अंत तक गार्वाच्योव की पकड़ शासन पर कमजोर तथा येल्तसिन की पकड़ मजबूत होती गयी। रूस ने अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा नहीं की। यूक्रेन के द्वारा आने को स्वतन्त्र घोषित किये जाने के बाद 21 दिसम्बर 1991 को रूस ,यूक्रेन एवं बेलारूस सहित 11 गणराज्यों ने स्वतन्त्र राज्यों के कामनवेल्थ (सी0आई0एस0) की घोषणा की। 25 दिसम्बर 1991 को सोवियत राष्ट्रपति गार्वाच्योव ने 1922 की संधि (जिससे सोवियत संघ का जन्म हुआ) को समाप्ति की घोषणा की और त्यागपत्र दे दिया।

12 जून 1990 को नया रूस अपना स्वतन्त्रता दिवस मानता है। यद्यपि उसे सोवियत संघ से 24 अगस्त 1991 को आजादी मिली। नये रूसी गणराज्य का नया संविधान 12 दिसम्बर 1992 को लागू हुआ। नये रूसी गणराज्य की राजधानी ''मास्को'' बनी रही। रूस के नये संविधान में कम्युनिस्ट के विपरीत उदार लोकतान्त्रिक व्यवस्था को स्वीकार किया। उदार लोकतान्त्रिक व्यवस्था एवं संघ के निर्माण के अनुरूप पूर्व की एकदलीय व्यवस्था को छोड़ नये संविधान में बहुदलीय व्यवस्था को स्वीकार किया गया। वर्तमान रूसी लोकतान्त्रिक व्यवस्था में अनेक देशों के अस्तित्व को स्वीकार किया गया है। वर्तमान रूसी निम्न सदन (ड्यूमा) में वर्ष 2003 में 23 राजनीतिक दलों का प्रतिनिधित्व है। इसके अतिरिक्त अनेक निर्दल भी है। 2003 के चुनाव के आकड़ें दर्शाते है कि केवल 3 दलों ने 5 प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त किये। वर्तमान में रूस का यूनाइटेड रशिया पार्टी सबसे बड़े दल के रूप में सत्तारूढ़ हैं । इस दल के नेता ब्लादीमीर पुतीन है। इस दल ने 2003 में 36.84 प्रतिशत मत प्राप्त किये। दूसरे स्थान पर कम्युनिस्ट पार्टी है जिसने 12.7 प्रतिशत मत प्राप्त किये है। इस दल के नेता गेनेडी जुवानेव है। इस दल की विचारधारा

साम्यवाद,मार्क्सवाद,लेनिनवाद से प्रभावित है। यह राष्ट्रवाद पर बल देते है। तीसरा प्रमुख दल के रूप में ''लिबरल डेमोक्रेटिक पार्टी आफ रशिया'' है। इस दल का प्रमुख ब्लादिमीर झिरनोवस्की है। इस दल का प्रमुख लक्ष्य राष्ट्रवाद पर है। एक और प्रमुख दल ''ए जस्ट रशिया'' है। इस दल का जोर सामाजिक लोकतन्त्र तथा लोकतन्त्रात्मक समाजवाद है। इसके प्रमुख नेता ''निकोलई लेवेचेव'' है। इनके अतिरिक्त अनेक दल पंजीकृत है। इनमें प्रमुख रूप से पेट्रिआटस आफ रशिया,राईट काज, दि रशियन यूनाइटेड डेमोक्रेटिक पार्टी यावलोको है। इसके अतिरिक्त कम्युनिस्ट पार्टी आफ सोवियत यूनियन को राष्ट्र विरोधी गतिविधियों के कारण बैन कर दिया गया है। जिन दलों की गतिविधियों पर रोक लगाई गई है उनमें प्रमुख रूप से कान्स्टीटयूसनल डेमोक्रेटिक पार्टी,रशियन सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी, सोशलिस्ट रिवोल्यूसनरी पार्टी आदि है।

इसके अतिरिक्त अनेक दलों ने अपने को बड़े दलों में सम्मिलित कर लिया। इनमें प्रमुख रूप से यूनाइटेड रशिया पार्टी में यूनिटी पार्टी आफ रशिया, फादर लैण्ड आल रशिया,आवर होम-रशिया,अग्रेगियन पार्टी आफ रशिया आदि है। इसी प्रकार जस्ट रशिया में मुख्य रूप से पीपुल पार्टी आफ रशियन फेडरेशन का ,रशियन पार्टी आफ लाइफ,रशियन पेंशनर्स पार्टी ,युनाइटेड सोशलिस्ट पार्टी आफ रशिया ,रशियन सोशल जस्टिस पार्टी, रशियन इकोलिजकल पार्टी आदि का विलय हुआ। इसी प्रकार कम्युनिस्ट पार्टी आफ रशियन फेडरेशन में पीपुल यूनियन शामिल हो गई।

इसके अतिरिक्त रूस में वाम दलों ने मिलकर एक वामपंथी मोर्चा बनाया है। इस मोर्चे में प्रमुख रूप से कम्युनिस्ट आफ रशिया,सोशलिस्ट रजिस्टेंस, सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी ऑफ रशिया, नेशनल वोल्शेविक पार्टी , शामिल है।

अभ्यास प्रश्न 3:

1. रूस में .....राजनीतिक व्यवस्था है।

2. पूर्व सोवियत संघ में एक दलीय व्यवस्था थी। सत्य/असत्य

3. रूस का सबसे बड़ा दल .....है।

16.6 सारांश

वर्तमान रूस का संविधान एक आधुनिक संविधान है। इसमें लगभग सभी उन्नत विश्व राजनैतिक व्यवस्थाओं के लक्षण विद्यमान है। रूस के संविधान में अमेरिका की तरह अध्यक्षात्मक शासन, न्यायपालिका की सर्वोच्चता, मौलिक अधिकार ,संघीय व्यवस्था, शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त आदि तत्व दिखाई पड़ते है। भारत की तरह वहां पर बहुदलीय व्यवस्था, संघात्मक शासन, मूल कर्तव्य आदि तत्व दिखाई पड़ते है। फ्रांस की तरह रूस की शासन व्यवस्था में राष्ट्रपति ही प्रधानमंत्री एवं मंत्रीमण्डल की नियुक्ति करता है। वर्तमान रूसी संविधान पूर्व सोवियत संविधान के विरूद्ध नागरिक स्वतन्त्रता,नागरिक गरिमा ,मुक्त अर्थव्यवस्था एवं बहुदलीय व्यवस्था को अपनाने वाला राष्ट्र है।

12 दिसम्बर 1992 को रूस का नया संविधान लागू हुआ। नये संविधान में उदार ,लोकतान्त्रिक ,गणतन्त्रवादी व्यवस्था को लागू किया गया। इस नये संविधान में विधायिका के दो सदन स्वीकार किये गये। उच्च सदन के रूप में संघीय परिषद तथा निम्न सदन के रूप में ड्यूमा को स्वीकार किया गया। लम्बे कम्युनिस्ट शासन के बाद रूस में

स्वतन्त्रता, विधि का शासन, संविधान की सर्वोच्चता एवं नागरिक अधिकारों को नये संविधान में स्थान दिया गया। रूस की विधायिका में ड्यूमा जहां जनता का प्रतिनिधित्व करने वाला सदन है जिसकी सदस्य संख्या 450 है। वहीं दूसरे सदन के रूप में संघीय परिषद है जो संघीय इकाइयों का प्रतिनिधित्व करता है। रूस का राष्ट्रपति ही सरकार के अध्यक्ष को नियुक्त कर ड्यूमा से अनुमोदन प्राप्त करता है। बगैर अनुमोदन के नियुक्ति अपूर्ण रहती है। यदि तीन बार ड्यूमा अस्वीकार करती है तो राष्ट्रपति ड्यूमा को भंग कर नये चुनाव कराता है। यह व्यवस्था राष्ट्रपति एवं ड्यूमा के मध्य संतुलन को दर्शाता है।

16.7 शब्दावली

1.ड्यूमाः- रूस की विधायिका का निम्न सदन जिसकी सदस्य संख्या 450 है। इसका चुनाव व्यस्क मताधिकार के द्वारा जनता करती है।

2.ग्लास्तनोस्तः- खुलापन, परादर्शिता, जनता की आवाज, संवैधानिक सुधारों पर बल।

3.बहुदलीय व्यवस्थाः- जहां पर संविधान द्वारा दो से अधिक दलों को मान्यता दी जाती है उसे बहुदलीय व्यवस्था कहते है।

16.8 अभ्यास के प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1:

1.12 दिसम्बर 1992 2. बहुदलीय 3. दो सदन 4. सत्य 5.सत्य 6.संघात्मक शासन

7.ड्यूमा 8. राष्ट्रपति 9.सत्य 10. सत्य

अभ्यास प्रश्न 2:

1. द्विसदनात्मक 2. ड्यूमा 3. संघीय परिषद 4. राष्ट्रपति 5. सत्य 6. सत्य 7. सत्य

अभ्यास प्रश्न 3:

1.बहुदलीय 2. सत्य 3.यूनाइटेड रशिया

16.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भगवान विष्णु, विद्या भूषण ,वर्ल्ड कान्स्टीट्यूसन,ए कम्परेटिव स्टडी,र्स्टलिंग पब्लिसर्श प्रा0लि0दिल्ली।

2. मेनार्ड,सरजान,रसिया इन फ्लक्स,पेप्न।

3. मुनरो,दि गर्वनमेंट ऑफ यूरोप।

16.10 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. रूस का संविधान

16.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. रूस में ड्यूमा का गठन कैसे होता है, उसकी शक्तियों की व्याख्या कीजिये।
2. रूस के राष्ट्रपति का निर्वाचन तथा उसके अधिकारों के व्याख्या कीजिये।
3. रूस के संविधान में विधायिका एवं कार्यपालिका के संबंधों पर एक निबन्ध लिखिये।
4. रूस की दलीय व्यवस्था पर निबंध लिखिए।